यह गली बिकाऊ नहीं

यह गली बिकाऊ नहीं

ना. पार्थसारथी

உலகளாவிய பொதுக் கள உரிமம் (CC0 1.0)

இது சட்ட ஏற்புடைய உரிமத்தின் சுருக்கம் மட்டுமே. முழு உரையை https://creativecommons.org/publicdomain/zero/1.0/legalcode என்ற முகவரியில் காணலாம்.

பதிப்புரிமை அற்றது

இந்த ஆக்கத்துடன் தொடர்புடையவர்கள், உலகளாவிய பொதுப் பயன்பாட்டுக்கு என பதிப்புரிமைச் சட்டத்துக்கு உட்பட்டு, தங்கள் அனைத்துப் பதிப்புரிமைகளையும் விடுவித்துள்ளனர்.

நீங்கள் இவ்வாக்கத்தைப் படியெடுக்கலாம்; மேம்படுத்தலாம்; பகிரலாம்; வேறு கலை வடிவமாக மாற்றலாம்; வணிகப் பயன்களும் அடையலாம். இவற்றுக்கு நீங்கள் ஒப்புதல் ஏதும் கோரத் தேவையில்லை.

✸✸✸

இது, உலகத் தமிழ் விக்கியூடகச் சமூகமும் (https://ta.wikisource.org), தமிழ் இணையக் கல்விக் கழகமும் (http://tamilvu.org) இணைந்த கூட்டுமுயற்சியில், பதிவேற்றிய நூல்களில் ஒன்று. இக்கூட்டுமுயற்சியைப் பற்றி, https://ta.wikisource.org/s/4kx என்ற முகவரியில் விரிவாகக் காணலாம்.

Universal (CC0 1.0) Public Domain Dedication

This is a human-readable summary of the legal code found at https://creativecommons.org/publicdomain/zero/1.0/legalcode

No Copyright

The person who associated a work with this deed has **dedicated** the work to the public domain by waiving all of his or her rights to the work worldwide under copyright law, including all related and neighboring rights, to the extent allowed by law.

You can copy, modify, distribute and perform the work, even for commercial purposes, all without asking permission.

✸✸✸

This book is uploaded as part of the collaboration between Global Tamil Wikimedia Community (https://ta.wikisource.org) and Tamil Virtual Academy (http://tamilvu.org). More details about this collaboration can be found at https://ta.wikisource.org/s/4kx.

यह गली बिकाऊ नहीं

यह गली बिकाऊ नहीं

(अकादेमी पुरस्कार-प्राप्त तमिल उपन्यास)

लेखक

ना० पार्थसारथी

अनुवादक

रा० वीलिनाथन

साहित्य अकादेमी

Yeh Gali Bikau Nahin : Hindi translation by R. Veezhinathan of Naa. Parthasarthy's Akademi award winning Tamil novel *Samudaya Veethi*. Sahitya Akademi, New Delh (1985), Rs. 20.

© साहित्य अकादेमी

प्रथम संस्करण : 1985

साहित्य अकादेमी

प्रधान कार्यालय
रवीन्द्र भवन, 35, फ़ीरोज़शाह मार्ग, नई दिल्ली 110001

क्षेत्रीय कार्यालय
ब्लाक V-बी, रवीन्द्र सरोवर स्टेडियम, कलकत्ता 700029
29, एल्डाम्स रोड (द्वितीय मंज़िल), तेनामपेट, मद्रास 600018
172, मुम्बई मराठी ग्रन्थ संग्रहालय मार्ग, दादर, बम्बई 400014

मूल्य
बीस रुपये

मुद्रक
संजय प्रिंटर्स,
दिल्ली 110032

एक

मद्रास आने पर उसके जीवन में परिवर्तन अवश्यंभावी हो गया था। कंदस्वामी वाद्यार की 'गानामृत नटन विनोद नाटक सभा' के लिए गीत और संवाद लिखते हुए या समय-समय पर मंच पर पात्राभिनय करते हुए उसके जीवन में न तो इतनी गति थी और न ही प्रकाश। मदुरै और मद्रास के जीवन में जो इतना उतार-चढ़ाव है, इसका क्या कारण है? कारण की तह में पहुँचने पर ऐसा लगता है कि अधिक प्रकाश वाले स्थान में छोटा जीवन भी वृहदाकार दीखता है और कम प्रकाश वाले स्थान में बड़ा जीवन भी क्षुद्र और धुँधला हो जाता है।

क्या प्रकाश मात्र जीवन है?—इस प्रश्न का कोई प्रयोजन नहीं है। मद्रास में सूर्य का प्रकाश मात्र जीवन-यापन के लिए पर्याप्त नहीं है। मनुष्य को स्वयं प्रकाश फैलाना पड़ता है और अपने चारों ओर प्रकाश-पुंज बुनना पड़ता है। अपने कृत्रिम प्रकाश के सामने सूर्य के प्रकाश को फीका भी बनाना पड़ता है।

मदुरै कंदस्वामी वाद्यार के गानामृत नटन विनोद नाटक सभा में रहते हुए उसका पूरा नाम मुत्तु कुमार स्वामी पावलर था। नाटक सभा के टूटने पर अकाल-पीड़ितों की तरह मद्रास के कला जगत् की शरण लेनी पड़ी तो उसे अपने जीवन की सुविधाओं में ही नहीं, अपने नाम में भी काट-छाँट करनी पड़ी। सचमुच, अपने बड़े नाम को काटकर छोटा करना पड़ा।

'मुत्तुकुमरन्'—वह संक्षिप्त नाम उसे और उसके साथियों को उपयुक्त लगा। चेत्तूर और शिवगिरि जैसे ज़मींदारों की शरण में जीने वाले उसके पूर्वजों को अपने 'अकट विकट चक्र चंड प्रचंड आदि केशव पावलर' जैसे लंबे नामों को छोड़ने या छोटा करने में, हो सकता है कि संकोच हुआ हो। लेकिन वह इस सदी में उपस्थित था इसलिए वैसा नहीं कर सका। बायूस कंपनी के बंद होने पर दस महीने तक पाठ्य पुस्तकें तैयार करने वाली एक कंपनी में प्रूफ़ रीडर का काम करता रहा। उससे तंग आकर नाटक प्रसूत सिने-संसार में प्रवेश पाने के विचार से मद्रास को चल पड़ा।

मदुरै से मद्रास को रवाना होते समय उसके साथ कुछ सुविधाएँ भी थीं और कुछ असुविधाएँ भी। असुविधाएँ निम्न प्रकार थीं—

—मद्रास के लिए वह नया था। चापलूसी करने की आदत नहीं थी। उसके

पास किसी के नाम न कोई परिचय-पत्र था और न कोई सिफ़ारिशी चिट्ठी। हाथ की कुल पूँजी थी, सिर्फ सैंतालीस रुपये। कला के जगत् में अत्यंत आवश्यक समझी जाने वाली योग्यता भी उसमें नहीं थी। और वह किसी दल विशेष का सदस्य या पक्षपाती भी नहीं था।

सुविधाएँ भी थीं—

वह अभी विवाह-बंधन में नहीं बँधा था। इसका यह मतलब नहीं कि उसे शादी या लड़की से नफ़रत थी। असली बात यह थी कि उन दिनों नाटक कंपनी में काम करने वालों का मान-सम्मान करने या लड़की ब्याहने को कोई तैयार नहीं था। कंघी किये हुए काले घुँघराले बाल, होंठों में सदाबहार मुस्कान, सुन्दर नाक-नक़्श, कद-काठी का भरा पूरा—उसे कोई एक बार देख ले तो बार-बार देखने को जी करे और सुमधुर कंठ—सब कुछ था।

एळुंबूर रेलवे स्टेशन में उसके उतरते ही मूसलाधार वर्षा होने लगी। इसका कोई यह ग़लत हिसाब न लगाए कि दक्षिण से आने वाले कवि के स्वागत में आकाश अपनी भूमिका निभा रहा है। यह, दिसंबर महीने का पिछला पखवारा था। हर साल की तरह प्रकृति अपना नियम निभा रही थी। दिसंबर में ही क्यों, किसी भी महीने में मद्रास के लिए ऐसी बारिश की कोई ज़रूरत नहीं थी।

ऐसी वर्षा में, मद्रास में कोई चीज़ बिकती नहीं। सिनेमा-थियेटर में भीड़ कम हो जाती है। झोंपड़-पट्टियाँ पानी में डूब जाती हैं। सुन्दर लड़कियों को डरते-डरते सड़कों पर पाँव रखना पड़ता है कि चमकदार साड़ियों में कहीं कीचड़ न उछल जाये। पान की दूकानों से लेकर साड़ियों की दूकानों तक व्यापार ठप्प हो जाता है। विस्मृति में छतरियाँ खो जाती हैं। अध्यापकों और सरकारी नुमाइन्दों के जूते फट जाते हैं। टैक्सी वाले कहीं भी जाने को इनकार करते हैं। इस तरह पानी से डरने वाले मद्रास शहर के लिए बारिश की क्या ज़रूरत है भला!

लेकिन मुत्तुकुमरन् को पानी में नहाने वाला ऐसा मद्रास बड़ा सुन्दर लगा। मद्रास नगरी उसकी कल्पना में ऐसी उभर आयी, मानो कोई सुन्दरी नहाने के बाद भीगे कपड़ों में लजाती खड़ी हो। धुआँधार मेघों के आच्छादन में इमारतें, सड़कें और पेड़ धुँधले-से नज़र आये।

मुत्तुकुमरन् पानी में अधिक भीगे बिना, एळुंबूर रेलवे स्टेशन के ठीक सामने वाली एक सराय में टिक गया और वहीं अपने ठहरने की व्यवस्था की।

एक लड़का, जो पहले उसके साथ 'नाटक सभा' में स्त्री की भूमिका करता था, वह मद्रास में अब मशहूर सिने-अभिनेता हो गया था। अपने 'गोपालस्वामी नाम को छोटा करके उसने 'गोपाल' रख लिया था। उसने नहा-धोकर कपड़े बदले और कॉफ़ी पीने के बाद सोचा कि उसे फ़ोन करे।

उस लॉज में सभी कमरों में फ़ोन की सुविधा नहीं थी। सिर्फ़ रिसेप्शन में

फ़ोन था। अपने कामों से निपटकर जब वह रिसेप्शन में आया, तब घड़ी ग्यारह बजा रही थी।

टेलिफ़ोन डाइरेक्टरी में उसने अभिनेता गोपाल का नंबर ढूँढ़ा। पर वह मिल ही नहीं रहा था। आखिर लाचार होकर रिसेप्शन में बैठे व्यक्ति से गोपाल का नंबर पूछा।

उसके तमिळ में पूछे गये प्रश्न का उन्होंने अंग्रेज़ी में उत्तर दिया। मद्रास में उसे यह एक अजीब तजुर्बा यह हुआ कि तमिळ में प्रश्न करने वाले अंग्रेज़ी में उत्तर पा रहे हैं और अंग्रेज़ी में प्रश्न करने वालों को तमिळ के सिवा दूसरी किसी भाषा में उत्तर देने वाले नहीं मिल रहे हैं। उनके उत्तर से उसे इतना ज्ञात हुआ कि गोपाल का नाम टेलिफ़ोन डाइरेक्टरी में 'लिस्ट' नहीं किया गया होगा। कुछ क्षणों के बाद टेलिफ़ोन पर ही पूछ-ताछ कर उन्होंने गोपाल का नंबर बताया। मद्रास में क़दम रखते-न-रखते मुत्तुकुमरन् ने यह महसूस किया कि हर पल उसे अपने को बदलना पड़ रहा है। उसे तो समय को अपने मुताबिक बदलने की आदत पड़ गयी थी। यहाँ तो अपने को समय के अनुसार बदलना पड़ रहा है। अपनी आदत से उबर पाना उसे ज़रा कठिन लग रहा था। उसने जिसका नाम लेकर नंबर पूछा था, उसके नाम ने रिसेप्शनिस्ट पर जादू-सा कर दिया और मुत्तुकुमरन् के प्रति भी तनिक आदर भाव दिखाने को बाध्य कर दिया।

फ़ोन पर अभिनेता गोपाल नहीं मिला। पर इतना ज्ञात हुआ कि वह किसी शूटिंग के लिए बंगलोर गया है। दोपहर को तीन बजे की हवाई उड़ान से लौट रहा है। मुत्तुकुमरन् की छुटपन की दोस्ती की बात अनमने ढंग से सुनने के बाद उस छोर से उत्तर आया कि साढ़े चार बजे आइये, मुलाकात हो सकती है।

उसी क्षण उसे उस उत्तर के अनुसार अपने को बदलना पड़ा। उस उत्तर को अपने अनुरूप बदले तो कैसे बदले ? वह जाये तो कहाँ जाए ? वर्षा भी रुकने का नाम नहीं ले रही थी। दोपहर के भोजन के बाद उसने अच्छी तरह सोने का निश्चय किया। रात की रेल-यात्रा में उसने जो नींद खोयी थी, उसे पुनः प्राप्त करने की तीव्र इच्छा हुई। लेकिन इस नये शहर में, नये कमरे में जल्दी से नींद आयेगी क्या ? उसने बक्सा खोलकर किताबें निकालीं।

दो निघंटु, एक छंद शास्त्र, चार-पाँच कविता की किताबें—ये ही उसके पेशे की पूँजी थीं। मुत्तुकुमरन् इधर किताब के पन्ने उलट रहा था कि उधर सामने के कमरे से एक युवती किवाड़ पर ताला लगाकर कहीं बाहर जाने को तैयार हो रही थी। मुत्तुकुमरन् ने उसके पृष्ठ भाग का सौंदर्य देखा तो ठगा-सा रह गया। पतली सुनहरी कमर, बनी-सँवरी पीठ, नीली साड़ी—सब एक से बढ़कर एक थीं।

"उमड़ घुमड़कर आयी बदरिया
कैसी चमचम चमकी बिजुरिया !

आयी सज-धज के रे जोगिनिया ।
सुन्दर रूप लगाये अगिनिया ।"

'कनक लता-सी कामिनी, काहे को कटि छीन ?' पूछने वाले आलम कवि बनने की कोशिश में मुत्तुकुमरन् निघंटु उलटने-पलटने लगा। प्रास-अनुप्रास तो मिल गये। नाटक कंपनी में काम करते हुए जब चाहो, जैसा चाहो, निघंटु की मदद से वह अनायास फटाफट गीत रच लेता था। पर आज न जाने क्यों, उसका मन उचाट-सा हुआ जा रहा था। बार-बार उसके मन में यही विचार सिर उठा रहा था कि मैं जीविका की खोज में मद्रास आ तो गया, पर जीवन चले कैसे ? इसलिए गीत रचने का उत्साह नहीं रहा।

लेकिन उस युवती की मनमोहिनी मूरत उसके लिए मीठी खुराक़ बन गयी और वह उसके रसास्वादन में लगा रहा। पर बीच-बीच में उसका मन मदुरै और दिण्डुक्कळ की ओर निकल भागा। इसलिए कि वहाँ ऐसी सुघड़ लड़कियाँ उसके देखने में नहीं आयीं। इसकी क्या वजह हो सकती है ? वजह ढूँढ़ते हुए उसके मन में यह विचार आया कि खान-पान के बारे में शहर की लड़कियाँ जितनी सतर्क रहती हैं, उतनी देहाती लड़कियाँ नहीं। नगर की लड़कियाँ बन-ठनकर अपने को दर्शाने और दूसरों को आकर्षित करने में जितनी रुचि दिखाती हैं, वह देहाती लड़कियों में या तो नहीं है या वैसी सुविधा नहीं है। मद्रास में एक माँ को भी अपने को चार-पाँच बच्चों की माँ कहने के गौरव से बढ़कर अपने को एक युवती जताने का ध्यान ही अधिक है। देहात की वह दशा नहीं है। एक स्त्री को माँ मानते हुए मन में विकार उत्पन्न नहीं होता। युवती मानते हुए तो मन में विकार की संभावना ही अधिक है। गर्भिणी स्त्रियों को जहाँ भी देखें, जिस सूरत में भी देखें, काम-भावना कभी सिर नहीं उठाती।

इस तरह की ख्याम-खयाली और दिन के भोजन के बाद सोने का उपक्रम करते हुए भी वह सो नहीं सका। इसलिए लॉज के पास के म्यूज़ियम, आर्ट गैलरी, केनिमारा पुस्तकालय आदि देख आने के विचार से वह निकल पड़ा। वर्षा अब ज़रा थमकर बूँदा-बूँदी का रूप धारण कर चुकी थी। पेन्थियन रोड पर चलते हुए उसे कुछेक गर्भिणी स्त्रियाँ दीख पड़ीं तो उसे दोपहर का वह विचार ताज़ा हो आया। उनमें से एकाध का चेहरा देखने पर उसे लगा कि मद्रास भोग-भूमि है। कुछेक के चेहरे तो यह बता रहे थे, मद्रास यातना-भूमि है। कुछ स्थान सुन्दर और कृत्रिम से दीख पड़े तो कुछ स्थान भद्दे, घृणित और बेबसी और तकलीफ़ से भरे। इसलिए वह मद्रास के सच्चे स्वरूप या उसके सामान्य चरित्र का पता नहीं पा सका।

म्यूज़ियम थियेटर की गोलाकार छोटी सुन्दर इमारत और आर्ट-गैलरी की मुग़लकालीन शोभा देखकर वह दंग रह गया। म्यूज़ियम को देखने में उसे पूरा एक

घंटा लगा। मद्रास में क़दम रखते ही उसे जिन समस्याओं का सामना करना पड़ा, पग-पग पर उन्हीं से उलझना पड़ा। उसके हर प्रश्न का उत्तर अंग्रेज़ी ही में मिला। तमिळ में उत्तर देने वाले तो रिक्शेवाले और टैक्सी ड्राइवर ही थे। उनकी तमिळ भी उसकी समझ में जल्दी नहीं आयी। मदुरै में बड़े-छोटे लड़कों के साथ भी आदरसूचक संबोधन ही सुनने को मिलता था। मद्रास में तो बड़े-बूढ़ों के साथ भी 'तू तू, मैं मैं' ही चलती थी। मुत्तुकुमरन् अंग्रेज़ी जानता ही नहीं था। और मद्रास की तमिळ तो विभिन्न भाषाओं की मिली-जुली खिचड़ी थी।

बारिश के कारण म्युज़ियम, पुस्तकालय या आर्ट-गैलरी में विशेष भीड़ नहीं थी। सब कुछ देखकर जब वह बाहर निकला तो फिर से पानी बरसना शुरू हो गया था। चूँकि टेलिफ़ोन डाइरेक्टरी पर गोपाल का पता नहीं था, होटल के रिसेप्शनिस्ट से पूछ-ताछ कर जो पता उसे मिला था, उसे ही एक छोटे-से कागज़ पर लिखकर अपनी जेब में रख लिया था। वह पुर्जा भी पानी में ज़रा भीग गया था। कुछ क्षण तक सोचता रहा कि इस बारिश में गोपाल के घर कैसे जाये? पास के व्यक्ति से समय पूछा तो उन्होंने बताया कि पौने चार बजे हैं। साढ़े चार बजे गोपाल के घर पर पहुँचना था। उसे लगा कि इसी घड़ी चल देना अच्छा होगा। यदि बस में जाये तो जगह के बारे में पूछकर उतरने में दिक्क़त होगी। हो सकता है, बस स्टैण्ड से गोपाल के घर तक पानी में भीगते हुए चलना पड़े। उसे इस बात का तो पता नहीं कि गोपाल का घर बस स्टैण्ड के निकट होगा या दूर।

काफ़ी सोच-विचार कर, वह इस नतीजे पर पहुँचा कि टैक्सी करके जाना ही अच्छा है। साथ ही, अपनी माली हालत को मद्दे नज़र रखते हुए उसे यह चिन्ता भी सवार हुई कि टैक्सी में जाना कहाँ तक उचित है? अगले क्षण उसे एक दूसरी चिन्ता भी सताने लगी कि अगर टैक्सी में नहीं पहुँच पाया तो वह आज गोपाल से मिल नहीं पाएगा। फिर तो अनेक असुविधाओं का सामना करना पड़ेगा। अतः चाहे कुछ भी हो, आज ही गोपाल से मिल लेना होगा।

इस निष्कर्ष पर पहुँचकर, वह टैक्सी पकड़ने के लिए पानी में भीगता हुआ पेन्थियन रोड के प्लेटफ़ार्म तक आया। बारिश की वज़ह से खाली टैक्सियाँ दिखायी ही नहीं दे रही थीं। दस मिनट की प्रतीक्षा के बाद, एक टैक्सी मिली। उसमें सवार होते ही 'मीटर' लगाते हुए टैक्सी ड्राइवर ने पूछा, "किधर?"

मुत्तुकुमरन् ने जेब का कागज़ निकालकर देखा और बोला, "गोपाल, बोग रोड, मांबळम।"

टैक्सी की रफ़्तार तेज़ करते हुए ड्राइवर ने उत्सुकता से पूछा, "कौन-से गोपाल? सिने स्टार? क्या आप उन्हें जानते हैं?"

'हाँ' में जवाब देकर वह फिर कहीं रुक नहीं पाया। बचपन में ही वायुस कंपनी में सम्मिलित होने से लेकर गोपाल के मद्रास में आकर सिने-अभिनेता बनने

की सारी कहानी छेड़ दी। उसकी इन लंबी बातों से ड्राइवर को यह अनुमान हो गया कि यह आदमी सिर्फ़ बाहर का ही नहीं, पूरी तरह गँवार भी है।

एक खूबसूरत से बग़ीचे के बीच स्थित गोपाल के बँगले के फाटक पर पहुँचते ही गोरखे ने टैक्सी रोक दी। वह गोरखे से क्या और कैसे कहे कि पानी में भीगे बगैर फ्लैट के अंदर जा सके—मुत्तुकुमरन् इस बात पर विचार कर ही रहा था कि टैक्सी ड्राइवर ने आगे का काम सँभाल दिया।

"तुम्हारे मालिक के लंगोटियाँ यार हैं ये···" ड्राइवर के मुख से इतना सुनना था कि 'बड़ा साहब···बचपन···दोस्त ?' पूछते हुए गोरखे ने तन कर एक लम्बा-सा सलाम ठोंका और टैक्सी को अन्दर जाने दिया। अपने को अधिक बुद्धिमान समझने वाले लोग जिस काम को करने में माथा-पच्ची के सिवा कुछ नहीं कर पाते, उसे कम अक्ल होने पर भी समयोचित ज्ञान रखनेवाले बड़ी आसानी से कर जाते हैं। एक टैक्सी ड्राइवर ने इस बात का नमूना पेश कर दिया तो मुत्तुकुमरन् मन-ही-मन उसे दाद देने लगा।

टैक्सी 'पोर्टिको' में जा रुकी तो मुत्तुकुमरन् 'मीटर' के पैसे देकर और बांकी के चिल्लर लेकर बड़े सोच-संकोच के साथ सीढ़ियाँ चढ़ा। 'हाल' में प्रवेश करते ही, गोपाल की एक आदमकद तस्वीर ने उसका स्वागत किया। उसमें गोपाल शिकारी के भेष में एक मरे हुए शेर के सिर पर पैर रखे, हाथ में बंदूक ताने खड़ा था।

बनियान और लुंगी पहने अधेड़ उम्र का एक आदमी अंदर से आया और मुत्तुकुमरन् से पूछा, "क्या काम है ? किससे मिलना है ?" मुत्तुकुमरन् से परिचय सुनकर उसे रिसेप्शन हाल में ले गया और एक आसन पर बिठाकर चला गया। उस 'हाल' में कई सुन्दर लड़कियाँ बैठी हुई थीं, जो होटल में दिखी लड़की से भी अधिक सुन्दर लगीं। उसने देखा कि वे सब इसे टकटकी लगाये देख रही हैं। उस कमरे पर दाखिल होने पर मुत्तुकुमरन् को लगा कि वह घुप्प अँधेरे से चकाचौंध पैदा करनेवाले प्रकाश में आ गया है। वहाँ ऐसे कुछ नवयुवक भी थे जो शक्ल-सूरत में अभिनेता लगते थे। थोड़ी देर उनके बीच हो रही बातों पर ध्यान देने पर उसे पता चला कि गोपाल स्वयं एक नाटक कंपनी शुरू करने वाला है। उसमें काम करने के लिए अभिनेता-अभिनेत्रियों के चुनाव के लिए उस दिन शाम को पाँच बजे 'इन्टरव्यू' होनेवाली है। और वह 'इन्टरव्यू स्वयं गोपाल लेगा और चुनेगा।

वहाँ बैठी लड़कियों पर प्रकट या अप्रकट रूप से बार-बार नज़र फेरने की अपनी लालसा को वह दबा नहीं पाया। हो सकता है कि उनकी आँखें भी उसी की तरह तरस रही हों। वहाँ बैठे हुए युवकों को देखने पर उसे इस बात का पक्का विश्वास हो गया कि वह इन सबमें ज़्यादा खूबसूरत है। असल में उसका यह गर्व स्वाभाविक भी था। पहले तो वह साधारण ढंग से दुबका हुआ था। अब पैर पर पैर रखकर आराम से बैठ गया। ऊँची आवाज़ में बोलती लड़कियाँ उसे देखते ही दबी आवाज़ में

आराम बोलने लग गयीं। कुछ तो उसके सामने अपने को शर्मीली जताने के लिए शरमाने का अभिनय करने लगीं। 'अंदर से पकने पर फल बाहर से रंग पकड़ते हैं। शायद लड़कियों की भी यही प्रकृति है।'—इस तरह मुत्तुकुमरन् की कल्पना सुगबुगायी उसके आने के बाद यद्यपि उनकी खिलखिलाहट थम गयी, पर होंठों में मुस्कराहटें तैरती रहीं और बातें जारी रहीं। यह देखकर मुत्तुकुमरन् को यों लगा कि वे उसके लिए आधी हँसी सुरक्षित रखे हुई हैं।

उसमें से कुछेक के होंठ सुन्दर थे; कुछेक के नेत्र सुन्दर थे। कुछेक की उंगलियाँ मुलायम लगीं। कुछेक नाक-नक्श से अच्छी थीं। कुछेक की सुन्दरता ऐसे विभाजन की सीमा में ही नहीं आयीं।

लड़कियाँ, जिससे अपनी मुस्कान, दृष्टि या बात आदि छिपाना चाहती हैं, उसे विशेष रूप से जताने के लिए भी कोई चीज़ होती है—दुराव-छुपाव का यही रहस्यार्थ होता है।

लुंगी-बनियान वाला रिसेप्शन हाल में फिर आया तो सबका ध्यान उसकी ओर गया।

दो

"बारिश की वजह से बंगलोर का प्लेन आधा घंटा लेट है। इसलिए मालिक के आने में आधा घंटा और लगेगा!"

सबके चेहरे जैसे उस विलम्ब-सूचना से खिल गये।

उसके जाने के थोड़ी देर बाद लुंगी-बनियान पहने दूसरा व्यक्ति आया, जिसके कंधे पर मैला-सा अंगोछा था। उसके हाथ में एक बड़ा ट्रे था, जिसमें कॉफ़ी के दस-बारह गरमागरम प्याले थे। सबको कॉफ़ी मिली।

कॉफ़ी पीने के बाद एक युवती हिम्मत करके उठी और मुत्तुकुमरन् की बगल में आ बैठी। चंदन की खुशबू से उसकी देह महक रही थी। उसने पूछा, "क्या आप भी 'ट्रूप' में सम्मिलित होने के लिए आये हैं?"

मुत्तुकुमरन् उसकी स्वर-माधुरी में इतना खो गया था कि प्रश्न पर ध्यान ही नहीं दिया उसने पूछा, "आपने क्या कहा?"

उसने हँसते हुए अपना सवाल दुहराया।

"गोपाल को मैं अच्छी तरह से जानता हूँ। तब वह उन दिनों मेरे साथ बायस्कोप कंपनी में स्त्री की भूमिका किया करता था। मैं तो बस यों ही उससे मिलने चला आया!"

उसने देखा कि हाल में बैठे हुए सभी लोगों का ध्यान उन्हीं दोनों की तरफ़ लगा हुआ है। उसे यह भी लगा कि सभी लड़कियाँ उसके पास बैठी हुई लड़की को ईर्ष्या की दृष्टि से देख रही हैं।

पास बैठी हुई लड़की ने पूछा, "क्या मैं आपका नाम जान सकती हूँ ?"

"मुत्तुकुमरन् !"

"बड़ा प्यारा नाम है !"

"तो 'किसी से प्यार हो गया' के बदले आप 'नाम से प्यार हो गया' गा सकती हैं ?"

उसका चेहरा लाल हो गया। होंठों में मुस्कान लुका-छिपी-सी खेलने लगी।

"मेरा मतलब है···"

"मेरा भी मतलब है। क्या मैं आपका नाम जान सकता हूँ ?"

"माधवी !"

"आपका नाम भी तो बड़ा प्यारा है।"

माधवी के होठों में फिर से वही मुसकान खेल गयीं।

पोर्टिको में एक कार के बड़ी तेज़ी से आकर रुकने की आवाज़ हुई। दरवाज़े के खुलने और बंद होने की आवाज़ भी आयी।

वह उससे विदा लेकर अपनी पुरानी जगह पर चली गयी। हाल में असाधारण-सी चुप्पी फैल गयी। मुत्तुकुमरन् को यह समझते देर नहीं लगी कि गोपाल आ गया है।

× × ×

हवाई अड्डे से आने वाले गोपाल को अंदर जाकर हाथ-मुँह धोने और कपड़े बदलने में दस मिनट लग गये। उन दस मिनटों में हाल में बैठा हुआ कोई किसी से कुछ नहीं बोला। सबकी आँखें एक ही तरफ़ लगी हुई थीं। सबने इस बात का ख्याल रखा था कि किस मुद्रा में गोपाल का ध्यान आकर्षित किया जा सकता है। एकदम मौन छाया हुआ था। तो भी हरेक व्यक्ति आनेवाले पल के अनुरूप अपने तन-मन को बदलने का उपक्रम कर रहा था। 'क्या बोलें, कैसे बोलें, कैसे हँसे, कैसे हाथ जोड़ें ?' हर कोई बारीकी से मन ही मन इस बात का भी रिहर्सल कर रहा था। भरे-पूरे दरबार में राजा के प्रवेश के इंतज़ार में जैसी शांति विराजेगी, वह 'हाल' उसका नमूना पेश कर रहा था।

'हाल' का यह हाल देखकर मुत्तुकुमरन् के मन में यह द्वंद्व मचा कि गोपाल जैसे मित्र से मिलने के लिए क्या मुझे भी ऐसी बनावटी मुद्रा ओढ़नी पड़ेगी ? नहीं, मित्र-मिलन में ऐसा आदर-भाव दर्शाने या उतावली दिखाने की कोई ज़रूरत नहीं।

वह इस नतीजे पर पहुँचा कि पहले मैं उसका व्यवहार देखूँगा। बाद को उसके

मुताबिक अपना तरीक़ा अख्तियार करूँगा।

नाट्य कंपनी में काम करते हुए जिन दिनों नाटक नहीं होते थे, दोनों—वह और गोपाल—रात को सिनेमा देखने चले जाते थे। आधी रात के बाद लौटकर एक ही चटाई पर सोते थे।

उन पुरानी रातों की याद आते ही, मुत्तुकुमरन् को यह शंका हुई कि क्या गोपाल अभी भी उतना ही घनिष्ठ, आत्मीय और मिलनसार होगा!

पैसा मनुष्य और मनुष्य के बीच स्तर-भेद पैदा कर देता है। उसके साथ नाम-यश, रोब-दाब आदि मिल जाएँ तो यह खाई और बढ़ जाती है। यह भेद-भाव कुछ को शिखर पर चढ़ाता है और कुछ को गड्ढे में गिरा देता है। क्या शिखर पर खड़ा व्यक्ति गड्ढे में पड़े लोगों को कहीं बराबरी की दृष्टि से देखेगा?

भूकंप में समतल भूमि जैसे ऊँची हो जाती है और ऊँची भूमि नीचे दब जाती है, वैसे ही धन-दौलत का भूकंप आने पर कुछ चोटियाँ उग आती हैं। उन चोटियों की वजह से उनके आसपास की भूमि घाटियों में बदल जाती है। घाटियाँ बनायी नहीं जातीं। चोटियों के बनने पर, समतल भूमि भी घाटियों का-सा भ्रम पैदा करती हैं, बस!

चोटी और घाटी का स्वरूप चित्रण करते हुए उसका कवित्वसंपन्न स्वाभिमानी हृदय यह मानने को हिचका कि गोपाल चोटी पर है और वह घाटी में।

धान के खेत में जैसे घास सिर उठाती है, वैसे कवित्व से पूर्ण उर्वर मनोभूमि में गर्व का सिर उठाना स्वाभाविक है। गर्व के दो प्रकार होते हैं। सुरम्य और कुरम्य। कवि हृदय में उत्पन्न होनेवाला गर्व सुरम्य होता है—

गुलाब की लाली सुरम्य और आँखों को आराम देनेवाली होती हैं। कनेर की लाली तो आँखों में चुभती है। सुकवि का गर्व गुलाब की लाली के समान होता है और कवित्वशून्य का गर्व कनेर पुष्प का-सा होता है।

मुत्तुकुमरन् के हृदय में यही सुरम्य गर्व विराजमान था। इसलिए वह अपने मित्र गोपाल को अपने से भिन्न और अपने से बढ़कर ऊँचाई में रहनेवाला मानने को तैयार नहीं था। अपनी बड़ाई को भूलना या घटाना भी उसे स्वीकार नहीं था।

वहाँ का वातावरण—यानी वह 'हाल', उसका चमकता संगमरमर का फ़र्श, उस पर सुन्दर कालीन, करीने से लगे सोफ़े, उनपर सुन्दर परियों-सी बैठी युवतियाँ उनकी बहुरंगी वेश-भूषा और शरीर पर लगे इत्र की महक—यह सब मिलकर, उसके अंदर सोये हुए सुरम्य गर्व को उजागर करनेवाला ही सिद्ध हुआ। कली के अंदर संपुटित सुगंध की भाँति ढूँढे जाने पर भी न मिलनेवाली उसकी गर्व-माधुरी विद्यमान थी।

गोपाल अभी हाल में नहीं आया था। पर किसी भी क्षण आने की संभावना थी। मुत्तुकुमरन् के मन में रह-रहकर गोपाल के विषय में पुरानी स्मृतियाँ लहरा

रही थीं।

उन दिनों में, जब कभी कथानायक की भूमिका निभानेवाला गोपाल अपना पार्ट खेल नहीं पाता था, तब मुत्तुकुमरन् वह भूमिका स्वयं करता था। स्त्री के वेश में गोपाल कृत्रिम लज्जा दर्शाते हुए उसके सामने आ खड़ा होता था। उस गोपाल के साथ इस गोपाल की, जिसके आने की राह सारा हाल चुप बैठा तक रहा था, उसका मन काल्पनिक तुलना करने की कोशिश कर रहा था।

उन दिनों वेश में न होने पर भी वह लजाता-सकुचाता ही उसके सामने पेश आता था। यही नहीं, पति-परायणा पत्नी की भाँति आज्ञा पालन में भी कोई क़सर नहीं रखता था।

"अगर तुम सचमुच औरत होते तो इस मुत्तुकुमार वाद्यार ही से शादी कर सकते थे!" नाटक सभा के मालिक नायुडु 'ग्रीन रूम' में आकर कभी-कभी गोपाल की खिल्ली भी उड़ाते थे।

वह स्त्री की भूमिका में सुन्दरियों से सुन्दर दीखता था। बिना वेश के साधारण हालत में रहते हुए दोनों के बीच ऐसी ही नोंक-झोंक चलती थी—

"देवी! क्या आज रात को हम चल-चित्र देखने चलें?" मुत्तुकुमरन् पूछता।

"नाथ! जैसी आपकी इच्छा!" गोपाल उत्तर देता।

'अरे! उन सारी बातों को सोचने से अब क्या फ़ायदा? यह तो भूखे आदमी का, किसी पुरानी दावत की याद करने जैसा हुआ!' अंतर्मन ने मुत्तुकुमरन् को टोका।

किसी अजीब 'सेंट' की महक पहले ही गोपाल के आने की सूचना दे गयी और बाद में रेशमी कुरता और पाजामा पहने गोपाल आया। उपस्थित सभी लोगों पर उसकी सरसरी नज़र पड़ी। युवतियों ने लजाते हुए और मुस्कराते हुए हाथ जोड़े। युवकों ने प्रसन्नवदन होकर हाथ जोड़े। केवल मुत्तुकुमरन् ही ऐसा था, जो गंभीर मुद्रा में पैर पर पैर धरे बैठा रहा। गोपाल के हाथ जोड़ने के पहले, वह उठने या हाथ जोड़ने को तैयार नहीं था। गोपाल की नज़र उस पर पड़ी तो उसका चेहरा आश्चर्य से खिल उठा।

"कौन, मुत्तुकुमार वाद्यार? अरे, यह क्या? बिना किसी सूचना के आकर तुमने तो आश्चर्य में डाल दिया?"

मुत्तुकुमरन् की बाँछें खिल गयीं। उसे इस बात की खुशी हुई कि गोपाल के व्यवहार में कहीं कोई फ़र्क नहीं है।

"अच्छी तरह तो हो, गोपाल? सूरत-शकल बदल गयी! मोटे भी हो गये हो! अब तुम स्त्री की भूमिका करोगे तो औरत-जात की बड़ी फजीहत होगी।"

"आते न आते आपने ताना मारना शुरू कर दिया!"

"अच्छा तो फिर क्या कहूँ, अभिनेता सम्राट्?"

"छोडो यार ! इन लोगों को इन्टरव्यू के लिए बुलाया था। वह पूरा कर लूँ या कल आने को कहूँ ? जैसा तुम कहोगे, वैसा करूँगा।"

"अरे नहीं, ये लोग बड़ी देर से बैठे हैं। इनके काम से निबट लो। मुझे कोई जल्दी नहीं है ! " मुत्तुकुमरन् ने कहा।

"अच्छा, तुम कब आये और कहाँ ठहरे हो ?"

"हमारी बात बाद को होगी। पहले इन लोगों से मिल लो !"

मुत्तुकुमरन् की इस मेहरबानी का एहसान जताते हुए मछली की तरह आँखों वाली कई युवतियाँ इस तरह देखने लगीं मानो उसे निगल ही जाएँगी एक साथ सभी युवतियों को आकर्षित करने से उसका हृदय गर्व से और भी भर उठा।

नाटक मंडली के लिए अभिनेता-अभिनेत्रियों का चुनाव शुरू हुआ। मुत्तुकुमरन् ज़रा दूर से सोफ़े पर बैठकर 'इन्टरव्यू' का तमाशा देखने लगा। पाश्चात्य देशों की तरह यद्यपि गोपाल ने उनके वक्षस्थल, कटि प्रदेश और लंबाई-मोटाई की नाप नहीं ली; लेकिन अपनी लोलुप दृष्टि से इन्हें नाप रहा था। कुछ अति सुन्दर लड़कियों को विभिन्न कोणों में खड़ाकर गोपाल मज़े लूट रहा था, मानो किसी विशेष अभिनय के लिए उन्हें 'पोज़' देने के लिए कह रहा हो। वे लड़कियाँ भी बिना किसी आनाकानी के, उसकी आज्ञा का पालन कर रही थीं। मर्दों की इन्टरव्यू में कुछ अधिक समय नहीं लगा। कुछ सवाल-जवाब में मर्दों की इन्टरव्यू ख़त्म हो गयी। डाक से सूचना देने का आश्वासन देकर उसने सबको विदा किया। फिर मुत्तुकुमरन् के पास जाकर ऐसी मर्यादा से बैठा, जैसे कोई सुशीला पत्नी पति के पास जाकर बैठती हो।

"क्यों, गोपाल ! तुम सचमुच नाटक कंपनी चलाने वाले हो या इस बहाने इन लड़कियों के चेहरे-मोहरे देखने का ढोंग रच रहे हो ? कहीं इस बात का बदला तो नहीं ले रहे कि उन दिनों स्त्री का पार्ट करने के लिए लड़कियाँ तैयार नहीं होती थीं और उनका 'पार्ट' तुमको अदा करना पड़ता था !"

"तब का नखरा, अब भी ज्यों का त्यों तुम में मौजूद है गुरु···! अच्छा, अभी तक तुमने यह नहीं बताया कि तुम कहाँ ठहरे हो ?"

मुत्तुकुमरन् ने एळुंबूर के उस लॉज का नाम बताया, जिसमें वह ठहरा हुआ था।

"मैं अपने ड्राइवर को भेजकर, लॉज का हिसाब चुकता कर तुम्हारा बोरिया-बिस्तर यहीं लाने को कहता हूँ। यहाँ एक 'आउट हाउस' है। वहाँ ठहर सकोगे न ?"

"हाँ, एक शर्त पर !"

"कौन-सी ?"

"नाथ ! जैसी आपकी इच्छा—यह वाक्य एक बार स्त्रियों की-सी

आवाज़ में कहो तो मैं मान जाऊँगा।"

गोपाल ने बोलने का उपक्रम किया। लेकिन कंठ ने साथ नहीं दिया तो बीच ही में रुक गया।

"अरे गोपाल ! तुम्हारी तो आवाज़ मुटिया गयी।"

"आवाज़ ही क्यों, मैं भी तो मोटा हो गया हूँ"—कहते हुए गोपाल ड्राइवर को बुलाने बाहर गया। उसका पीछा करते हुए मुत्तुकुमरन् बोला, "कमरे को अच्छी तरह से देखभाल कर मेरी सारी सम्पत्ति ले आने को कहना ! निघंटु, छंद-शास्त्र आदि वहीं पड़े हैं। कुछ छूट न पाये !"

"चिंता छोड़ो, यार ! सारी चीज़ें सही सलामत आ जाएँगी !"

"लॉज का भाड़ा भी तो देना है।"

"क्या तुम्हीं को देना है ? मैं चुका दूँगा तो क्या हर्ज़ है ?"

मुत्तुकुमरन् ने कोई उत्तर नहीं दिया। गोपाल का ड्राइवर छोटी कार लेकर एळुंबूर गया। उसे भेजकर गोपाल लौटा और मुत्तुकुमरन् से बड़े प्यार से बोला, "बहुत दिनों के बाद आये हो। हमें आज साथ-साथ डिनर खाना चाहिये। बोलो, रात को क्या-क्या बनाने को कहूँ ? तकल्लुफ़ मत करो !"

"दाल की चटनी, मेंथी का सांबार, आम का अचार···"

"छिः ! लगता है कि अगले जन्म में भी तुम वायस् कंपनी की उस चालू 'मेनु' को नहीं भूलोगे। नायुडु हमें ऐसा परहेज़ी खाना खिलाता रहा कि कहीं मनुष्य के स्वाभाविक गुण—प्रेम, शोक, वीरता आदि हममें उत्पन्न न हो जायें।"

"वह खाना खाने पर ही तो तुम नायुडु के खिलाफ़ आवाज़ उठा नहीं पाये कि हमें अच्छा खाना खिलाओ !"

"अच्छा, तो इसीलिए उसने हमें ऐसा खाना खिलाया था !"

"तो फिर किसलिए ? उसने इस बात का बड़ा ख्याल रखा कि उसका खाना खाकर उसके विरुद्ध झंडा उठाने की ताक़त हममें न आ जाए !"

"जो भी हो, उसका खाना खाकर ही तो हम जीते रहे। एक या दो दिन नहीं; बारह सालों से भी अधिक ! दाल की चटनी, मेंथी का सांबार, आम का अचार···"

उस तरह वहाँ बारह साल बिताने पर ही तो हम आज यहाँ इस स्थिति तक पहुँचे हैं !"

"सो तो ठीक है। मैं अभी उसे भूला नहीं हूँ ! अच्छी तरह याद है।"

गोपाल के मुँह से यह सुनते हुए मुत्तुकुमरन् ने उसके चेहरे का भाव पढ़ा। मुत्तुकुमरन् ने यह जानना चाहा कि उसकी आँखों में कैसी चमक झिलमिला रही है। कृतज्ञता और पुरानी स्मृतियों पर ही बात कितनी देर चल सकती है ? बात का सिलसिला आगे बढ़ाने के लिए कोई विशेष विषय न रह जाने के कारण दोनों के

बीच थोड़ी देर के लिए मौन छाया रहा।

उस मौन के बीच गोपाल उठकर अंदर गया और रसोई के लिए 'मेनु' बताकर आया।

'हॉल' के पास के कमरे में किसी ने रेडियो लगाया। 'मधुर गीत' कार्यक्रम के प्रारंभ के पहले यह सूचना प्रसारित हुई कि यह आकाशवाणी केंद्र के कलाकारों की प्रस्तुति है, मानो वे अनादि अनाम तत्व के अभिन्न अंग हैं; जिनका कोई अपना अस्तित्व नहीं है।

"जानते हो, यार ? हमारे बायस् कंपनी में **'कायात कानकम्'** (उन दिनों के नाटक का प्रसिद्ध गीत) गाकर जो कृष्णप्प भागवतर वाहवाही लूट रहे थे, वे अब आकाशवाणी केंद्र के कलाकार हो गये हैं।"

लगता है कि आकाशवाणी उन कलाकारों के लिए अब, 'कष्ट निवारण केंद्र' हो गयी है, जो कि किसी ज़माने में रियासतों, मठालयों और नाटक कंपनियों के आश्रय पर जीते थे।"

"मैं भी एक नाटक कंपनी शुरू करनेवाला हूँ। मुझ पर निर्भर रहनेवालों को खाना-कपड़ा देने के लिए कुछ-न-कुछ करना चाहिए न ?"

"अब भी जो 'इन्टरव्यू' हुई थी, उसी के लिए न ?"

"हाँ, इस ऐन मौक़े पर 'उस्ताद' का मद्रास आना बड़े भाग्य की बात है, मानो भगवान प्रसन्न होकर स्वयं भक्त के यहाँ पधारे हों !"

"सो तो ठीक है। लेकिन नाटक कंपनी का नाम क्या रख रहे हो ?"

"तुम्हीं कोई अच्छा-सा नाम सुझाओ न !"

"क्यों 'ऐया' को याने द्राविड़ कळकम् के संस्थापक पेरियार ई० वे० रामस्वामी नायकर को बुलाकर नामकरण नहीं करते ?"

"हाय ! वह तो हमारे बस की बात नहीं। बच्चे के नामकरण के लिए भी उन्होंने अपनी फ़ीस बढ़ा दी है।"

"भगवान का नाम आ सकता है न ?"

"जहाँ तक हो सके, विवेक (पहुत्तरिवु) की कसौटी पर खरा उतरे तो अच्छा रहे।"

"क्यों ? मद्रास में उसी 'लेबल' पर तुम्हारी ज़िन्दगी चलती है क्या ?"

"मज़ाक छोड़ो, यार !"

" 'पहुत्तरिवु चेम्मल' की उपाधि जो दी है !"

"यह बात छोड़ो, यार ! कोई अच्छा-सा नाम ढूँढ़ो।"

" 'गोपाल नाटक मंडली' नाम रख दो। आज के ज़माने में ईश-वन्दना नहीं चलती। क्योंकि हर कोई अपने को ही देवता मानने लग गया है। आईने में अपनी ही सूरत को हाथ जोड़ता है।"

"मेरे नाम पर 'गोपाल नाटक मंडली' नाम रखना मुझे मंजूर है। पर एक बात सेक्रेटरी से पूछनी पड़ेगी कि आयकर विभाग से कोई टंटा तो उठ खड़ा नहीं होगा। सच पूछो तो आयकर विभाग के उत्पातों से बचने के लिए ही मैं नाटक मंडली खोलने की बात सोच रहा हूँ। खोलने पर अगर यह लफड़ा घटने के बदले बढ़ जाए तो क्या फ़ायदा ?"

"फिर तो यह कहो कि किसी महान कला के पीछे इतनी कलाहीन या घटिया बातों पर भी सोच-विचार करना पड़ता है !"

"कला-वला की बात छोड़ो, यार ! मैं तो यह कहूँगा कि होम करते कहीं हाथ न जल जाये—इस बात का ख्याल करना ही बड़ी कला है !"

"अरे, गोपाल ! मैं तो अभी-अभी ये नयी-नयी बातें सुन ही रहा हूँ !"

करोड़पतियों और अभिनेताओं का सिरमौर हो जाने से गोपाल को मुत्तुकुमरन् की इतनी अंतरंग और लंगोटिया यारी खटकी। उसकी ज़बान से वह अपने प्रति आदरसूचक बातें सुनना चाहता था। पर उससे कहे तो कैसे कहे ? मुत्तुकुमरन् के गर्व, आत्माभिमान और हठ से वह परिचित था। इसलिए उसे हिम्मत नहीं हुई। मन-ही-मन कुढ़ने के सिवा वह और कुछ नहीं कर सका। मुत्तुकुमरन् के साथ स्त्री की भूमिका करते हुए 'नाथ ! जैसी आपकी इच्छा !' वाली स्थिति ही अब भी जारी रही। लाख कोशिश करने पर भी उस भ्रम से वह अपने को छुड़ा नहीं पाया। सामने पैर पर पैर रखे आत्माभिमान और कवि के स्वाभाविक दर्प के साथ गंभीरता से बैठे मुत्तुकुमरन् के सामने करोड़पति गोपाल रत्ती भर भी अपना रोब नहीं जमा पाया।

ड्राइवर ने आकर सूचना दी कि वह लॉज के कमरे को खाली करके लॉज से सामान ले लाया है।

"ले जाकर 'आउट हाउस' में रखो। छोकरे नायर से कहो कि 'आउट हाउस' के बाथरूम में तौलिया-साबुन आदि रखे और इनके आराम का सारा बंदोबस्त करे !"

ड्राइवर हामी भरकर चला तो गोपाल ने उसे फिर से बुलाया, मानो कोई बात याद आ गयी हो।

"सुनो ! 'आउट हाउस' में गरम पानी की कोई व्यवस्था नहीं हो तो 'होम नीड्स' को फ़ोन कर फ़ौरन एक 'गीज़र' लगाने को कहो !"

"अभी फ़ोन किये देता हूँ, सर !"

ड्राइवर के जाने के बाद गोपाल ने बात जारी रखी—

"उस्ताद ! अपने पहले नाटक के लिए तुम्हें ही कथा-संवाद, गीत आदि सब कुछ रचना होगा ?"

"मुझे ? क्या कह रहे हो यार ? मद्रास में तो कितने ही बड़े-बड़े मशहूर नाटक-

कार हैं। मुझे तो यहाँ कोई जानता तक नहीं। मेरे नाम से कुछ फ़ायदा या प्रचार नहीं होगा। ऐसी हालत में मुझसे लिखवाना चाहते हो ?"—गोपाल के मन की बात ताड़ने के लिए मुत्तुकुमरन् ने पूछा।

"वह ज़िम्मा मुझ पर छोड़ दो। तुम चाहे जो भी लिखो—नाम-धाम दिलाना मेरा काम है !"—गोपाल ने कहा।

"तो···? इसका भी कोई मतलब है ?" मुत्तुकुमरन् ने सन्देह के साथ पूछा।

तीन

"बस, तुम लिखो उस्ताद ! बाक़ी सब कुछ मैं देख लूँगा। 'अभिनेता सम्राट गोपाल द्वारा अभिनीत नवरस नाटक' एक लाइन का यह विज्ञापन काफ़ी है: 'हाउस फ़ुल' हो जायेगा। सिनेमा में जो नाम कमाया है, नाटक में उसी का इस्तेमाल करना चाहिए। यही आजकल की 'टेकनिक' है।

"याने कोई ऐरा-गैरा, नत्थू-खैरा भी लिखे तो भी तुम्हारे नाम से नाटक चमक उठेगा।" तुम यही कहना चाहते हो न ?

"और क्या ?"

"तो फिर मैं नहीं लिखूँगा !"

मुत्तुकुमरन् की आवाज में सख़्ती थी। उसके चेहरे से हँसी ग़ायब हो गयी।

"क्यों, क्या बात है ?"

"तुम कहते हो कि हद दर्ज़े की चीज़ को भी अपने 'लेबल' पर अच्छे दामों बेच सकते हो और मेरा कहना है कि मैं अपनी अच्छी चीज़ को भी 'सस्ते लेबल' पर नहीं बेचूँगा।"

यह सुनकर गोपाल भौंचक रह गया। मानो मुँह पर ज़ोर का तमाचा पड़ा हो। यही बात अगर किसी दूसरे ने कही होती तो उसके गाल पर थप्पड़ लगाकर वह 'गेट आउट' चिल्लाया होता। लेकिन मुत्तुकुमरन् के सामने वह आज्ञाकारिणी पत्नी की भाँति दब गया। थोड़ी देर तक वह तिलमिलाता रहा कि दोस्त को क्या जवाब दे ! न तो वह गुस्सा उतार सका और न कोई चिकनी-चुपड़ी बात ही कर पाया। उसके भाग्य से मुत्तुकुमरन् ही होंठों पर मुस्कान भरते हुए कहने लगा, "फ़िक्र न करो, गोपाल ! मैंने तुम्हारे अहंकार की थाह लेने के लिए ही ऐसी बातें कीं। मैं तुम्हारे लिए नाटक लिखूँगा। लेकिन वह तुम्हारे अभिनय से बढ़कर मेरी लेखनी का ही नाम रोशन करेगा।"

"उससे क्या ? तुम्हारी बड़ाई में मेरा भी तो हिस्सा होगा !"

"पहला नाटक-सामाजिक हो या ऐतिहासिक ?" मुत्तु ने बात बदली।

"ऐतिहासिक ही होगा। राजेन्द्र चोलन या सुन्दर पांडियन में कोई भी हो। पर हाँ, बीच-बीच में ऐसे चुटीले संवाद ज़रूर हों, जिन्हें सुनकर दर्शक तालियां पीटें। नाटक का राजा चाहे जो भी हो, उसके मुँह से कभी-कभी ऐसे संवाद बुलवाना चाहिए कि हमारे महाराज, कामराज, नारियों के मन मोहनेवाले रामचंद्रन, दाताओं के दाता करुणानिधि, युवकों के युवक पेरियार, भाइयों के भाई अण्णा···"

"वह नहीं होगा।"

"क्यों ? क्यों नहीं होगा ?"

"राजराजचोलन के ज़माने में तो ये सब नहीं थे। इसलिए।···"

"मैंने सोचा कि 'मास अपील' होगा !"

"मास अपील' के नाम पर ऊल-जुलूल लिखना मुझसे नहीं होगा।"

"तो क्या लिखोगे ? कैसे लिखोगे ?"

"मैं नाटक को नाटक की तरह ही लिखूँगा, बस !"

"वह लोकप्रिय कैसे होगा ?"

"नाटक की सफलता नाटक-लेखन और मंचन पर निर्भर है न कि बेहूदे संवादों पर !"

"जैसी आपकी इच्छा ! तुम ठहरे उस्ताद। इसलिए मेरी नहीं सुनोगे !"

"किस पात्र की कौन भूमिका निभायेगा ? कितने सीन होंगे ? कितने गाने होंगे —इन सबका ज़िम्मा मुझपर छोड़ दो। नाटक सफल नहीं हुआ तो मेरा नाम मुत्तुकुमरन् नहीं !"

"ठीक है···अब चलो, खाने को चलें।"

भोजन के बाद भी दोनों थोड़ी देर तक बातें करते रहे उसके बाद गोपाल ने अपनी अलमारी खोलकर, उसमें रखी रंग-बिरंगी बोतलों में से दो बोतलें और गिलास निकाल लीं।

"इसकी आदत पड़ गई उस्ताद ?"

"नाटककारों और संगीतकारों के सामने यह सवाल शोभा ही नहीं देता।"

"आओ, इधर बैठो" कहते हुए गोपाल ने मेज़ पर बोतल, गिलास और 'ओपनर' रखे। उसके बाद उनकी बातों की दिशा बदली। शाम की 'इन्टरव्यू' में आयी हुई लड़कियों पर वे खुलकर बड़ी स्वतंत्रता से विचार-विमर्श करने लगे। उधर बोतलें खाली होती जा रही थीं और इधर शालीनता भी रीतती चली जा रही थी। 'तनिपाडल तिरट्टु' जैसी पुरानी पुस्तकों से कुछ अश्लील कविताएँ सुनाकर मुत्तुकुमरन् भी श्लेष के सहारे उनकी भद्दी व्याख्या करने लग गया। समय बीतते पता न चला।

बायस कंपनी में काम करते हुए भी उनके बीच ऐसी कविताएँ और बातें हुआ करती थीं। लेकिन तब की और अब की बातों में बड़ा फ़र्क़ था। बायस कंपनी में न तो नशे-पानी की ऐसी व्यवस्था थी और न खुलकर बात करने की सहूलियत। लुक-छिपकर डरते-डरते बातें करनी होती थीं। बायस कंपनी ऐसी बंजर भूमि थी, जहाँ लड़कियों की भनक तक नहीं पड़ती थी। अब तो वह बात नहीं थी।

आधी रात के बाद, मुत्तुकुमरन् लड़खड़ाते पैरों 'आउट हाउस' की ओर बढ़ा तो एक नायर छोकरे ने उसे सहारा देकर बिस्तर पर ले जाकर लिटाया।

"मैं टेलिफ़ोन की 'की-बोर्ड' के पास सोऊँगा। ज़रूरत पड़े तो फ़ोन पर बुला लीजिएगा!" यह कहकर, बिस्तर के पास के 'फ़ोन एक्स्टेंशन' दिखाकर वह चला गया। मुत्तुकुमरन् को उसकी आवाज़ बड़ी धीमी सुनाई दी और टेलीफ़ोन भी धूँधला-सा दीख पड़ा। उसके अंग ऐसे शिथिल पड़ गये थे, मानो कहीं मार-पीट में चूर-चूर हो गये हों। आँखों में नींद भर आयी थी।

उसी समय टेलीफ़ोन की घंटी बजी। मानो सपने से उठकर उसने अँधेरे में कुछ टटोला। टेलिफ़ोन नहीं मिल रहा था। सिरहाने की 'स्विच' दबाकर बत्ती जलायी और टेलिफ़ोन का चोंगा उठाया। दूसरे छोर से एक नारी कंठ की सहमी-सहमी और शरमीली-सी आवाज़ आ रही थी—"हलो, मुझे पहचानते हैं आप?"

यद्यपि वह आवाज़ पहचानी-सी लगी तो भी उस आलम में वह ठीक-ठीक पहचान नहीं पाया। इसलिए वह उत्तर देते हुए हिचक रहा था।

नारी-कंठ ने बात जारी रखी—"···मैं···माधवी···इंटरव्यू के पहले आपसे बातें हुई थीं। याद है?"

"···हाँ···तुम···?"

नशे में उसने 'तुम' कह दिया तो क्या बुरा किया? एक हमउम्र युवती से 'आप' कहकर बात करे तो क्या इससे उसकी जवानी और दोस्ती की अवहेलना नहीं होती? अब तक पी हुई शराब को और भी तीखी करती हुई, उस लड़की की मधु-मधुर कंठ-ध्वनि उसके कानों में शहद उड़ेल रही थी!

"माफ़ कीजिये। आप···" अपने को होश में वापस लाते हुए अपने संबोधन में वह संशोधन करने लगा तो दूसरी ओर से उसकी प्यार भरी आवाज़ आयी, "जैसे आपने पहले बुलाया, वैसे ही बुलाइये। वही मुझे पसन्द है!"

उसकी नज़ाकत और बात करने के तौर-तरीक़े पर मुत्तुकुमरन् कुछ इस तरह खिल उठा मानो बैठे ही बैठे उसे बलात् नारी-आलिंगन का सुख मिल गया हो।

"इस घड़ी कहाँ से बोल रही हो? और तुम्हें यह कैसे पता चला कि मैं इस वक़्त इस 'आउट हाउस' में मिलूँगा!"

"वहाँ, गोपालजी के घर में टेलिफ़ोन पर जो लड़का है, उसे मैं जानती हूँ!"

"यह जानकर ही यदि इस बेवक़्त में कोई लड़की इस तरह फ़ोन पर बातें करे

तो लोग क्या समझेंगे ?"

"जो चाहें, समझें। चूँकि मैं बर्दाश्त नहीं कर सकी; इसीलिए आपको बुलाया ! इसमें कोई ग़लती है ?"

इस अंतिम वाक्य में, जो प्रश्न था, वह उसे गुड़-सा मीठा लगा। सुननेवाले को तो यह नशे के नशे से भी बढ़कर बड़ा नशा लगा। उसे लगा कि संसार में सबसे पहले मधु का स्रोत नारी-कंठ और अधरों से ही बहा होगा। ऐसी मधुमती माधवी से बात करने का सौभाग्य पाकर मुत्तुकुमरन् अपने को बड़ा धन्य समझने लगा। तनिक होश में आकर उसने सोचा कि इस तरह माधवी के फ़ोन करने का क्या कारण हो सकता है ? लेकिन कारण को पीछे ढकेलकर वही उसके अंतःपटल पर आ खड़ी हो गयी। एक क्षण के लिए उसके मन में यह संदेह-सा हुआ कि उसके फ़ोन करने के पीछे शायद यह आशय हो कि मुझसे दोस्ती बढ़ाकर मेरी सिफ़ारिश और मेहरबानी से गोपाल की नाटक मंडली में प्रमुख स्थान पाया जा सकता है। किन्तु अगले ही क्षण उसी के मन ने उस भ्रम को मिटाकर कहा कि बात वह नहीं, शायद उसके दिल में तुम्हें प्रवेश मिल गया है। उसके फ़ोन करने के पीछे इसी प्रेम-भावना का हाथ है।

उस रात को वह मीठे सपनों में खोया रहा। सोकर उठा तो लगा कि पौ कुछ पहले ही फट गयी है और सूरज ने बड़ी उतावली दिखा दी है। असल में 'बेड-कॉफ़ी' के साथ, नायर छोकरे के जगाने के बाद ही वह उठा था। कुल्ला करने के बाद जब उसने गरम कॉफ़ी पी तो मन में उत्साह और उल्लास भर गया 'आउट हाउस' के बरामदे पर आकर सामने के बगीचे पर नज़र दौड़ायी तो उसकी आँखों के सामने बड़ा ही मनोरम दृश्य उपस्थित था। ओस-कणों में नहायी हरी घास की फ़र्श झिलमिला रही थी। उस हरीतिमा में लाल गोटे की तरह गुलाब खिले थे। एक ओर पारिजात का पेड़ था, जिसके फूल हरी घास पर चौक पूर रहे थे। कहीं से रेडियो में 'नन्नु पालिम्ब' मोहन राग का गीत हवा में तिरता आ रहा था।

सामने का बगीचा, प्रातःकाल की खुनक और गीत की माधुर स्वर-लहरी—ये तीनों मिलकर मुत्तुकुमरन् को आह्लादित कर रहे थे। उस आह्लाद में उसे माधवी का स्मरण हो आया। पिछली रात को टेलिफ़ोन में बेवक्त गूँजती आवाज़ भी याद हो आयी।

कुछ लोगों के गाने पर ही संगीत की रचना होती है जबकि कुछ लोगों के बोलने पर भी संगीत बन जाता है। माधवी की बोली में वही जादू था। माधवी के कंठ में शायद कोयल बैठी थी। कोयल जैसे अंतराल दे-देकर कूकती है, वैसे ही वह बोल रही थी। मुत्तुकुमरन् को उसकी स्वर-माधुरी की तारीफ़ में एक गीत रचने की—कविता लिखने की इच्छा हुई।

"सुख बयार का, स्नेह मधु का,
जिसने पाया हो सुमधुर कंठ
उसकी वाणी में गीत घुला
जैसे मंच पर गीत का गान
मन में भी गूँजे वैसी तान
उससे भी सूक्ष्म है एक संगीत
जो अनहद नाद कहाता है;
कोई डूब के ही सुन पाता है।"

इस आशय का एक गीत रचकर उसने मन-ही-मन गुनगुनाया। कहीं वह छन्दो बद्ध था और कहीं शिथिल। फिर भी उसे इस बात का संतोष था कि यह उच्च आशय का था।

इस तरह मुत्तुकुमरन् बरामदे में खड़ा होकर बगीचे की सुषमा देख रहा था और माधवी की स्वर-माधुरी का रस ले रहा था कि गोपाल 'नाइट गाउन' में ही मुत्तुकुमरन् से मिलने 'आउट हाउस' में आ गया।

"अच्छी नींद तो आयी, यार ?"

"हाँ, बड़े मज़े की नींद सोया !"

"अच्छा, अब मैं तुमसे एक बात पूछने आया हूँ !"

"क्या ?"

"कल आयी हुई लड़कियों में से तुम किसे सबसे ज़्यादा पसन्द करते हो ?"

"क्यों, क्या मेरी शादी उससे कराना चाहते हो ?"

"नहीं ! मैं अपनी नाटक मंडली का उद्घाटन जल्दी से जल्दी करना चाहता हूँ। पहले नाटक का मंचन भी उसी समय कर देना है। उसके लिए 'सेलेक्शन' वगैरह जल्दी हो जाए तो अच्छा रहेगा न ?"

"हाँ, कर लो !"

"करने के पहले तुम्हारी भी सलाह चाहता हूँ !"

"इस विषय में मैं 'अभिनेता सम्राट' को सलाह क्या दूँ ?"

"यह कैसा मज़ाक है ?"

"मज़ाक नहीं, सच्ची बात है।"

"इन्टरव्यू के लिए जो दो युवक आये थे, मैंने उन दोनों को लेने का निश्चय कर लिया है। क्योंकि वे दोनों **संगीत नाटक अकादेमी** के सेक्रेटरी चक्रपाणि की सिफ़ारिश लेकर आये थे !"

"अच्छा ! ले लो। फिर···?"

"आयी हुई लड़कियों में···"

"सभी सुन्दर हैं !"

"ऐसा नहीं कहा जा सकता। वह माधवी ही कद-काठी से नाक-नक़्श से तराशी हुई बहुत सुन्दर युवती थी !"

"अच्छा !"

"उसे 'पर्मानेंट हीरोइन' बना लेना है !"

"नाटक के ही लिए न ?"

"उस्ताद ! तुम्हारा मज़ाक मैं बर्दाश्त नहीं कर सकता ! रहने भी दो !"

"अच्छा रहने दिया ! आगे बोलो !" मुत्तुकुमरन् ने कहा।

गोपाल बोला, "आयी हुई लड़कियों में से कुछेक को नाटक के उपपात्रों के लिए लेना चाहता हूँ !"

"यानी ऐतिहासिक कहानी हो तो सखी और बाँदी; सामाजिक कहानी हो तो कॉलेज की सहेली, पड़ोस की लड़की—यही न ? ज़रूर—ज़रूरत पड़ेगी ! समय-समय पर जीवन-साथी के बतौर भी काम आ सकती है !"

मज़ाक बर्दाश्त न कर सका तो गोपाल ने चुप्पी साध ली और मुत्तुकुमरन् पर पैनी दृष्टि फेंकी। मुत्तुकुमरन् ने तत्काल बात बदलकर हँसते हुए पूछा, "गोपाल नाटक मंडली नाम रखने से पहले, तुम कह रहे थे कि सेक्रेटरी से मिलकर आय-कर आदि के विषय में कुछ पूछना है। पूछ लिया क्या ?"

गोपाल ने कहा, "सुबह ही सेक्रेटरी को फ़ोन कर मालूम भी कर चुका। हम गोपाल नाटक मंडली नाम रख सकते हैं। सेक्रेटरी की सलाह के बाद ही तुम्हारे पास आया हूँ !"

"अच्छा, बोलो ! आगे क्या करना है ?"

"इस 'आउट हाउस में सभी सुविधाएँ हैं। यहाँ बैठकर जल्द-से-जल्द उस्ताद को नाटक लिखकर तैयार कर देना है, बस। अगर किसी चीज़ की ज़रूरत हो तो नायर छोकरे को आवाज़ दो। उत्तर के सुपर स्टार दिलीप कुमार जब यहाँ आये थे, उनके ठहरने के लिए ही यह 'आउट हाउस' खासकर बनवाया था। उनके बाद यहाँ ठहरने वाले पहले आदमी तुम्हीं हो !"

"तुम्हारा ख्याल यही है न कि उस्ताद की इससे बड़ी अवहेलना नहीं की जा सकती !"

"इसमें अवहेलना कैसी ?"

"दिलीप कुमार एक अभिनेता है लेकिन मैं तो एक गर्वीला कवि हूँ। उनके ठहरने से मैं इसको तीर्थ-स्थान नहीं मान सकता। तुम मानना चाहो तो मानो। मैं तो यह चाहता हूँ कि जहाँ मैं ठहरता हूँ, उसे दूसरे लोग तीर्थ मानें !"

"जैसी तुम्हारी मर्ज़ी ! पर जल्दी नाटक लिख दो, बस !"

"मेरी पांडुलिपि को अच्छी तरह कोई टाइप करके देनेवाला मिले तो सही···"

"हाँ···याद आया। कल की 'इंटरव्यू' में उसी माधवी नाम की लड़की ने कहा

था कि वह टाइप करना भी जानती है। उसी से कह दूँगा कि वह 'टाइप' कर दे। 'टाइप' करते-करते उसे संवाद भी याद हो जाएँगे !"

"बड़ा अच्छा विचार है। इस तरह कोई कथा नायिका ही साथ रहकर 'हेल्प' करे तो मैं भी नाटक जल्दी लिख डालूँगा।"

"कल ही एक नये 'टाइप राइटर' के लिए ऑर्डर दे देता हूँ !"

"जैसे तुम एक-एक चीज़ का 'आर्डर' देकर मँगा लेते हो, वैसे मैं अपनी कल्पना को 'ऑर्डर' देकर तो नहीं मँगा सकता। वह तो धीरे-धीरे ही उभर करआयेगी !"

"मैं कोई जल्दी नहीं करता। इतना ही कहा कि नाटक ज़रा जल्दी तैयार हो जाए तो अच्छा रहेगा। चाय, कॉफ़ी, ओवल—जो चाहो, फ़ोन पर मँगा लो !"

"सिर्फ़ चाय, कॉफ़ी या ओवल ही मिलेगी ?"

"जो चाहो में 'वह' भी शामिल है !"

"फिर तो तुम मुझे उमर ख़ैयाम बना दोगे ?"

"अच्छा, मुझे देरी हो रही है। दस बजे 'काल शीट' है !" कहकर गोपाल चला गया।

मुत्तुकुमरन् ने 'आउट हाउस' के बरामदे से देखा की सूरज की रोशनी में हरी घास और निखर उठी है। और गुलाब की लाली माधवी के अधरों की याद दिला रही है। अंदर फ़ोन की घंटी बजी तो उसने फुर्ती से जाकर 'रिसीवर' उठाया।

"मैं माधवी बोल रही हूँ !"

"बोलो, क्या बात है !"

"अभी 'सर' ने फ़ोन पर बताया था···"

"सर माने···?"

"···अभिनेता सम्राट ! मैं कल से 'स्क्रिप्ट' 'टाइप' करने के लिए आ जाऊँगी। मेरे आने की बात सुनकर आप खुश हैं न ?"

"आने पर ही खुश हूँगा।"

दूसरे छोर से हँसी की खिलखिलाहट सुनायी दी।

"टाइप करने के लिए तुम आओगी, गोपाल के मुँह से यह सुनकर मैंने उसे क्या कहा, मालूम है ?"

"क्या कहा ?"

"सुनकर तुम खुश होगी ! कहा कि जब कथा-नायिका साथ रहकर 'हेल्प' करेगी तो मैं नाटक जल्दी लिख डालूँगा।"

"यह सुनकर मेरे दिल पर क्या बीत रही है, यह आप जानते हैं ?"

"सुनाओ तो जानूँ !"

"कल वहाँ आने पर ही बताऊँगी !" वह चुटकी लेकर बोली। उधर से फ़ोन रखने की आवाज़ आयी तो मुत्तुकुमरन् रिसीवर रखकर मुड़ा।

द्वार पर हाथ में एक लिफ़ाफ़ा लिये छोकरा नायर खड़ा था।

"क्या है, इधर लाओ !" मुत्तुकुमरन् के कहने पर वह अंदर आया और लिफ़ाफ़ा देकर चला गया।

लिफ़ाफ़ा भारी और बंद था। ऊपर मुत्तुकुमरन् का नाम लिखा था।

मुत्तुकुमरन् ने बड़ी फ़ुर्ती से उसे खोला तो उसमें से दस रुपये के नये-नये नोटों के साथ काग़ज़ का एक छोटा-सा पुर्ज़ा भी निकला।

मुत्तुकुमरन् ने पढ़ने के लिए पुर्ज़ा निकाला तो उसमें दो ही चार पंक्तियाँ लिखी हुई थीं। नीचे गोपाल के हस्ताक्षर थे। मुत्तुकुमरन् ने एक बार, दो बार नहीं, कई बार उसे पढ़ा। उसके मन में एक साथ कई विचार आये। मुत्तुकुमरन् ने इस बात का पता लगाने का प्रयत्न किया कि गोपाल उसे अपना घनिष्ठ मित्र मानकर प्यार से पेश आता है या जीविका की खोज में शहर की शरण लेने वाले व्यक्ति के साथ नौकर-मालिक का-सा व्यवहार करता है? मुत्तुकुमरन् ने पहले यह समझा कि पैसे के साथ आये हुए उस पत्र के सहारे गोपाल का मन आँक लेगा। पर यह उतना आसान नहीं था। सोचने-विचारने पर उसे ऐसा ही लग रहा था कि पत्र बड़े स्नेह और प्यार के साथ ही लिखा हुआ है।

चार

'प्रिय मुत्तुकुमरन्

बुरा न मानना। साथ के रुपयों को अपनी जेब-खर्च के लिए रखना। आवश्यकता पड़ने पर, मैं शहर में रहूँ या न रहूँ, खर्च के लिए पैसों की ज़रूरत पड़े तो इस नये शहर में तुम किससे माँगोगे और कैसे माँगोगे? तुम्हें तकलीफ़ न हो—इसी सद्भावना से इसे मैं तुम्हारे पास भेज रहा हूँ !"

इतना लिखकर गोपाल ने अपना दस्तखत भी किया था।

उस पुर्ज़े को पढ़ने और उन रुपयों को देखने पर मुत्तुकुमरन् असमंजस में पड़ गया कि अपने मित्र के इस कृत्य पर गुस्सा जताए या स्नेह? अपनी माली हालत जताने के लिए उसने इस तरह पैसा भेजा है—एक ओर यह विचार उठकर उसका गुस्सा बढ़ाता तो दूसरी ओर दूसरा विचार हावी हो जाता—नहीं। बेचारा तुम्हारा इतना ख्याल रखता है ताकि पैसे की तंगी से तुम ज़रा-सी भी तकलीफ़ में न पड़ जाओ।

'ठहरने को जगह, खाने को भाजन और लिखने की सुविधा—इन सारी

व्यवस्थाओं के बाद मुझे पैसे की क्या ज़रूरत पड़ेगी ? पैसा क्यों न लौटा दिया जाये ?'—इस विचार को क्रियान्वित करते हुए भी उसका जी हिचका। ऐसा करने पर मित्र के दिल को चोट पहुँचे तो क्या हो ?

उसने उस लिफ़ाफ़े को रुपयों की गड्डी और उस पुर्ज़े को, दराज़ में इस तरह घुसेड़ दिया, मानो कोई बेकार का बण्डल हो।

उस विचार को दूर ढकेलकर उसने अपना जी नाटक रचना की ओर लगाया। मद्रास जैसे बड़े महानगर में गोपाल जैसे सुप्रसिद्ध अभिनेता द्वारा खेले जानेवाला नाटक का प्रणेता होकर नाम-यश लूटने का उसे अच्छा-खासा मौक़ा हाथ लगा है। इससे ख़ूब फ़ायदा उठाना है—इस निर्णय तक पहुँचने पर उसके मन में यह बात आयी कि मदुरै कन्दस्वामी नायुडु की सभा के लिए लिखे हुए बाल विनोद नाटकों और अब गोपाल के लिए लिखे जानेवाले नाटक में कौन-सा मौलिक भेद होना चाहिए। ताकि तकनीक, रूप-विधान, संवाद, घटना-शृंखला, हास्य आदि हरेक पहलू तथा स्थान और काल की दृष्टि से भी नाटक विश्वसनीय लगे।

बार-बार उसका ध्यान नाटक-लेखन के विषय में जिस तरह सोचने लगा था, उसका कारण यह नहीं कि उसे नाटक, संवाद या गीत लिखना नहीं आता था। इस कला में तो वह निपुण और सिद्धहस्त था ही। उसे एक नये संसार में अपनी कला का प्रदर्शन कर कामयाबी हासिल करनी थी। इतने सोच-विचार, असमंजस और संकोच के पीछे यही विचार घर किये हुए था।

मद्रास में क़दम रखते-न-रखते, उसने यह आशा नहीं की थी कि उसके मित्र के द्वारा ही उसे ऐसा एक मौक़ा मिलेगा। इस मौक़े का फ़ायदा उठाकर सफल क़दम रखने की ओर उसका ध्यान एकाग्र हुआ। वह मन-ही-मन उस पर योजनाओं की इमारत खड़ी करने लगा।

सबेरे नौ बजे छोकरा नायर इडली और कॉफ़ी ले आया और बोला, "सर, आपका नाश्ता तैयार है।"

"साहब हैं या स्टूडियो चले गये ?" मुत्तुकुमरन् ने उससे पूछा।

"अभी नहीं गये। दस मिनट में जाएँगे !" उत्तर में लड़के ने यह भी जोड़ा कि साहब का हुक्म है कि आपकी हर ज़रूरत का ख़्याल रखा जाये।

मुत्तुकुमरन् नाश्ता कर कॉफ़ी पी रहा था कि टेलिफ़ोन की घंटी बजी। बँगले से गोपाल बोल रहा था।

"मैं स्टूडियो जा रहा हूँ उस्ताद ! जो चाहो, लड़के से कहकर निस्संकोच मँगा लो ! बाद को स्टूडियो से फ़ोन करूँगा। नाटक ज़रा जल्दी तैयार हो जाए तो अच्छा !"

"सो तो ठीक है लेकिन लिफ़ाफ़े में जो कुछ भेजा है, समझ में नहीं आता कि उसक क्या मतलब है ! क्या तुम मुझे यह दिखाना चाहते हो कि वह तुम्हारे पास

बहुत अधिक पैसा है ?"

"नहीं-नहीं, ऐसा मत कहो। यों ही जेब-खर्च के लिए रखना अपने पास !"

"कोरा काग़ज़ हो तो उसपर कविता लिखी जा सकती है। यह तो छपे हुए रुपयों का नोट है ! यह मेरे किस काम का ?"

मुत्तुकुमरन् की बात सुनकर दूसरी ओर से गोपाल खिलखिलाकर हँस पड़ा और बातें पूरी कर शूटिंग के लिए चल पड़ा।

मुत्तुकुमरन् के अहंकार से परिचित होने के कारण ही गोपाल ने लिहाज़ की दृष्टि से भी स्टूडियो देखने या शूटिंग देखने को उसे नहीं बुलाया। वह यह भी जानता था कि बाहर से पहली बार मद्रास आनेवाले लोग स्टूडियो देखने के प्रति जितना उत्साह दिखाते हैं, उतना मुत्तुकुमरन् नहीं दिखायेगा।

दोपहर के बारह बजने के पहले माधवी ने चार-पाँच बार, बात बेबात पर मुत्तुकुमरन् को फ़ोन कर दिया था।

मदुरै रहते हुए मुत्तुकुमरन् इस बात से वाक़िफ नहीं था कि टेलीफ़ोन इतना सुविधाजनक और आवश्यक साधन है। आधुनिक जीवन में मद्रास जैसे शहर में अब उसे भली-भाँति पता चल गया कि यह कितना ज़रूरी साधन है। जीवन की रफ़्तार में भी मदुरै और मद्रास के बीच बड़ा फ़र्क़ था।

पगडंडी पर चलने का आदी, एकाएक कारों और लारियों से खचाखच भरे महानगरके चौराहे पर आ जाए तो जैसे लड़खड़ा जाएगा वैसे ही उसे अपने को सँभालना पड़ रहा था। आमने-सामने बातें करते हुए जो स्वाभाविक बोली बोली जाती है, रोष या हँसी-खुशी प्रकट की जाती है, टेलीफ़ोन में उसे वैसी बात करना नहीं आया। तस्वीर खिचवाते हुए जो कृत्रिमता आ जाती है, टेलिफ़ोन में बातें करते हुए भी वैसी ही कृत्रिमता आ जाती थी। लेकिन गोपाल या माधवी के बोलने में बड़ी स्वाभाविकता नज़र आयी। उनकी तरह बोलने का उसका मन कर रहा था। अनेक बातों में वह गर्व से चूर था तो क्या ! मद्रास के वातावरण में कुछ बातों में उसका गर्व चूर हो रहा था।

काफ़ी सोच-विचार के बाद भी वह यह निर्णय कर नहीं पाया कि क्या लिखा जाए ? नहाकर कपड़ा बदला और दोपहर का भोजन भी समाप्त किया।

गोपाल ने स्टूडियो से फ़ोन किया, "उस्ताद ! तीन बजे तैयार रहो। हमारे नये नाटक के संबंध में बात करने के लिए शाम को चार-साढ़े चार बजे मैंने सारे प्रेस रिपोर्टरों को बुलाया है। एक छोटी-सी चाय-पार्टी भी है। बाद में, सभी तुमसे नये नाटक के विषय में अनौपचारिक बात करेंगे। कुछ सवाल भी करेंगे। तुम्हीं को जवाब देना होगा। समझे ?"

"अभी नाटक तैयार ही नहीं हुआ है। उसके पहले इन सब बातों की क्या ज़रूरत है ?"

"इस शहर में यह रिवाज़-सा है। अग्रिम प्रचार है और क्या ? गाली भी दो तो भी नाश्ता-कॉफ़ी और चाय-पान के साथ लोग सुन लेंगे !"

"धीरे-धीरे मुझे मद्रास के जीवन के लिए तैयार करना चाहते हो ! है न ?"

"हाँ, किसी न किसी दिन तैयार तो होना ही है !"

"यह सब तो एक नाटक लगता है।"

"हाँ, नाटक ही तो है !"

"कौन-कौन आएँगे ?"

"सिनेमा के संवाददाता, मशहूर कथाकार, संवाद-लेखक, निर्देशक, हमारी नाटक मंडली के लिए चुने गये लोग और अभिनेता तथा अभिनेत्रियों में से भी कुछेक···आएँगे !"

"मुझसे भी कुछ पूछेंगे ? क्या पूछेंगे ?"

"क्या पूछेंगे ? यही कि नाटक का कथानक क्या है, कब तैयार होगा और कैसे तैयार होगा ? कह देना कि यह तमिळ प्रदेश के महत्त्वपूर्ण स्वर्णिम युग को चित्रित करनेवाला महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक नाटक होगा। ऐसा नाटक तमिळ प्रदेश में ही नहीं, समूचे भारत में भी तैयार नहीं हुआ होगा !"

"सवाल और सवाल का जवाब तुम्हीं ने मुझे सिखा दिया ! है न बात सच्ची ?"

"हाँ, तुम जो भी जवाब दो, महत्त्वपूर्ण शब्द ज़रूर जोड़ देना, बस !"

"अच्छा, तो यह कहो कि महत्त्वपूर्ण गोपाल नाटक मंडली का महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक नाटक···महत्त्वपूर्ण ढंग से प्रस्तुत होगा।"

"दिल्लगी छोड़ो ! मैं सीरियसली कह रहा हूँ।"

"यहाँ तो दोनों में कोई फ़र्क़ मालूम नहीं होता। पता ही नहीं लग पाता कि कौन-सी बात गम्भीर है और हल्की-फुल्की बातें भी कैसी गम्भीरता से कही जाती हैं।"

"अच्छा, छोड़ो उन बातों को ! तुम तैयार रहो। मैं तीन बजे आ जाता हूँ ! माधवी को भी जरा जल्दी आने के लिए फ़ोन किया है।" गोपाल ने बात पूरी की।

मुत्तुकुमरन् को गोपाल पर आश्चर्य हो रहा था—

मद्रास आने पर गोपाल ने जीवन को कितनी तेज़ी से पढ़ा है ! ऐसी दुनियादारी उसने कब सीखी और कहाँ से सीखी ? इसने समयोचित ज्ञान किससे सीखा और कैसे सीखा ? समय के अनुसार सारा प्रबन्ध करने की राजनैतिक चाणक्य-वृत्ति को कला-जीवन में भी उतारना कोई ऐसा-वैसा काम नहीं है ! गोपाल इसमें सच ही बड़ा निष्णात है !

सबेरे नाटक लिखने को कहना और शाम को पत्रकारों को बुलाकर विज्ञापन के लिए रास्ता निकालना, उसे लगा कि शहरी जीवन में कामयाबी हासिल करने के लिए यह सामर्थ्य और फ़ुर्ती ज़रूरी है। गोपाल की कार्य-चातुरी देखकर उसने

महसूस किया कि किसी योग्य कार्य को निपटाना मात्र काफ़ी नहीं, चार जनों को बुलाकर दावत खिलाना और झख मारकर यह मनवाना भी ज़रूरी है कि मैंने जो किया, वही श्रेष्ठ है !

दोपहर के दो बजे से पौने तीन बजे तक वह बिस्तर पर करवटें बदलता रहा। नींद नहीं आयी। छोकरा नायर जो अखबार छोड़ गया था, उसे पढ़ने में वह समय बीत गया।

तीन बजे के आस-पास उठकर उसने हाथ-मुँह धोया और कपड़ा बदलकर तैयार हो गया। किसी ने कमरे के दरवाज़े पर धीमी-सी दस्तक दी।

मुत्तुकुमरन् ने किवाड़ खोला तो बेले की भीनी महक ने उसे सहलाया। माधवी आयी थी, खूब सज-धजकर। होंठों पर लिपस्टिक लगाकर शायद हल्के से उन्हें पोंछ भी लिया था।

मुत्तुकुमरन् ने मुस्कराहट के साथ उसका स्वागत किया, "मैंने समझा कि तुम्हीं होगी।"

"कैसे ?"

"किवाड़ पर लगी हल्की दस्तक से ही, जिसकी ध्वनि तबले से भी मीठी थी।"

"चूड़ियों की झनकार भी सुन पड़ी होगी।"

हाँ कहें या ना—मुत्तुकुमरन् एक क्षण रुका और उसे निराश न करने का निर्णय कर बोला, "हाँ, हाँ ! सुन पड़ी थी।"

"कहते हैं कि स्त्रियों की चूड़ियों की झनकार सुनकर कवियों की कल्पना उमगती है। आपको कोई कल्पना नहीं सूझी क्या ?"

इस ढीठ प्रश्न से मुत्तुकुमरन् तनिक अकचका गया और सँभलकर बोला, "जब स्वयं कविता ही प्रत्यक्ष हो गयी तो कल्पना की क्या ज़रूरत है माधवी ?"

माधवी उसे आँखों-आँखों में देखकर मुस्करायी। अपने साज-शृंगार से वह वन-मोहिनी की तरह उसका मन मोह रही थी।

मुत्तुकुमरन् भी उसे कुछ इस तरह देख रहा था, मानो आँखों से ही पी जाएगा।

"क्या देख रहे हैं ?"

"देख रहा हूँ कि हमारी कथा-नायिका कैसी है।"

यह सुनकर उसका गुलाबी चेहरा लाल हो गया।

द्वार पर किसी के खँखारने की आवाज़ आयी। दोनों ने मुड़कर देखा तो गोपाल हँसता खड़ा था।

"क्या मैं अंदर आ सकता हूँ।"

"पूछते क्या हो ? आओ न !"

"बात यह है कि तुम दोनों बड़ी प्रसन्न मुद्रा में कुछ बातें कर रहे हो ! पत।

नहीं, इसमें तीसरा भी सम्मिलित हो सकता है कि नहीं। या कि यह दोनों तक ही सीमित है ?"

"दो के बदले तीन ! इसमें क्या फ़र्क़ पड़ता है ?"

"एक चीज़ में फ़र्क़ पड़ता है।"

"किसमें ?"

"प्रेमियों के वार्तालाप में !"

गोपाल की इस बात को माधवी कहीं बुरा न मान जाए, यह देखने के लिए मुत्तुकुमरन् ने धीरे-धीरे उसके चेहरे को ताका। वह हँस रही थी—शरारत भरी हँसी ! लगा कि गोपाल की बात पर वह मन-ही-मन खुश हो रही थी।

गोपाल तो अविवाहित था ही, माधवी भी अविवाहिता थी और स्वयं मुत्तुकुमरन् भी अविवाहित था। तीनों खुल्लमखुल्ला बड़े धैर्य के साथ प्रेम भरी बातें कर रहे थे, प्रेम का नाता जोड़ना चाहते थे। असम्भव को सम्भव बना रहा था, मद्रास का यह कला जगत ! मुत्तुकुमरन् को लगा कि ज़माना सचमुच बहुत आगे बढ़ गया है। पर उसके अनुकूल अपने को ढालने की वह जुर्रत नहीं कर पा रहा था। उसे सब कुछ सपना-सा-लगा।

साढ़े तीन बजे वह, गोपाल और माधवी तीनों बाहर बगीचे में आये। वहाँ चाय-पार्टी के लिए मेजें और कुर्सियाँ लगी थीं। मेजों पर सफ़ेद मेजपोश बिछे थे। उनपर फूलदान और गिलास कलापूर्ण ढंग से बड़े करीने से रखे हुए थे।

एक-एक कर लोग आने लगे। गोपाल ने मुत्तुकुमरन् को उनसे परिचय कराया। माधवी मुत्तुकुमरन् के इर्द-गिर्द हँसती-मुस्कराती खड़ी रही। महिला-मेहमान आतीं तो वह उन्हें लिवा लाती और मुत्तुकुमरन् से परिचय कराती थी।

पार्टी में आये हुए एक संवाद-लेखक ने मुत्तुकुमरन् को नीचा दिखाने के लहज़े में पूछा, "यही आपका पहला नाटक है या इसके पहले भी कुछ लिखा है ?"

मुत्तुकुमरन् ने उसकी अनसुनी कर चुप्पी साधी। पर उसने बड़ी बेपरवाही से अपना वही सवाल दुहराया।

मुत्तुकुमरन् ने उसे टोकने के विचार से पूछा, "आपने अपना क्या नाम बताया ?"

"दीवाना !"

"अब तक कितने फ़िल्मों के लिए आपने संवाद लिखा है ?"

"चालीसेक !"

"शायद इसीलिए जनाब यह सवाल कर रहे हैं !"

मुत्तुकुमरन् की बात से वह सकपका गया। उसके बाद वह मुत्तुकुमरन् के सवालों का डरते-डरते वैसे ही जवाब देने लगा, जैसे शिक्षक के सामने छात्र। यह देखकर माधवी पुलकित हो रही थी।

मुत्तुकुमरन् के अंहकार और गर्व पर वह फूली न समायी। वह उसपर जान देने को तैयार हो गयी।

चाय-पार्टी के बाद गोपाल उठा और मेहमानों को मुत्तुकुमरन् का परिचय देते हुए बोला—

"मुत्तुकुमरन् और मैं बायस् कंपनी के समय से ही अभिन्न मित्र हैं। मेरा जाना-पहचाना पहला कवि मुत्तुकुमरन् ही है। उन दिनों 'बायस् कंपनी के दिनों में हम दोनों एक चटाई पर सोते रहे। मैं उसे 'उस्ताद' के नाम से पुकारता था। अब भी कई बातों में वह मेरा उस्ताद है। उसके सहयोग से मैंने यह नाटक मंडली शुरू की है। मैं यक़ीन दिलाता हूँ कि यह कई महत्त्वपूर्ण सफल नाटक प्रस्तुत कर दर्शकों के दिलों में स्थान पायेगा। इसके लिए आप लोगों का पूर्ण सहयोग और प्रेम चाहिए, बस !"

उसके इस परिचय-भाषण के बाद कुछ पत्रकारों ने गोपाल और मुत्तुकुमरन् को एक साथ खड़ा किया और फ़्लैश फ़ोटो खींचा।

इस प्रकार, उन्हें तस्वीरें उतारते देखकर मुत्तुकुमरन् ने ज़रा परे खड़ी माधवी को बुलाकर उसके कानों में कहा, "लगता है, इस तरह हम दोनों को साथ खड़ाकर कोई फ़ोटो नहीं लेगा !"

"तो क्या, हम खुद ही खिचवा लेंगे !"—कहकर माधवी हँसी।

उसका यह उत्तर मुत्तुकुमरन् को बहुत अच्छा लगा।

बाद को गोपाल ने मुत्तुकुमरन् से विनती की कि वह भी मेहमानों को कुछ सुनाये।

मुत्तुकुमरन् बात-बात पर मेहमानों को हँसाता हुआ बोला। दो-तीन मिनट में ही वे उसके वशीभूत हो गये। उसकी हँसी-मज़ाक भरी बातों से श्रोताओं का बड़ा मनोरंजन हुआ।

"मैं मद्रास के लिए नया हूँ !"—इन शब्दों से उसका भाषण शुरू हुआ और आधे घंटे तक जारी रहा। मेहमान मंत्र-मुग्ध-से रह गये। पार्टी के अंत में माधवी ने एक गाना गाया: 'मेरी आँखों से मेरे मन में समा जाओ।'

मुत्तुकुमरन् को लगा कि वह उसी के स्वागत में ये पंक्तियाँ गा रही है। उसने पाया कि उसे गाने गाना भी अच्छी तरह आता है। मधुर स्वर में दिल को जीत लेने वाले गीत को सुनकर वह उसपर मुग्ध हो गया।

पार्टी के बाद विदा लेते हुए सब लोग पहले गोपाल और बाद को मुत्तुकुमरन् से हाथ मिलाकर विदा हुए। मुत्तुकुमरन् से विदा लेते हुए कोई भी उसके भाषण की तारीफ़ करना नहीं भूला। मुत्तुकुमरन् को इतनी जल्दी लोगों के दिल में स्थान मिल गया, यह देखकर गोपाल फूला नहीं समाया।

सबके जाने के बाद मुत्तुकुमरन् ने माधवी से कहा, "वाह ! तुम तो बहुत खूब

गाती हो ! मैं तो सुनकर अवाक् रह गया !"

"गाना ही नहीं, भरत-नाट्यम् भी इसे बहुत अच्छा आता है !" गोपाल ने कहा।

यह सुनकर माधवी कुछ इस तरह झेंप गयी, मानो भरत-नाट्यम् की किसी मुद्रा में खड़ी हो।

मुत्तुकुमरन् उसकी हर अदा पर मंत्र-मुग्ध हो गया। जहाँ वह बिना-किसी झिझक के बातें करते हुए सुन्दर लगती थी, शरमाती हुई भी सुन्दर लगी। गाते हुए सुन्दर थी, मौन रहते हुए भी सुन्दर थी। हाँ, हर बात पर वह सुन्दरता की पुतली थी !

"आज आपका भाषण बहुत अच्छा रहा !" माधवी भी उसकी तारीफ़ बाँधने में लगी तो मुत्तुकुमरन् ने गर्व में भरकर कहा, "मेरा भाषण हमेशा अच्छा ही होता है।"

"पर मैंने तो आज ही सुना !"

"तुम्हारे इशारे पर तो जब चाहो मैं भाषण झाड़ने को तैयार बैठा हूँ।"

वह हँसी। उसकी चमकीली दंत-पंक्तियों की आभा देखकर वह अपना आपा खो बैठा। स्त्री-सौंदर्य का ऐसा अनुपम चमत्कार उसने देखा नहीं था, केवल काव्यों के वर्णनों में ही पढ़ा था।

गोपाल उसके पास आया और बोला, "नाटक अब सौ फ़ीसदी सफल होकर रहेगा !"

"अभी से कैसे कहा जा सकता है ?"

"आये हुए लोग कह रहे हैं ! मैं कहाँ कहता हूँ ?"

"वह कैसे ?"

"अगर आदमी पसंद आ गया तो समझो कि उसका सब कुछ पसंद आ गया ! आदमी पसन्द नहीं आया तो उसकी अच्छी-सी अच्छी चीज़ में भी दोष निकालना इस शहर की पुरानी आदत है उस्ताद !"—गोपाल ने कहा।

मुत्तुकुमरन् को यह बात कुछ अजीब-सी लगी। लेकिन उसपर उसने गोपाल से तर्क करना नहीं चाहा। उसी दिन शाम को गोपाल, मुत्तुकुमरन् और माधवी को साथ लेकर एक अंग्रेज़ी फ़िल्म देखने गया।

थियेटर वाले को पहले ही फ़ोन कर 'न्यूज़ रील' के लगने के बाद वे अपने लिए आरक्षित बालकनी में जा बैठे और अंतिम दृश्य खत्म होने के पहले ही उठ आये। नहीं तो भीड़ गोपाल को घेरकर खड़ी हो जाती और उसे फ़िल्म देखने ही नहीं देती। गोपाल की इस हालत पर मुत्तुकुमरन् को बड़ा ताज्जुब हुआ। सार्वजनिक स्थानों में भी आज़ादी से चलने-फिरने न देनेवाली कीर्ति की यह रोशनी मुत्तुकुमरन् को ज़रा भी स्वीकार नहीं थी। मुत्तुकुमरन् उस कीर्ति से घृणा करता

था, जो मनुष्य को अपनी क़ैद में रखे ! पर गोपाल तो खुश नज़र आ रहा था।

मुत्तुकुमरन् ने गुस्से में भरकर पूछा, "वह कीर्ति किस काम की, जो मनुष्य को स्वेच्छा से चलने न दे ?"

गोपाल के उत्तर देने के पहले कार बँगले पर पहुँच गयी। तीनों कार से उतरे। भोजन के उपरांत मुत्तुकुमरन् अपने 'आउट हाउस' की ओर बढ़ा।

"इन्हें पहुँचाकर आती हूँ !"—माधवी गोपाल से अनुमति लेकर मुत्तुकुमरन् के साथ चली। उस ठंडी-ठंडी रात में माधवी के साथ 'आउट हाउस' चलते हुए मुत्तुकुमरन् का मन उत्साह से भर गया। उसकी चूड़ियों की झनकार उसके दिल में गूँज उठी। उसकी मुस्कान और खिलखिलाहट उसके हृदय को गुदगुदाने लगी। ठंडे बगीचे में रात के द्वितीय पहर में 'रात रानी' की एक लता सफ़ेद फूलों से ऐसी लदी थी, जैसे नीले आकाश में तारे बिखरे हों। उनकी भीनी-भीनी खुशबू और सर्द रात की ख़ुनक में उसका हृदय अनुराग भरा गीत गाने लगा।

पाँच

चलते-चलते मुत्तुकुमरन् के मन में यह इच्छा लहर मार रही थी कि माधवी से बहुत कुछ बोले। 'आउट हाउस' की सीढ़ियाँ चढ़कर कमरे में आते ही माधवी ठिठकी। उसकी मुलायम देह अगले ही क्षण मुत्तुकुमरन् के आलिंगन में थी।

"छोड़िये मुझे ! मैं तो आपसे विदा लेने आयी थी !"

"विदा इस तरह भी ली जा सकती है न ?"

उसने उसकी पकड़ से धीमे से अपने को छुड़ा लिया। लेकिन वह फ़ौरन चल देने की जल्दी में नहीं थी। थोड़ी देर बाद वह जाने को उठ खड़ी हुई—

"तुम्हारा जाने का मन नहीं और मेरा छोड़ने का नहीं। इधर बैठो न !"

"नहीं-नहीं, साहब से कह आयी हूँ कि एक मिनट में आ जाऊँगी। शायद शक करें। मुझे जल्दी घर जाना भी है !"

मुत्तुकुमरन् ने अब चूड़ियों वाले उसके गुलाबी हाथ थाम लिये, जो मथे हुए मक्खन-से मुलायम और शीतल थे।

"तुम्हें छोड़ने का मन नहीं होता, माधवी !"

"मेरा भी नहीं होता। लेकिन···" मुत्तुकुमरन् के कानों में उसकी फुसफुसाहट ऐसी पड़ी, जिसके आगे दैवी संगीत भी मात था।

माधवी अनिच्छापूर्वक विदा लेकर चल पड़ी। सर्द रात और मुत्तुकुमरन्

अकेले छूट गये। माधवी जहाँ खड़ी थी, वहाँ से बेले की खुशबू आ रही थी। उसने उसे जब अपने आलिंगन में लिया था, तब एक-दो फूल ज़मीन पर आ गिरे थे। उसने उन्हें उठा कर सूँघा तो माधवी की याद फिर से महक उठी। खुली खिड़की से ठंडी हवा का झोंका आया तो उसने किवाड़ बंदकर परदा भी खींच लिया। कुछ देर बाद, टेलिफ़ोन की घंटी बजी। उसने लपककर रिसीवर उठाया।

"मैं, माधवी ! अभी घर आयी !"

"यह कहने के लिए भी फ़ोन···?"

"क्यों ? मेरा बार-बार बोलना पसन्द नहीं ?"

"मैंने ऐसा कहाँ कहा ? मुझसे लड़ने पर क्यों तुली हो ?"

"मैंने इसलिए फ़ोन किया था कि आप फ़िक्र करते होंगे कि मैं घर पहुँची कि नहीं ! और आप इसे लड़ना कहते हैं ! "

"मान लो कि मैं ही तुमसे लड़ना चाहता हूँ। पर इस तरह फ़ोन पर नहीं···"

"फिर कैसे ? "

"आमने-सामने और तुम्हारे गाल पर एक चपत लगाकर कहना है कि मेरी बात मानकर चलो !"

"खुशी से लगाइये ! मैं भी आपसे चपत खाने के लिए उत्सुक हूँ !"

इस प्रकार उनकी बातें बड़ी देर तक जारी रहीं। किसी को बात बंद करने का मन ही नहीं हुआ। मुत्तुकुमरन् को लगा कि करने को अभी भी ढेर-सी बातें हैं और माधवी को लगा कि अब भी बातें अधूरी रह गयी हैं। फिर भी कितनी देर बातें करें ? इसलिए दोनों ने फ़ोन रख दिया।

हर्षोल्लास से पूर्ण उस शुभ घड़ी में मुत्तुकुमरन् ने नाटक का श्रीगणेश किया। पांडिय राजा पर दिल लुटाने वाली एक नर्तकी की कहानी का। मन में खाका-सा खींचकर उसने लिखना शुरू किया। प्रथम दृश्य ही बढ़िया और रोचक बने—वह इस कोशिश में लगा रहा। उसमें पांडिय राजा अपने अमात्य, राजकवि और परिवार के साथ नृत्य देखते हैं। नर्तकी के मुख से गवाने के लिए एक गाना भी लिखना था। कथानायिका के रूप में नर्तकी की कल्पना करते हुए उसके अंतः चक्षु के सामने माधवी ही हँसती हुई आ खड़ी होती थी। कथानायक की कल्पना तो उसने की ही नहीं। लाख कोशिश करने और मिटाने के बावजूद कथानायक के रूप में वह स्वयं अपने को ही देख पाता था।

अचानक आधी रात के बाद, पता नहीं कितने बजे होंगे—गोपाल ने उसे फ़ोन पर याद किया।

"अरे यार ! यहाँ आओ न ! सोमपात्र तैयार है। ज़रा मस्ती छानेंगे।"

"न, भाई ! अभी मैं लिख रहा हूँ। आधे में छोड़ आऊँ तो फिर मूड नहीं बनेगा !"

"तो वहीं भेज दूँ ?""

"न···न, मुझे छोड़ो···"

"जैसी तुम्हारी मर्जी"—कहकर गोपाल ने फ़ोन रख दिया।

मुत्तुकुमरन् के मन में तो माधवी समायी हुई थी और वह कहीं गहरा नशा चढ़ाकर लिखवा रही थी। उसकी साँसों में अब भी उसकी देह की सुगंध भरी थी। कनक छड़ी-सी उसकी काया में जो सुकुमारता थी, उसे उसके हाथ अब भी अनुभव कर रहे थे। उससे बढ़कर किसी बनावटी नशे की ज़रूरत उसे उस समय नहीं पड़ रही थी। उसके हृदय में ही नहीं; शिराओं में भी माधवी ही मदिरा बनकर दौड़ रही थी। वह बड़े यत्न से उसका साज-सिंगार कर, पांडिय राजा के दरबार में नृत्य का आयोजन कराकर स्वयं आनंद में डूबा हुआ था। नृत्य के समय, पांडिय राज के प्रति नृत्यांगना को जो गाना गाना था, उसका मुखड़ा भी काफ़ी बढ़िया बन आया था।

"मेरे हृदय मंच पर कंत नाचते तुम !
तुम्हारे संकेतों पर प्रिय ! नाचती मैं।"

इस टेक पर मधु मधुर राग चुनकर उसने बहुत सुन्दर गीत रचा था। नृत्य के बोल तो लासानी बने थे। जब वह लेटने को उठा, तब रात के तीन बज रहे थे। आउट हाउस के पास, बगीचे से पारिजात पुष्पों की भीनी-भीनी महक ठंडी हवा में घुली आ रही थी। उस खुशबू को खूब गहरे खींचकर, उसने अंतर में बैठी माधवी की स्मृति को खूब नहलाया और सो गया।

दूसरे दिन सवेरे उसे पता न था कि पौ कब फटी ! उसे बिस्तर छोड़ते हुए नौ बज गये थे। आउट हाउस के बरामदे पर माधवी और गोपाल की-सी आवाज़ सुनाई दी। शायद माधवी आ गयी है—सोचता हुआ वह ग़ुसलखाने में घुसा। पन्द्रह-बीस मिनट बाद जब वह बाहर आया तो देखा कि छोकरा नायर नाश्ता-कॉफ़ी लिये खड़ा है।

नाश्ते के बाद थर्मस की कॉफ़ी गिलास में उड़ेलकर वह पी ही रहा था कि माधवी यह पूछती हुई आयी, "क्या मुझे कॉफ़ी नहीं मिलेगी ?"

उसकी प्यार-भरी और आत्मीयतापूर्ण बातें सुनकर मुत्तुकुमरन् ने फ्लास्क को उलट कर देखा। उसमें कॉफ़ी नहीं थी। उसके हाथ के गिलास में, उसके पीने के बाद, एक-दो घूँट ही बाक़ी थी !

"लो, पीओ।" शरारती हँसी हँसते हुए उसके आगे बढ़ाया।

"मैंने भी तो यही चाहा था !" कहकर उसने उसके हाथ से कॉफ़ी लेकर पी ली।

माधवी की यह सहजता मुत्तुकुमरन् को बहुत पसंद आयी। साथ ही, उसे इस बात का गर्व भी हो रहा था कि उसने माधवी का मन जीत लिया है।

सवा दस बजे नायर लड़का एक खाकी पोशाक वाले के साथ अन्दर आया, जो नया टाइपराइटर लेकर आया था। उसके जाने के बाद माधवी ने मशीन में नया फीता लगाते हुए कहा, "स्क्रिप्ट दीजिये तो मैं टाइप करना शुरू कर दूँ !"

तभी स्टूडियो की ओर रवाना होते हुए गोपाल आया और खुश होकर बोला, "टाइपराइटर तैयार ! तुम्हारी कथा-नायिका तैयार ! अपना नाटक जल्दी तैयार कर दो, मेरे यार !"

"पहला दृश्य ही बहुत अच्छा बन पड़ा है। नाटक की सफलता की निशानी है यह।"

"शाबाश ! जल्दी लिखो। अब मैं स्टूडियो जा रहा हूँ। जाते हुए मैं यह बताने आया था कि शाम को मिलेंगे !" कहकर गोपाल माधवी की ओर मुड़ा और बोला, "वन प्लस टू, या थ्री कॉपी निकालो। बाद में ज़रूरत पड़ी तो और निकाल लेंगे ! इनके नाटक का जल्दी तैयार होना, तुम्हारे प्रोत्साहन पर निर्भर है।"

माधवी ने मुस्कुराते हुए ऐसा सिर हिलाया, मानो अपनी ओर से कोई क़सर नहीं उठा रखेगी।

मुत्तुकुमरन् ने जितना कुछ लिखा था, उसे टाइप करने के लिए माधवी के हाथ दे दिया। माधवी पांडुलिपि को उलटते हुए उसकी लिखाई की तारीफ़ करने लगी, "आपके अक्षर तो मोती की तरह सुन्दर हैं।"

"सुन्दर क्यों नहीं होंगे ? बचपन में कितने यत्न से लिखना सीखा है, मालूम है ?" —मुत्तुकुमरन् आत्माभिनान से बोला।

"आपका यह आत्माभिमान भी मुझे बहुत पसंद है !"—माधवी ने एक और टाँका लगाया।

"दुनिया में केवल कष्ट भोगने के लिए पैदा होनेवाले आखिरी कवि तक के लिए अपना कहने को कुछ है तो वह उसका आत्माभिमान ही है !"

"कई लोगों में आत्माभिमान होता है। पर वह विरलों को ही शोभा देता है !"

"कुलभूषण, विद्याभूषण की तरह यशोभूषण भी होता है !"

"यशोभूषण ! बड़ा प्यारा शब्द है। यश जिसका भूषण है—यही इसका मतलब है न ?"

"हाँ ! दूसरा अर्थ यह भी हो सकता है कि यश जिसका भूषण बनकर स्वयं यशस्वी होता है।" मुत्तुकुमरन् ने अपना पांडित्य दर्शाया।

माधवी ने एक बार उसकी पांडुलिपि को बड़े ग़ौर से पढ़ा और मुत्तुकुमरन् की प्रशंसा करती हुई बोली, "बहुत बढ़िया बना है। नर्तकी के मुख से गवाने के लिए जो गाना लिखा गया है वह तो और बढ़िया है।"

"वह गाना अपने मधुर कंठ से एक बार गाओ तो कान भरकर सुनूँ !"

"अब मैं गाने लगूँ तो आपका आधा घंटा व्यर्थ जाएगा। आपके काम में बाधा पड़ेगी !"

"तुम्हारा गाना सुनने से बढ़कर बड़ा काम और क्या हो सकता है भला ?"

माधवी कंठ साफ़ कर गाने लगी:—

"मेरे हृदय मंच पर कंत नाचते तुम !
तुम्हारे संकेतों पर प्रिय···नाचती मैं।"

मुत्तुकुमरन् के कानों में मानो मधु प्रवाहित होने लगा। उक्त गीत ने वहाँ ऐसा वातावरण खड़ा कर दिया कि मुत्तुकुमरन् माधवी को कथा-नायिका और अपने को कथा-नायक-सा अनुभव करने लगा। उसके शब्द माधवी के कंठ में घुलकर अमृत बहाने लगे तो वह मंत्र-मुग्ध-सा हो गया। माधवी ने गीत पूरा किया तो लगा कि अमृत-वर्षा थम गयी।

गीत बन्द होने पर ही मुत्तुकुमरन् ने दौड़कर गुलदस्ते की तरह माधवी को अपनी बाँहों में भर लिया। उसने भी उसे रोका नहीं। उसके आलिंगन में वह असीम सुख का अनुभव कर रही थी।

दोनों ने दोपहर का खाना आउट हाउस में ही मँगाकर खाया। मेज़ पर पत्ता बिछाकर माधवी ने भोजन परोसा।

"तुम्हारे इस तरह परोसने को किसीने देख लिया तो क्या समझेगा ?"

"ऐसा किसलिए पूछ रहे हैं ?"

"इसलिए कि हम दोनों को इतनी जल्दी एक होते हुए देखकर, देखनेवाले ताज्जुब और डाह नहीं करेंगे ?"

"करें तो करें ! पर मेरे खयाल में ऐसा लगता है कि इस तरह मिलने और एक होने के लिए दुनिया के हर किसी कोने में—हर ज़माने में—कोई-न-कोई औरत-मर्द अवश्य उपस्थित रहते हैं।"

"सो तो ठीक है। पर मुझे देखते ही तुम्हारे मन में इतना प्यार क्यों हो आया ?"

"यह प्रश्न बड़ा क्रूर और अहंकारपूर्ण है। किसी तरह यहाँ आकर, राजा की तरह पैर पर पैर धरे बैठे रहे और मुझे मोह लिया ! अब अनजान बनकर पूछते हैं कि क्यों ? वाह रे वाह !"

"अच्छा, तो तुम मुझपर यह आरोप लगाती हो कि मैंने तुम्हें मोह लिया !"

"सिर्फ़ मुझे नहीं ! पहले गंभीर चाल से अन्दर आकर, फिर पैर पर पैर चढ़ाकर राजा की भाँति बैठे और कमरे में उपस्थित सभी लोगों को आपने मोह लिया ! लेकिन मुझे छोड़कर आपके पास आने की किसी दूसरी को हिम्मत नहीं पड़ी। और बातें करते हुए मैं ही क्यों, सभी डर रही थीं। सिर्फ़ मैं ही हिम्मत करके आपके पास

आयी और मोह-पाश में बँध गयी !"

"अरे, यह बात है ! इसका मुझे पहले ही पता होता तो तुम्हें अच्छी तरह टोह लेता। इतनी हिम्मत है तुम्हारी ?"

"हाँ, क्यों नहीं ! आप जैसे हिम्मतवरों को पाने के लिए थोड़ी-बहुत हिम्मत से काम लेना ही पड़ता है !"

"अच्छा, छोड़ो उन बातों को। लड़का तो एक ही पत्तल लाया है। अब तुम कैसे खाओगी ? एक और पत्ता लाने को कहूँ या इसी टिफ़िन कैरियर में ही खा लोगी ?"

"मेरे खयाल में आपने एक ही पत्ता लाने को कहा होगा !"

"नहीं-नहीं ! नाहक़ मुझपर दोष न थोपो।"

"क्या किया जाए ? इसी पत्ते पर खा लूँगी। सुबह कॉफ़ी पिलाते हुए भी आपने यही किया था। दूसरों को ग़ुलाम बनाकर ही तो आपका अहम् तुष्ट होता है।"

"ऐसी बात न कहो माधवी ! मैंने तुम्हें अपने हृदय में सौन्दर्य की रानी बनाकर बैठाया है। तुम अपने को ग़ुलाम बताती हो। तुम्हीं कहो, दासी कहीं रानी बन सकती है ?"

"आपने मुझे रानी का पद दिया है। इसीसे प्रमाणित होता है कि दासी भी रानी बन सकती है।"

बातें करते हुए माधवी ने बड़े प्रेम से उसे खिलाया और उसके खाने के बाद, उसी पत्ते पर स्वयं भी खाया। माधवी की प्रेमभरी श्रद्धा के सामने मुत्तुकुमरन् का अहंकार ढहता-सा लगा। माधवी महान् हो गयी और मुत्तुकुमरन् का जी छोटा।

खाना पूरा होने पर, छोकरा नायर बरतन ले गया। माधवी टाइप करने बैठी।

"इन उँगलियों से तुम वीणा के तारों पर कोई रसीला राग छेड़ती रहती तो मैं सुनता ही रहता। तुम्हारी ये कोमल उँगलियाँ जो विशेष कर वीणा-वादन के लिए बनी-सी मालूम होती हैं, टाइप के अक्षरों पर दौड़ते देखकर, इस मशीन के सौभाग्य को सराहने का मन होता है, माधवी !"

"पता नहीं, आप क्या चाहते हैं ? मेरी तारीफ़ करते हैं या खिल्ली उड़ाना चाहते हैं ? आप यही कहना चाहते हैं न कि मेरा वीणा-वादन टंकन जैसा होगा ! टाइप करने की तरह वीणा बजाऊँ तो वीणा के तार टूट जाएँगे। वीणावादन की तरह टाइप करूँ तो अक्षर काग़ज़ पर पड़ेंगे ही नहीं !"

"तुम्हें तो दोनों काम अच्छे आते हैं !"—मुत्तुकुमरन् ने कहा।

मुत्तुकुमरन् के मन में यह इच्छा हुई कि शाम को माधवी को साथ लेकर

समुद्र-तट या बाज़ार की तरफ़ निकला जाये तो अच्छा हो। उसे लगा कि उसके प्रेम में घुलकर नाटक तैयार किया जाए तो यह और बढ़िया बनेगा। पहला दृश्य पूरा कर, दूसरे दृश्य का भी कुछ अंश वह लिख चुका था। उसने सोचा कि मैं रात को बाक़ी लिख दूँ तो सवेरे आकर टाइप करने में उसे सुविधा होगी।

तीन बजे के करीब लड़का दोनों के लिए नाश्ता लेकर आया।

"कहीं ज़रा बाहर घूमने जाने की इच्छा होती है। क्या तुम भी साथ चलोगी, माधवी ?"

"एक शर्त मानें तो···"

"कौन-सी शर्त है ? बताओ तो पहले !"

"समुद्र-तट पर जाकर थोड़ी देर सैर करते रहेंगे। लेकिन लौटते हुए रात का खाना आपको मेरे घर में खाना होगा ! यदि बोलें तो अभी माँ को फ़ोन कर दूँ ?"

"तुम्हारा घर कहाँ है ?"

"लाइड्स रोड पर ! अपना नहीं, किराये का घर है। एक बँगले का आउट हाउस। मैं अपनी माँ के साथ वहीं रहती हूँ !"

"गोपाल को नहीं बुलाओगी ?"

"वे नहीं आयेंगे !"

"क्यों ?"

"मेरा घर बहुत छोटा है ! किसी दूसरे के बँगले का आउट हाउस। इसके अलावा मैं उनकी नाटक-मंडली में मासिक वेतन पानेवाली आर्टिस्ट हूँ। फिर उनकी हैसियत की समस्या भी तो है। उन्हें मालूम हो गया तो शायद आपको भी मना कर दें।"

"उसके लिए किसी दूसरे आदमी पर रोब जमाये तो अच्छा। मैं किसी की बात पर सिर झुकानेवाला आदमी नहीं। इस बोग रोड के नुक्कड़ पर चाय की एक छोटी-सी दूकान है न ? वहाँ भी बुलाओ तो भी खुशी से आने को मैं तैयार हूँ !"

माधवी का चेहरा कृतज्ञता से खिल उठा।

"मैं खाने पर ज़रूर आऊँगा ! मुझे तुम्हारी शर्त मंजूर है। अपनी माँ को फ़ोन कर दो !"

"ज़रा ठहरिये ! पहले छोकरे नायर से कहकर बाहर जाने के लिए कार तो निकलवा लूँ !"

"कोई ज़रूरत नहीं माधवी ! गोपाल की कार में नहीं, टैक्सी या बस में चला जाय।"

"ऐसा करेंगे तो वे नाराज़ हो जाएँगे। हम कार ले जायेंगे तो वे बुरा नहीं मानेंगे। उन्होंने जाते हुए मुझसे कहा था कि कहीं जाना हो तो ड्राइवर से कहकर

छोटी कार ले जाओ !"

"उसकी कार अगर तुम्हारे द्वार पर खड़ी हो तो हो सकता है कि उसका 'स्टेटस' गिर जाय !"

"कुछ नहीं होगा !" कहकर माधवी ने नायर को फ़ोन पर बुलाया और मलयालम में कुछ बोली ।

थोड़ी देर में आउट हाउस के द्वार पर एक छोटी 'फ़ियट' कार आ खड़ी हुई।

चलते हुए माधवी से मुत्तुकुमरन् ने पूछा, "केरल में तुम्हारा कौन-सा गाँव है ?"

"मावेलीकरै !"

कार पर जाते हुए माधवी ने पहले अपने घर जाने को कहा, ताकि माँ को समुद्र-तट पर जाने की सूचना दे दी जाय ।

जन्म से मलयाली होने पर भी माधवी की तमिळ में कोई फ़र्क़ नज़र नहीं आया । टाइप भी वह अच्छा कर लेती थी । तमिळ को मलयालम या तेलुगु की तरह बोलनेवाली कुछेक अभिनेत्रियों को मुत्तुकुमरन् स्वयं जानता था। माधवी तो हर बात में अपवाद थी । यह कैसे ? मुत्तुकुमरन् को आश्चर्य हो रहा था ।

छह

एक बड़े बँगले के बगीचे में दाहिने छोर पर, जो 'आउट हाउस' था, माधवी मुत्तुकुमरन् को उसमें ले गयी। घर की बैठक, दालान, रसोई घर—सब-के-सब बड़े सुरुचिपूर्ण ढंग से सजे थे । बैठक के एक कोने में टेलिफ़ोन रखा हुआ था । घर में माधवी की माँ और नौकरानी के सिवा और कोई नहीं था । माधवी ने माँ का मुत्तुकुमरन् से परिचय कराया । माधवी की माँ अधेड़ उम्र की थीं । उनके कानों में मलयाली बालियाँ डोल रही थीं । वह ज़रीदार किनारे वाली धोती—बालरामपुरम नेरियल मुंडु—पहने हुई थीं । बहुत मना करने पर भी कॉफ़ी पिलाये बग़ैर उन्होंने उन्हें नहीं छोड़ा । मुत्तुकुमरन् ने तो यहाँ तक कहा था कि हम तो रात का खाना यहीं खाना चाहते हैं ! आप तो कॉफ़ी पिलाकर छुटकारा पाना चाहती हैं ।

चक्कै (कटहल), वरुवल् (चिप्स) के साथ कॉफ़ी पिलाकर 'बीच' भेजते हुए उसने ताक़ीद भी की थी कि साढ़े आठ बजे तक भोजन करने आ जाना ।

माधवी ने जाते हुए कहा, "एगलियड्स बीच पर भीड़ कम होगी । वहीं जायेंगे ।"

पर मुत्तुकुमरन् ने ठीक उसका उल्टा विचार प्रकट किया—

"भीड़ से डरने और भीड़ को देखकर भागने के लिए हम दोनों में कोई गोपाल

जैसे मशहूर तो नहीं।"

"मेरे कहने का मतलब वह नहीं। मैंने तो बैठकर बातें करने के लिए सहूलियत देखी!"

"जहाँ जाओ, सहूलियत आप ही आप मिल जायेगी। इस सर्दी में कौन समुद्र-तट तक आयेगा?" मुत्तुकुमरन् ने कहा।

कार को सड़क पर खड़ी कर दोनों समुद्र की रेत पर पैदल चले। दिसंबर की सर्दी और शाम के झुटपुटे में 'एलियड्स बीच' पर भीड़ ही नहीं थी। एक कोने में एक विदेशी परिवार बैठकर बातें कर रहा था। उनके बच्चे रंग-रंग की गेंदें उछाल-खेल रहे थे।

मुत्तुकुमरन् और माधवी एक साफ़ जगह चुनकर जा बैठे। समुद्र और आकाश सारे वातावरण को रमणीक बना रहे थे।

एकाएक मुत्तुकुमरन् ने माधवी से एक प्रश्न किया, "मावेलिकरै से मद्रास आने और कला के इस क्षेत्र में सम्मिलित होने की क्या आवश्यकता पड़ी और वह भी क्यों और कैसे?"

इस तरह अचानक उसके सवाल करने की क्या वजह हो सकती है—यह जानने की इच्छा से या स्वाभाविक संकोच से माधवी ने उसकी ओर देखा।

"यों ही जिज्ञासा हुई! न चाहो तो मत बताना।"

"भैया भरी जवानी में मर गया तो हम माँ-बेटी मद्रास चली आयीं। फ़िल्मों के लिए 'एक्स्ट्रा' की भरती करनेवाले एक दलाल ने हमें स्टूडियो तक पहुँचा दिया। वहीं गोपाल साहब से मेरा परिचय हुआ!"

"परिचय?"

माधवी ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसके मन की परेशानी चेहरे पर फूटी।

मुत्तु को अपने प्रश्न पर ज़ोर देने की हिम्मत नहीं पड़ी। थोड़ी देर दोनों मौन रहे। फिर माधवी मौन तोड़कर बोली, "इस लाइन में मुझे जो कुछ तरक़्क़ी और सुविधा मिली है, उसके मूल में उन्हीं का हाथ है।"

"गाँव में तुम्हारा और कोई नहीं है क्या?"

"बाप का साया पहले ही उठ चुका था और जब भाई भी चल बसा तो हम माँ-बेटी ही सब कुछ थे!" कहते-कहते उसका कंठ-स्वर रुँध गया।

मुत्तुकुमरन् को उसकी स्थिति समझते देर नहीं लगी। भरी जवानी में कमाऊ भाई के निधन हो जाने से पेट की चिंता में माँ-बेटी मद्रास आयी हैं। सौंदर्य, शारीरिक गठन, कंठ-स्वर आदि से मलयाली होने पर भी साफ़-सुथरी तमिळ बोलने की योग्यता के चलते इसे तमिळ कला-जगत् में स्थान मिला है। इस सुन्दरी माधवी को मद्रास आने और कला-जगत् में प्रवेश पाने तक न जाने क्या-क्या दुख भोगने पड़े होंगे! यह पूछने का विचार मन में आते हुए भी उसने कुछ पूछा नहीं। हो सकता

है, इससे उसके दिल को ठेस पहुँचे और इस प्रकार के असमंजस में डाल दे कि सदा-बहार-सा खिला उसका चेहरा ही न मुरझा जाए। इसलिए बातचीत की दिशा मोड़ने के उद्देश्य से उसने अपने प्रस्तावित नाटक की बात उठायी। इसे माधवी ने बड़े उत्साह से सुना और अंत में हँसते हुए कहा, "इस नाटक में आप ही कथानायक होकर मेरे साथ अभिनय करें तो बड़ा अच्छा हो!"

वह हँसकर बोला, "नाटक तो इसीलिए तैयार किया जा रहा है कि गोपाल कथानायक की भूमिका अदा करे। जड़ को ही हिला दें तो फिर काम कैसे चलेगा?"

"सो तो ठीक है! पर मेरा जी चाहता है कि आप मेरे साथ अभिनय करें। इसमें ग़लत क्या है?"

"नहीं, मैं तुम्हारी बात की गहराई में जाकर, और ज़ोर देकर कहना चाहता हूँ कि तुम मेरे साथ अभिनय मात्र करना चाहती हो, जबकि मैं तो तुम्हारे साथ जीना चाहता हूँ"—कहते-कहते मुत्तुकुमरन् भावावेश में बह गया और उसने उसकी फूल-जैसी कलाई को अपने हाथ में ले लिया। माधवी की देह में ऐसी फुरहरी-सी दौड़ी। वह मानो उसी क्षण, उसी जगह, उसकी इच्छा पर अपना तन-मन वारने को तैयार हो गयी हो। उसकी भोली-सी चुप्पी और मोहक हँसी में मुत्तुकुमरन् अपना दिल खो गया।

बहुत रात गये तक वे समुद्र-तट पर बैठे रहे।

"खाना ठंडा हो जायेगा, अब चलें!" माधवी ने याद दिलाया तो मुत्तुकुमरन् ने शरारत भरी हँसी के साथ कहा—"यहाँ तो नवरस भोजन परसा है जबकि वहाँ तो षड्रस भोजन ही मिलेगा!"

"संवाद-लेखन के मुक़ाबले आपकी बातचीत ही अधिक अच्छी है।"

"वह कला है; यह जीवन है। कला से बढ़कर जीवन अधिक सुन्दर और स्वाभाविक होता है!"

बातें करते हुए दोनों वापस लौटे।

माधवी के घर में रात का भोजन मलयाली ढंग से तैयार हुआ था। नारियल के तेल की महक आ रही थी। कमरे में फैली चंदन-बत्ती की सुरभि, माधवी की वेणी में लगे बेले की खुशबू और फिर रसोई की सुगंध ने मिलकर विवाह-गृह का-सा वातावरण पैदा कर दिया था।

डाइनिंग टेबुल सादे किन्तु सुरुचिपूर्ण ढंग से सजी थी। माधवी की माँ ने यह कहकर दोनों को खाने की मेज़ पर बैठा दिया कि खाना वही परोसेंगी।

इधर माधवी की माँ परोस रही थीं और उधर मुत्तुकुमरन् आसपास टँगे चित्रों पर नज़र दौड़ा रहा था। एक चित्र ठीक वहाँ लगा था जहाँ आँख उठाते उसपर दृष्टि पड़े बिना नहीं रह सकती। उस चित्र में अभिनेता गोपाल और माधवी हँसते

हुए खड़े थे। यह किसी चल-चित्र का 'स्टिल' था। उसपर मुत्तुकुमरन् की नज़र को बार-बार जाते देखकर माधवी असमंजस में पड़ गयी। वह नाहक़ किसी सन्देह में नहीं पड़ जाए—इस विचार से माधवी ने कहा, "मणप्पेण् (वधू) नामक एक सामाजिक फ़िल्म में मैंने नायिका की सहेली की भूमिका की थी। यह उसी का एक दृश्य है, जिसमें गोपाल जी मुझसे मिलकर बात करते हैं।"

"अच्छा ! उस दिन इन्टरव्यू के दौरान मैंने यह समझा था कि तुममें और गोपाल में कोई परिचय नहीं है। सबकी तरह तुम भी नयी-नयी आयी हो ! तुम तो बताती रही कि तुम्हारे मद्रास आने पर, उनकी मदद से ही तुम तरक़्क़ी कर सकी।"

"नाटक-मंडली की अभिनेत्रियों की गोष्ठी में यद्यपि उन्होंने पहले ही मुझे चुनने का निर्णय कर लिया था, फिर भी नियमानुसार मुझे भी 'इण्टरव्यू' में सम्मिलित होने को कहा था। इसलिए मैं भी उस इन्टरव्यू में अपरिचित-सी बनकर शामिल हुई थी !"

"लेकिन सहसा मेरे पास आकर, बहुत दिनों की परिचित की तरह बड़े स्वाभाविक ढंग से बातें करती रही !"

उसने उत्तर बातों से नहीं, मुस्कुराहट से दिया।

भोजन बड़ा ही स्वादिष्ट और सुगंधित बना था। पुलिचेरि, एरिचेरि, चक्कै प्रथमन् (कटहल से बनी खीर), अवियल् आदि विशिष्ट मलयाली व्यंजन परोसे गये। बीच-बीच में माधवी कुछ कहती तो उत्तर देने के लिए मुत्तुकुमरन् सिर उठाता। सिर उठाते ही वह चित्र उसकी आँखों से जा टकराता। माधवी ने इसे ताड़ लिया।

उस एक चित्र के सिवा, बाक़ी सारे चित्र देवी-देवताओं के थे। गुरुवायूरप्पन, पळनि मुरुगन, वेंकटाचलपति आदि के चित्र थे। उनमें यही एक चित्र उसकी आँखों में खटकता था। माधवी ने उसके दो-तीन मिनट पहले ही भोजन समाप्त कर लिया। इसलिए उसकी अनुमति से हाथ धोने उठ गयी।

उसके बाद हाथ धोकर आनेवाले मुत्तुकुमरन् को उस अथिति-कक्ष में एक आश्चर्य देखने को मिला। वह चित्र, जिसमें गोपाल और माधवी हँसते हुए खड़े थे, वहाँ नज़र नहीं आया। मुत्तुकुमरन् ने अनुमान से जान लिया कि माधवी ने चित्र को वहाँ से हटा दिया है। वह बिना कुछ बोले, मन-ही-मन ख़ुश थी और मुस्कुराती खड़ी थी। मुत्तुकुमरन् ने पूछा, "उस चित्र को वहाँ से क्यों हटा दिया ?"

"लगा कि आपको पसन्द नहीं है। इसलिए।"

"मेरी हर पसन्द और नापसन्द का ख़्याल रखना कहाँ तक संभव है ?"

"संभव-असंभव की बात छोड़िए। मैं तो आपको नापसन्द आनेवाली चीज़ों से भरसक दूर रखना चाहती हूँ।"—वह फलों और पान-सुपारी से भरी तश्तरियाँ उसके आगे रखती हुई बोली। उसे लगा कि माधवी के अकूत प्रेम को सँजोने के

लिए उसका दिल बड़ा छोटा है। उसने देखा कि माधवी घड़ी-घड़ी उससे अकारण ही शर्मिन्दा हो रही है। वह चलने लगा तो माधवी उसे मांबळम तक पहुँचाने को तैयार हो गयी। पर उसने मना करते हुए कहा, "तुम आओगी तो फिर गोपाल की कार में ही लौटना होगा। ड्राइवर को नाहक़ दुबारा परेशान होना पड़ेगा!"

"आपको पहुँचाकर वापस आने से दिल को तसल्ली होगी!"

"रात के वक़्त तुम बेकार तकलीफ़ उठाओगी। सवेरे तो हम मिलने ही वाले हैं!"

"अच्छा तो फिर आपकी मरज़ी, मैं नहीं आती!"

मुत्तुकुमरन् ने माधवी की माँ से विदा ली। वह तो स्नेहमयी दृष्टि से देख रही थीं।

माधवी ने द्वार तक आकर विदा किया। रात के साढ़े नौ बज रहे थे। कार के रवाना होने के पहले, दरवाज़े की ओट में माधवी मुत्तुकुमरन् के कानों में फुसफुसायी—

"हमारे समुद्र-तट की सैर की बात वहाँ किसीसे मत कहियेगा।"

जानते हुए भी अनजान बनकर, मुत्तुकुमरन् ने पूछा, "वहाँ—माने कहाँ?"

उसके जवाब देने के पहले कार चल पड़ी।

मुत्तुकुमरन् को माधवी का उस तरह कहना पसन्द नहीं आया। गोपाल को मालूम हो भी गया तो क्या हो जायेगा? माधवी गोपाल से इतना क्यों डरती है? इस सवाल का जवाब उसी के मन ने दिया, 'बिना किसी कारण के, माधवी इतनी सावधानी नहीं बरतती। हाँ, गोपाल उसके जीवन का मार्ग-दर्शक रहा है। उसके प्रति आदर भाव और भय को ग़लत नहीं कहा जा सकता।'

तर्क-वितर्क के बावजूद, उसके मन को इसका समाधान नहीं मिला कि चलते समय, कानों में आकर इतनी घबराहट के साथ उन शब्दों को कहने की क्या ज़रूरत थी?

जब वह बँगले पर पहुँचा, तब गोपाल घर में नहीं था। मालूम हुआ कि वह अल्ज़ीरिया से आयी हुई किसी कला-मंडली का नृत्य देखने अण्णामलै मन्ड्रम गया हुआ है। मुत्तुकुमरन् को इतनी जल्दी नींद भी नहीं आयी। उसने सोचा कि कम-से-कम एक घंटा लिखकर सोने जाये।

लिखना शुरू करने से पहले, उसने जो कुछ लिख रखा था, एक बार पढ़ा। माधवी उसकी पांडुलिपि की टंकन-लिपि तैयार कर छोड़ गयी थी। इसलिए उसे पढ़ने में बड़ी सहूलियत हुई। उसकी शुरू से आदत थी कि पहले के लिखे हुए अंशों को बार-बार पढ़े और तब आगे के अंश लिखे।

वह लिखते हुए यह सोचता हुआ लिख रहा था कि अण्णामलै मन्ड्रम से लौटने पर गोपाल उसे फ़ोन पर बुला भी सकता है। लेकिन लिखकर सोने जाने तक पता

नहीं चला कि गोपाल लौटा कि नहीं।

सवेरे उठकर मुत्तुकुमरन् कॉफ़ी पी रहा था कि गोपाल वहाँ आया।

"कहो, उस्ताद ! सुना कि कल शाम को बहुत घूम-फिर कर आये ! एलियड्स बीच, फिर दावत ! एकाएक एकदम व्यस्त···।"

गोपाल के बोलने के तरीक़े और हँसने के ढंग में तनिक व्यंग्य नज़र आया तो मुत्तुकुमरन् एक-दो क्षण के लिए बिना कोई उत्तर दिये चुप रहा !

"तुम्हीं से पूछ रहा हूँ ! माधवी से घंटों बातें कर सकते हो, पर मेरे साथ बोलने का मन नहीं करता क्या ? जवाब क्यों नहीं देते ?"

इस दूसरे सवाल में मुत्तुकुमरन् को और भी तीखा व्यंग्य नज़र आया। उसके सवाल में यह ध्वनि सुन पड़ी कि बिना कहे और बिना पूछे तुम लोगों को बाहर घूमने जाने की हिम्मत कहाँ से आयी ?

आगे चुप्पी साधना उचित नहीं, इस नतीजे पर पहुँचकर मुत्तुकुमरन् ने कहा, "किसने कहा तुम्हें ? यों ही ज़रा बाहर घूम आने का जी किया तो हो आये, बस !"

बात यहीं पूरी नहीं हुई, वह जारी रही।

"सो तो ठीक है ! तुम्हारे या माधवी के न कहने से मुझे पता नहीं चलता— यही सोचा था न तुमने ?"

"पता चल भी गया तो फिर अब क्या करोगे ? सिर उड़ा दोगे ?"

"ऐसा करूँ तो मेरे सिर पर बन आयेगी !"

यद्यपि दोनों ऊपर से खेल-तमाशे की बात कर रहे थे, पर दोनों के दिल में कोई चीज़ रड़क रही थी, काँटे की तरह, जिसे दिल की दिल ही में रखकर दोनों नाज़-नखरे से काम ले रहे थे।

मुत्तुकुमरन् के विचार से गोपाल ने अण्णामलै मन्ड्रम से रात को लौटने पर या सवेरे उठने पर ड्राइवर से पूछकर यह सब जान लिया होगा। फिर भी गोपाल के मुँह से उसने यह जानने का प्रयत्न नहीं किया कि उसने यह कैसे जाना ?

गोपाल ने बात बदलते हुए पूछा, "नाटक किस स्थिति में है और कितने पन्ने लिखे जा चुके हैं !"

बिना कोई उत्तर दिये, मुत्तुकुमरन् ने मेज़ की ओर इशारा किया, जिस पर उसकी पांडुलिपि और माधवी की टंकित लिपि रखी हुई थी। गोपाल उठाकर इधर-उधर से पढ़ने लगा। पढ़ते हुए बीच-बीच में वह अपनी राय भी देने लगा।

"लगता है नाटक के मंचन में काफ़ी खर्च करना पड़ेगा। दरबार आदि के अनेक दृश्य बनाने होंगे। अभी से शुरू करें, तभी ये सब वक़्त पर पूरे होंगे। 'कास्ट्यूम्स्' का खर्च, अलग से होगा।"

मुत्तुकुमरन् ने उसकी राय काटने या मानने की कोशिश नहीं की। बस,

चुपचाप सुनता रहा।

थोड़ी देर बातें करके गोपाल चला गया। बातों के बीच गोपाल ने नाटक की तारीफ़ करते हुए कहा था कि शुरू सचमुच ही बढ़िया और सुन्दर बना है। मुत्तुकुमरन् को उसकी तारीफ़ गहरी नहीं, सतही लगी।

उस समय उसके दिल को कोई दूसरा विषय कुरेद रहा था। 'अपने घर आकर ठहरे हुए मेहमान के विषय में, अपने यहाँ पगार पानेवाले कार ड्राइवर से यह पूछने वाला मालिक, कि वे कहाँ जाते हैं, क्या करते हैं, किससे मिलते हैं और क्या बात करते हैं, कितना संस्कारी होगा?' ऐसी पूछ-ताछ का शिकार बननेवाले मेहमान के प्रति ड्राइवर क्या आदर भाव दिखायेगा? उसके दिल में ऐसे ही विचार दौड़ रहे थे।' हो सकता है कि गोपाल ने रात को या सवेरे माधवी ही को फ़ोन कर पूछ लिया होगा।" यह विचार तो आया। लेकिन फिर लौट गया कि यह सम्भव नहीं है। क्योंकि माधवी ने स्वयं इस विषय में मुत्तुकुमरन् को आगाह कर भेजा था। इस सूरत में गोपाल के सवालों का उत्तर उसने टाल-मटोल करते ही दिया होगा।

गोपाल एकाएक मुत्तुकुमरन् के लिए कोई अनबूझ पहेली हो गया था।

मुझे अपने ख़र्चों के लिए कोई कष्ट न हो—इस उद्देश्य से हज़ार रुपये भेजनेवाला दोस्त एक छोटी-सी बात के लिए इतने रूखे व्यवहार पर क्यों उतर आया है? मुझे बाहर घूमने जाने का, या माधवी को मुझे अपने घर खाने को बुलाने का अधिकार नहीं है क्या? इसके लिए यह क्यों इतना उद्विग्न हो उठा है? इतनी तूल क्यों देता है? शायद इसे यह वहम हो गया है कि माधवी ने मुझसे ऐसी कुछ बातें कही होंगी, जिन्हें अपने विषय में वह रहस्य समझता हो। क्या उस सन्देह का आमने-सामने निराकरण न कर पाने की वजह से ही वह इस तरह घुमा-फिराकर पूछ रहा है?—इस तरह मुत्तुकुमरन् के दिल में विचारों पर विचार उठ रहे थे।

सुबह का नाश्ता आने के पहले नहा-धो लेने के विचार से वह स्नानागार में घुसा। ब्रश करते, नहाते, शरीर पर साबुन लगाते, गोपाल के सवालों ने उसका साथ नहीं छोड़ा।

'शॅवर' बंदकर, शरीर पोंछकर, बाथरूम से ड्रेसिंग रूम में आया तो कमरे के बाहर उसे टंकनध्वनि और चूड़ियों की झनकार सुनायी दी। उसने समझ लिया कि माधवी आ गयी है। उसके आने की राह देखे बिना और उसके लिए ठहरे बिना, आते ही माधवी ने टाइप करना शुरू कर दिया तो उसे लगा कि दाल में कुछ काला ज़रूर है।

कपड़े बदलकर वह बाहर आया तो उसने देखा कि माधवी गुमसुम बैठी है। उसके बाहर आने पर उसने टाइप करना बंद नहीं किया, न ही कुछ बोली। चुपचाप टाइप किये जा रही थी।

मुत्तुकुमरन् समझ गया कि गोपाल ने माधवी से भी बातें की हैं। अन्यथा माधवी में यह कृत्रिम गंभीरता नहीं आती। पास जाकर उसके टाइप किये हुए काग़ज़ उसने उठाये। तब भी बिना बोले माधवी टाइप करने में लगी रही।

"माधवी ! नाराज़ हो क्या ? कुछ बोलती क्यों नहीं ! क्या आज मौन व्रत है ?" माधवी का मौन-भंग करने के लिए उसने बात छेड़ी।

टाइप करना बंदकर वह उसकी ओर मुड़ी और जैसे अचानक फट पड़ी, "मैंने आपको कितना आगाह किया था, लेकिन आपने सारी बातें गोपालजी से कह दीं। यह मुझे क़तई पसन्द नहीं है !"

माधवी के संदेह और क्रोध का कारण अब मुत्तुकुमरन् की समझ में आ गया। पर उसका एक काम पसन्द नहीं आया। उसने कितनी जल्दी उसके बारे में अपनी धारणा बदल ली और सारी बातें उगल दीं। गुस्से में उसकी भौंहें तन गयीं और आँखें लाल हो गयीं !

सात

मुत्तुकुमरन् के विचार यही था कि स्त्रियों की बुद्धि पीठ-पीछे होती है। आखिर उसके विषय में माधवी के मन में संदेह क्यों उठा ? इसका कारण एक हद तक वह जानता था। उसके मन में आया कि अपने प्रत्युत्तर से करारी चोट करे।

"तुम जैसे कायरों का काम है यह। मैं क्यों ऐसा करूँगा ?"

माधवी ने कोई जवाब नहीं दिया। उसकी उँगलियों ने टाइप करना बंद कर दिया। वह चुपचाप सिर झुकाये वैसी ही बैठी रही। उसकी ओर आँख उठाकर भी नहीं देखा। जब वह उसका मौन बर्दाश्त नहीं कर पाया तो तनिक ठंडा होकर बोला, "बताओ तो सही कि क्या हुआ ?"

माधवी ने कहा, "अभी आप ने जो कुछ कहा, उसे दुहराइये तो सुनूँ !"

"मैंने क्या कहा ? कुछ ग़लत तो नहीं कहा !"

"बात क्यों छिपाते हैं ? क्या आपने यह नहीं कहा कि तुम जैसे कायरों का काम है वह !"

"हाँ ! कल रात को तुम्हारे घर से चलले हुए मेरे कानों में तुमने जो कुछ कहा, वह मुझे क़तई पसन्द नहीं है।"

"मैंने क्या बुरा कह दिया ?"

"तुमने किसी के डर के मारे ही कहा था न कि समुद्र-तट की सैर की बात वहाँ न कहिएगा !"

"डर और सावधानी में फ़र्क़ होता है !"

"तुम इन दोनों का फ़र्क़ मुझे समझा रही हो ?"

"जल्दबाज़ों और तुनुकमिजाज़ों को कितना भी समझाओ वे समझेंगे नहीं !"

मुत्तुकुमरन् बातचीत के इस रूखे दौर से उकताकर बोला, "बात-बात पर झगड़नेवाले बूढ़े मियाँ-बीवी की तरह हम कब तक लड़ते रहेंगे ?"

यह उदाहरण सुनकर माधवी का गुस्सा क़ाफ़ूर हो गया और वह खिलखिलाकर हँस पड़ी। मुत्तुकुमरन् कुर्सी पर बैठी उसके कंधों पर हाथ रखकर झुकने को हुआ तो माधवी बोली, "चुप भी रहिए, जनाब ! काम करनेवालों से खिलवाड़ ठीक नहीं !"

"यह भी तो काम ही है !"

"पर गोपाल जी ने इस काम के लिए हमें यहाँ नहीं बिठाया ! फटाफट लिखिये ! नाटक जल्दी तैयार करना है। नाटक के प्रथम मंचन में अध्यक्षता के लिए मिनिस्टर से 'डेट' ले लिया गया है !"

"इसके लिए मैं क्या करूँ ?"

"यही कि जल्दी लिख डालिए। बाद में अध्यक्षता करने के लिए मंत्री जी नहीं मिलेंगे !"

"इतनी जल्दी ही पड़ी थी तो मंत्री जी से ही नाटक लिखवा लेना चाहिए था।"

"नहीं ! बात यह है कि आज सवेरे आते ही उन्होंने कहा कि इधर-उधर घूमना छोड़कर पहले नाटक लिखवा लो। मंत्री महोदय से अध्यक्षता करने के लिए 'डेट' ले लिया है !"

"ओहो ! तुम यह समझकर मुझ पर नाराज़ हुई होगी कि 'बीच' पर जाने की बात मैंने ही गोपाल को बतायी होगी ! आज सुबह उठते ही वह मेरे पास आया और हमारे 'बीच' पर हो आने की बात छेड़ी तो मैंने क्या समझा, मालूम ? मेरा शक तो तुम्हीं पर गया कि तुम्हीं ने गोपाल को फ़ोन किया होगा। असल में उसने ड्राइवर से पूछ-ताछ कर यह सब मालूम किया है।"

"वे बातें जाने दीजिए। अपना काम कीजिये !"

"जाने कैसे दूँ ? वह भी इतनी आसानी से ? जबकि बात यहाँ तक बढ़ चुकी है।"

"बाद में हम अकेले में बैठकर इन बातों पर विचार करेंगे। अब 'जिल-जिल' के संपादक कनियळकन् के साथ गोपाल बाबू यहाँ आने वाले हैं। हम सब नाटक के लिए दृश्यावली चुनने के लिए आर्टिस्ट अंगप्पन के यहाँ जा रहे हैं ?"

"गोपाल तुमसे कह गया है क्या ?"

"हाँ, अभी थोड़ी देर में वह जिल-जिल के साथ आयेंगे !"

"यह जिल-जिल कौन है ? बरफ़ की कोई 'फ़ैक्टरी' चलाता है क्या ?"

"नहीं ! 'जिल-जिल' नाम से फ़िल्मी पत्रिका निकालते हैं। अंगप्पन के बड़े दोस्त हैं !"

"और हमारे गोपाल इन दोनों के बड़े दोस्त हैं ! यही न ?"

"हाँ ! गोपाल के इशारे पर कितने ही स्टूडियो वाले बढ़िया सीन और सेटिंग तैयार कर देने को तैयार हैं। उन सबको छोड़कर ये अंगप्पन के हाथ सिर दे रहे हैं। वह इन्हें बढ़ा चढ़ाकर तंग कर छोड़ेगा।"

"वह जाये तो जाये ! हमें जाने की क्या ज़रूरत है ?"

"···हो न हो, हमें गोपाल बाबू नहीं छोड़ेंगे। साथ लेकर ही जाएँगे !"

"मेरे ख़याल में तो हम दोनों को जाने की कोई ज़रूरत नहीं ! तुम्हारा क्या ख़याल है ?"

"वह कुछ अच्छा नहीं होगा ! कल की बात पर ही वे जल-भुन रहे हैं ! आज हम दोनों जाने से इनकार करें तो यह ज़ख्म पर नमक छिड़कनेवाली बात हो जाएगी। इसलिए आपको भी जाना ही चाहिए। अगर आप हठ करेंगे तो भी मुझे जाना ही पड़ेगा। नाहक़ मनमुटाव क्यों बढ़ाएँ ?"

"मगर मैं तुम्हें रोकूँगा तो क्या करोगी ?"

"समझदार होंगे तो नहीं रोकेंगे !"

"तो क्या मुझे नासमझ समझती हो ?"

"नहीं ! मैं आपकी हर बात मानने को तैयार हूँ और इस बात पर भी विश्वास करती हूँ कि मुझ पर दबाव डालते हुए मुझे मना नहीं करेंगे और मेरे प्रेम को कसौटी पर नहीं कसेंगे।"

"अच्छा ! फिर तो मैं चलता हूँ। जिल-जिल और अंगप्पन को मुझे भी देखना चाहिए न ?" मुत्तुकुमरन् ने उसका मन न दुखाने के विचार से मान लिया तो माधवी ऐसी खुश हुई, मानो अपने आराध्य देवता से कोई अभीप्सित वर पा लिया हो !

"आपकी उदारता पर मुझे बड़ा गर्व होता है !"

"मेरी प्रतिभा किसी के आगे नहीं झुकती ! पर तुम्हारे आगे···?" कहते-कहते उसके होंठों पर मुस्कान खेल गयी।

इसी समय गोपाल 'जिल-जिल' कनियळकन् के साथ वहाँ आया और उसका परिचय कराते हुए बोला, "आप हैं 'जिल जिल' के सम्पादक कनियळकु और आप हैं मुत्तुकुमरन्, मेरे बड़े प्यारे दोस्त ! हमारे लिए एक नया नाटक लिख रहे हैं।"

"दिसंबर का महीना, सरदी का मौसम ! तिसपर जिल-जिल साहब दिल को ठंडक पहुँचाने पधारे हुए हैं। शायद इसीलिए तन-मन ठिठुर रहा है !" मुत्तुकुमरन् के मुख से यह ताना सुनकर माधवी होंठों ही होंठों में मुस्करा पड़ी।

"मुत्तुकुमरन् साहब तो बड़े विनोदी हैं ! बात-बात में हास्य का रस फूटता

है !" जिल-जिल कुछ इस तरह आश्चर्य करने लगा, मानो हास्य पर प्रतिबंध लगे हुए किसी टापू से आ रहा हो।

जिल-जिल के तन पर धोती और कुरता कुछ इस तरह शोभायमान थे, मानो वे शरीर पर नहीं, 'हैंगर' पर लटक रहे हो। हाँ, वह बड़ा दुबला-पतला था। होंठों पर पान की लाली, उँगलियों में सुलगती सिगरेट, हाथों में उससे कहीं भारी चमड़े का बैग लिये और हल्की-सी कूबड़ के साथ वह इस तरह खड़ा था—जैसे कोई प्रश्न-चिह्न !

"इसने कुरता पहना है या कुरते ने इसे पहना है ?" मुत्तुकुमरन् ने माधवी के कानों में कहा तो वह अपनी हँसी नहीं रोक सकी।

"उस्ताद कौन-सा पटाखा छोड़ रहे हैं ? हमें भी तो मालूम हो !"

गोपाल ने पूछा तो माधवी ने किसी नाटक के हास्य की बात उठाकर बात टाल दी।

"कल आपसे मुलाकात कर मैं 'जिल-जिल' में एक भेंट-वार्ता छापना चाहता हूँ। गोपाल साहब बता रहे थे कि आप बड़े 'जीनियस' हैं।" जिल-जिल ने मुत्तुकुमरन् की खुशामद करनी शुरू कर दी।

थोड़ी देर बाद वे चारों आर्टिस्ट अंगप्पन से मिलने चल पड़े।

अंगप्पन की चित्रशाला चितातिरिपेट्टै में पुराने ढंग के एक मकान में थी। उसके मातहत चार-पाँच नौसिखुवे काम कर रहे थे। मकान की दीवारों पर सूई भर भी ऐसी जगह नहीं बची थी, जहाँ रंग के धब्बे न लगे हों।

भीड़ से बचने के लिए कार को उस मकान से सटकर खड़ा किया गया और चारों उतरकर अंदर चले आये।

"देखा, अंगप्पन ! तुम्हारे द्वार पर कितना बड़ा मशहूर 'ऐक्टर' लिवा लाया। हमारे तमिल के महाकवि कँवर ने मावंडूर चिंगन के बारे में एक कविता लिखी है कि उसके लोहारखाने में आकर त्रिमूर्ति तपस्या करते हैं कि वह एक अच्छी-सी कलम बना दे ताकि कोई महान् कवि उनकी स्तुति में कालजयी स्तोत्र रच दे। वैसे ही तुम पर भी यह लागू हो सकता है। आज ऐसे ही बड़े-बड़े आदमी तुम्हारे द्वार पर आये हैं।"

जिल-जिल की इन बातों से लगा कि उन दोनों में कितनी घनिष्ठता है !

कानों में खोंसी हुई पेंसिल से खेलते हुए अंगप्पन ने उनका स्वागत किया। उसके स्वागत-भाषण में बीते जमाने की कन्हैया कंपनी के—स्वर्ण युग के—रंगीन सुन्दर दृश्यबंधों से लेकर, चितातिरिपेट्टै में मिलती रही सस्ती 'काफ़ी' की तस्वीरें तक उभर आयी थीं।

"उन दिनों रामानुजुलु नायुडु की कंपनी में बलराम अय्यर नाम के एक सज्जन थे, जो स्त्री की भूमिका निबाहा करते थे। स्त्री वेश में तो वह हू-ब-हू इन देवी की

तरह नज़र आते। उनकी बोली में कोयल कूकती और हँसी में मोती झरते।" अचानक अंगप्पन ने माधवी की प्रशंसा में बेतुकी तुक जोड़ी।

"हमारे गोपाल साहब भी मदुरै के एक बड़ी बायूस कंपनी में पहले स्त्री की भूमिका ही किया करते थे!" जिल-जिल ने अपने हिस्से की तुकबंदी में भी कोई क़सर नहीं रखी।

गोपाल को उसकी इस बात से रस नहीं आया, उल्टा गुस्सा ही आया। अपने उस गुस्से पर हास्य पोतते हुए उसने कहा, "लगता है कि जिल-जिल साहब सब कुछ भूल जाएँगे; पर मेरा स्त्री-पार्ट उन्हें नहीं भूलेंगे! अजी, तुम्हारा दिल हमेशा स्त्रियों पर ही क्यों मँडराता रहा है?"

माधवी और मुत्तुकुमरन् एक-दूसरे को देखकर मन-ही-मन मुस्कराये।

"मुत्तुकुमरन् साहब मशहूर कविराज की परंपरा के एक बड़े कवि हैं। अब हमारे गोपाल साहब की कंपनी के लिए नाटक लिख रहे हैं। गीत-रचना में भी बड़े निपुण हैं!" जिल-जिल की करुणा की धारा मुत्तुकुमरन् पर बहने लगी तो अंगप्पन ने बात का एक छोर पकड़ लिया—"आहा! वह ज़माना अब कहाँ से लौटेगा भला! जब किट्टप्पा मंच पर आकर 'कायात कानकम्' (पुराने समय का गाना)गानें लगते तो सारी सभा झूम उठती। हाय, कैसा गला पाया था उन्होंने! वह ज़माना ही दूसरा था!"

जिल-जिल ने जो कुछ कहा था, उसका ग़लत अर्थ निकालकर, गायक और गीतकार का फ़र्क़ न जानते हुए, अंगप्पन ने किट्टप्पा की तारीफ़ करनी शुरू कर दी थी। विवश होकर मुत्तुकुमरन् को उसकी बकवास सुननी पड़ी!

बात काटकर गोपाल ने अपनी ज़रूरत के दरबार, नंदन वन, राजवीथि और राजमहल जैसे दृश्यबन्धों की बात चलायी तो अंगप्पन ने अपने पास पहले ही से तैयार कुछ नये 'सीन' दिखाने शुरू किये।

गोपल ने मुत्तुकुमरन् से पूछा कि हमें कैसे-कैसे दृश्यों की ज़रूरत पड़ेगी? पर उसके उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही वह अंगप्पन और जिल-जिल से इस बात में लग गया कि हमें अमुक-अमुक दृश्यों की ज़रूरत पड़ेगी।

मुत्तुकुमरन् को उसका यह बर्ताव पसंद नहीं आया। लेकिन वह चुप्पी साधे रहा। दस मिनट के बाद, गोपाल ने मुत्तुकुमरन् की सलाह दोबारा चाही तो वह बोला, "जो-जो सीन तुम खरीदोगे, उसके अनुसार ही कहानी गढ़ लें तो बड़ा अच्छा रहेगा!"

उसकी बातों के पीछे जो तीखा व्यंग्य था, उसे समझे बिना गोपाल बोला, "हाँ, कभी-कभी ऐसा भी करना पड़ जाता है!"

मुत्तुकुमरन् को गुस्सा आया। पर उसे पीकर वह चुप रह गया।

गोपाल की बड़ाई करते हुए जिल-जिल ने अंगप्पन से कहा, "अंगप्पन, तुम्हें

मालूम हो या न हो, हमारे गोपाल साहब के इशारे पर कितने ही स्टूडियो वाले 'सीन-सेटिंग' तैयार कर उनके दरवाज़े पर भिजवा देंगे। लेकिन हमारे गोपाल बाबू बायस्कोप कंपनी में काम कर चुके हैं। इसलिए चाहते हैं कि तुम जैसे नाटक-कंपनियों के लिए सीन-सेटिंग तैयार करनेवालों से ही दृश्य खरीदें।"

"हाँ-हाँ, खुशी से खरीदें ! मेरा भी नाम होगा। साथ ही, महालक्ष्मी-सी देवी जी आयी हैं। उनकी कृपा से लक्ष्मीजी की कृपा हम पर बरसेगी !" अंगप्पन बिला वजह माधवी की तारीफ़ में लगा रहा।

"इसकी आँखों में तुम्हें छोड़कर और कोई नहीं गड़ा।" मुत्तुकुमरन् ने माधवी के कानों में कहा।

थोड़ी देर में अंगप्पन के पास जितने नये-पुराने 'सीन' थे, सब देख लिये गये। सौदे की बात चली। अंगप्पन ने आये हुए अभिनेता की माली हालत और मर्यादा को मद्दे-नज़र रखकर भाव बताया। जैसे महल के 'सीन' का मूल्य महल के मूल्य से अधिक बताया, वैसे ही अन्य सीनों के भी दाम ऊँचे बताये।

गोपाल सोच में पड़कर बोला, "मेरे ख्याल में हम इस दाम में नये सीन 'ऑर्डर' देकर बनवा सकते हैं।"

"आपकी मर्ज़ी ! उसके लिए भी मैं तैयार हूँ !" गोपाल की योजना स्वीकार करते हुए अंगप्पन ने कहा।

नये सीन बनवाने के बारे में फिर से सौदेबाज़ी हुई। नये सीन बनवाने के लिए अंगप्पन ने जितना समय चाहा, वह गोपाल को मंजूर नहीं था। अतः एक बार फिर उन्हीं बने-बनाये दृश्यों पर मोल-तोल हुआ। जिल-जिल ने दोनों ओर की वकालत कर किसी तरह सौदा तय किया।

उन्हें वहाँ से चलते हुए दोपहर हो गयी थी। एक बज चुका था। जिल-जिल ने उस दिन गोपाल के साथ गोपाल के यहाँ खाना खाया। 'डाइनिंग टेबुल' पर गोपाल, जिल-जिल और मुत्तुकुमरन् बैठे तो खाना परोसने को रसोइया आगे बढ़ा। उसे मना करके गोपाल ने माधवी को आदेश दिया कि भोजन वह परोसे।

मुत्तुकुमरन् को यह बात नहीं भायी। उसने चाहा कि माधवी उसके इस आदेश को नकार दे। मुत्तुकुमरन् ने देखा कि गोपाल अधिकार-लिप्सा में अन्धा होकर एक औरत से क्या-क्या काम करा रहा है ! उसी से नायिका की भूमिका, गाना गवाना, टाइप कराना और अब खाना परोसवाना भी—यह अन्धेर नहीं तो क्या है ?

मुत्तुकुमरन् ने जैसा चाहा, माधवी वैसा इनकार नहीं कर सकी। वह उत्साह के साथ खाना परोसने लग गयी। माधवी की यह ताबेदारी मुत्तुकुमरन् को गवारा नहीं हुई। उसका चेहरा उतर गया। जैसे उसकी हँसी उड़ गयी। माधवी ने खाना परोसते हुए मुत्तुकुमरन् का यह मनोभाव पढ़ लिया।

गोपाल और जिल-जिल अट्टहास करते हुए खा रहे थे। मुत्तुकुमरन् गुमसुम बैठा खा रहा था। उसका मौन देखकर जिल-जिल ने गोपाल से पूछा, "मुत्तुकुमरन् साहब, हमारी बातों में शामिल क्यों नहीं होते ?"

"वह शायद किसी कल्पना-लोक में उड़ रहे होंगे !"—गोपाल ने कहा।

उन दोनों को अपने बारे में बोलते हुए देखकर भी मुत्तुकुमरन् ने मुँह नहीं खोला।

गोपाल ने हाथ धोने के लिए 'वाश बेसिन' तक हो आने की ज़रूरत को परे रखकर जैसे सुस्ताते हुए यह आदेश दिया कि एक मटका पानी लाओ। मुत्तुकुमरन् ने समझा कि नायर छोकरा पानी लायेगा। पर यह क्या ? लाल रंग के एक प्लास्टिक बरतन में हाथ धोने के लिए स्वयं माधवी पानी ले आयी थी। वह डाइनिंग टेबुल के पास आकर हाथ में पानी लिये खड़ी हुई और गोपाल वहीं बैठे-बैठे बरतन में ही हाथ धोने लगा। मुत्तुकुमरन् का मन क्षोभ से भर गया।

यह ख़ातिरदारी अपने तक सीमित न रखकर गोपाल ने जिल-जिल और मुत्तुकुमरन् से कहा, "आप लोग भी इसी तरह धो डालिये।" जिल-जिल ने इनकार कर दिया। मुत्तुकुमरन् यह कहते हुए उठा कि मुझमें वाश-बेसिन तक जाने की शक्ति अब भी है !

गोपाल के अभिमान को देखकर मुत्तुकुमरन् क्रोध और क्षोभ से भर गया था।

भोजन के थोड़ी देर बाद, गोपाल और जिल-जिल चल पड़े। जाते हुए जिल-जिल कहता हुआ गया, "एक दिन आपसे मुलाक़ात के लिए फिर आऊँगा !"

मुत्तुकुमरन् ने मुँह खोलकर कुछ नहीं कहा। सिर हिलाकर विदा कर दिया। फिर आउट हाउस में जाकर अपने काम में डूब जाना चाहा। माधवी अभी नहीं आयी थी। उसे लगा कि भोजन करके आने में कोई आधा घण्टा लगेगा। उसकी प्रतीक्षा में मुत्तुकुमरन् लिखने का कोई काम कर नहीं पाया।

यह सोचते-सोचते कि माधवी में यह दास-बुद्धि कहाँ से आयी ? उसकी सहनशक्ति जवाब दे गयी। माधवी तो उसके लिए प्राणों से भी प्यारी थी ! ग़ुलामों की तरह वह दूसरों की सेवा करे, यह उसे गवारा नहीं हुआ।

गोपाल को तो चाहिए था कि माधवी को साथ बिठाकर खिलाये ! पर उसने यह क्या किया ? उसने उसे अपना हुक्म बजाने को बाध्य किया था ! उसकी इस महत्त्वाकांक्षा से उसे चिढ़ हो गयी। उसने सपने में भी नहीं सोचा था कि गोपाल इतना क्रूर और निर्दयी निकलेगा। वह इन विचारों में लगा हुआ था कि माधवी एक हाथ में चाँदी की तश्तरी में पान-सुपारी और दूसरे में फलों की तश्तरी लिये हुए आयी।

"आपके लिए पान-सुपारी लाने अन्दर गयी थी ! तब तक आप चल पड़े थे !"

"जूठे बरतन उठाने वाले हाथ पान-सुपारी लायें तो मैं कैसे ग्रहण करूँ ?"

"लगता है कि आप मुझपर नाराज़ हैं ! मैंने खाते हुए ही देख लिया था !"

"नाराज़ न होऊँ तो क्या करूँ ? तुम तो गोपाल से बहुत डरती हो !"

"आप मेरी स्थिति में होते तो क्या करते ? पहले सोचिए फिर बताइयेगा।"

"वह घमंड में चूर है तो चूर रहे ! मैं पूछता हूँ, तुम क्यों इतना दबती हो ? खाना परोसना तो एक बात हुई ! पर जूठे बरतन क्यों उठा लायी ?"

"मैं इस स्थिति में क्या कर सकती हूँ ?"

"कुछ नहीं कर सकती हो तो डूब मरो ! गुलाम ही दुनिया में नरक का सृजन करते हैं !"

"सच पूछिये तो मैंने अपने दिल को एक ही व्यक्ति का गुलाम बनाया है। वह भी मुझ पर गुस्सा उतारे तो मैं क्या करूँ ?"

"तुमने जिस पर अपना दिल निछावर किया है, तुम्हें चाहिए कि ऐसा काम करो, जिससे उसका सिर ऊँचा हो। न कि तुम्हारे कामों से उसका सिर नीचा हो ! पर तुम्हारे काम ऐसे कहाँ हैं ?"

माधवी की ओर से कोई उत्तर नहीं मिला तो मुत्तुकुमरन् ने आँख उठाकर देखा।

माधवी की सुन्दर आँखें छलछला आयी थीं।

"तुम्हें कहने से कोई फ़ायदा नहीं ! उस बदमाश के कान उमेठकर पूछना चाहिए कि नृत्य और गायन तो अनूठी कलाएँ हैं। उनमें पगे-लगे हाथों से तुमने जूठे बरतन कैसे उठवाये ? तुम्हारा सत्यानाश होगा ! तुम देख लेना एक दिन उसके मुँह के सामने पूछता हूँ कि नहीं ?"

मुत्तुकुमरन् जोश में भरकर चीखने को हुआ तो माधवी की मुलायम उँगलियों ने उसका मुँह बन्द कर दिया।

"दया करके ऐसा कुछ न कीजियेगा। मुझे गौरव प्रदान करने के प्रयास में, आपको अपना गौरव नहीं खोना चाहिए !" माधवी ने सिसकी भरी विनती की।

मुत्तुकुमरन् ने सिर उठाकर देखा। माधवी के नेत्रों से मोती ढुलक रहे थे।

आठ

माधवी की विनती मानकर मुत्तुकुमरन् ने उसके बारे में गोपाल से कुछ नहीं पूछा। पहले तो उसने मन में ठान लिया था कि गोपाल को आड़े हाथों ले और कह दे कि माधवी के हाथों खाना परोसवाना और जूठे बरतन उठवाना मुझे क़तई पसन्द नहीं। पर माधवी की मिन्नतों ने उसे ऐसा करने से रोक दिया।

"मेरा तो उनसे बहुत दिनों का परिचय है। आप तो अभी नये-नये आये हैं, आप उनके लाख लँगोटिया यार ही क्यों न हों। मेरे साथ उनके बरताव का आप खंडन करने जायेंगे तो न जाने क्या फल निकलेगा! सो वह ख्याल छोड़ दीजिए!"

मुत्तुकुमरन् माधवी की इन बातों का आशय समझते हुए इस निर्णय पर पहुँचा कि माधवी के खाना परोसने और जूठे बरतन उठाने की बात की तह में जाने से माधवी के जीवन में खलल पड़ा। अतः अपने इन विचारों से उसने अपना हाथ खींच लिया।

इसके अलावा अब वह धीरे-धीरे गोपाल को समझ पा रहा था। मद्रास आने पर पहले दिन की मुलाक़ात में उसने गोपाल को उदारमना पाया था। पर वह निर्णय अब ग़लत निकल रहा था। बाहर से देखने पर गोपाल दरियादिल लगता था। पर अन्दर से तो दिल का खोटा, कपटी और घमंडी दीख पड़ रहा था।

मद्रास जैसे बड़े शहरों में रहनेवाले लोगों को बाहर से आनेवाला औसत दर्ज़े का आदमी प्रथम दर्शन में उदारचेता पाता है। पर देखते-देखते उसकी धारणा मिथ्या हो जाती है। उनके सौहार्द, करुणा और प्रेम के मूल में जो कारण छिपे हैं जब उनका पता लगता है तो अपने अनुमान और निर्णय पर उसे पछताना पड़ता है।

गोपाल के बारे में अब मुत्तुकुमरन् की यही दशा हो गयी।

यद्यपि शहर के अभिजात समाज की सड़कें सुन्दर और सजी हुई दिखायी दे रही थीं, फिर भी उन सड़कों में, और उन सड़कों पर स्थित घरों में कुशल अवसरवादी, हिंस्र पशु जैसे क्रूर व्यक्ति, असहाय और इन्साफ़ चाहने वाले नेक चलन लोग भी विवेक-हीन दृष्टि और विषम बल लेकर आपस में निरंतर लड़ते-भिड़ते-से उसे नज़र आये।

चिन्तातिरिपेट्टै में अंगप्पन की चित्रशाला से दृश्यबन्ध वगैरह चुनकर लौटने के बाद से, गोपाल से हिलने-मिलने और बातचीत से दूर रहने का एक सुअवसर स्वयं मुत्तुकुमरन् के हाथ लगा।

दूसरे ही दिन, किसी फ़िल्म के बाह्य दृश्यांकन के सिलसिले में गोपाल को वायुयान से अपनी मंडली के साथ, कश्मीर के लिए रवाना होना पड़ा। जाते हुए वह मुत्तुकुमरन् और माधवी से कह गया कि मुझे लौटने में दो हफ़्ते लगेंगे। उसके पहले नाटक पूरा हो जाय और रिहर्सल के लिए तैयार रखा जाए तो अच्छा हो।

अतः मुत्तुकुमरन् समुद्र-तट या कहीं बाहर जाना छोड़कर नाटक का आलेख पूरा करने में पूरी तरह से जुट गया। माधवी भी उसकी पांडुलिपि की टंकित प्रति निकालने में अधिक ध्यान देने लगी। उन दिनों में मुत्तुकुमरन् काफ़ी रात गये जाग-जागकर भी नाटक लिखता रहा। वह रात को जो कुछ लिखता, उसे भी माधवी दिन में ही टाइप करती। अतः उसका काम दुहरा हो गया। इस तरह दस-बारह दिन न जाने कैसे बीत गये!

कश्मीर जाने के बारहवें दिन गोपाल के पास से मुत्तुकुमरन् के नाम पत्र आया, जिसमें उसने पूछा था कि नाटक की प्रगति कहाँ तक हुई है ? उस दिन मुत्तुकुमरन् नाटक के अंतिम चरण में था। इस दृश्य में एक सामूहिक गान का आयोजन था। दूसरे दिन सवेरे, जहाँ तक मुत्तुकुमरन् का सम्बन्ध है, नाटक पूरा तैयार हो गया था। सिर्फ़ माधवी का टाइप करना भर बाक़ी रह गया था। वह भी इतना ही कि सवेरे बैठती तो दोपहर को पूरा हो जाता।

टाइप करने के लिए जब माधवी आयी, तब मुत्तुकुमरन् बाल बनवाने के लिए सैलून जाने के उपक्रम में था। मद्रास आने के एक महीने पहले से ही उसके बाल बढ़े हुए थे। इसलिए उस दिन उस काम से निवृत्त होने को उसने ठान लिया था। जाते हुए वह माधवी से कह गया कि मेरे वापस आने तक तुम्हारे लिए टाइप करने का काम पड़ा है। तुम्हारे टाइप करने के पहले ही शायद मैं आ जाऊँगा।

गोपाल के ड्राइवर ने मुत्तुकुमरन् को पांडि बाज़ार के एक आधुनिक वातानुकूलित सैलून के सामने उतारा। अन्दर जाने पर, मुत्तुकुमरन् को थोड़ी देर के लिए बाहरी बैठक में इन्तज़ार करना पड़ा। वहाँ तमिळ के दैनिक, साप्ताहिक, मासिक और फ़िल्मी दुनिया की पत्र-पत्रिकाओं के अंबार लगे थे। एक छोटा-मोटा वाचनालय ही था।

ऊपर, दीवार के चारों ओर युवतियों के मनमोहक 'बाथरूम पोज़' वाले कैलेंडर लगे थे। न नहाते हुए भी बहुत ही थोड़े लिबास में कुछ लड़कियों की तस्वीरें ऐसी बनी थीं कि देखकर नहानेवालियाँ भी लजा जायें। कैलेंडर बनानेवालों का शायद यह विचार रहा हो कि सारी दुनिया की लड़कियों को या तो नहाने के सिवा कोई काम नहीं या नहाना मात्र ही सार्वभौम स्त्री-संस्कृति है।

उन चित्रों को देखते-देखते मुत्तुकुमरन् ऊब गया था। मेज़ पर पड़ी रंगीन चित्रों वाली एक साप्ताहिक पत्रिका उठाकर उलटने-पुलटने लगा। बाहर के कवर-चित्र से लेकर धारावाही उपन्यास और लघुकथाओं के चित्रों में भी स्त्रियाँ नहा ही रही थीं। अच्छा हुआ कि उसका धैर्य जवाब दे दे—इसके पहले अंदर से बुलावा आ गया। अंदर जाकर कुरसी पर बैठा तो देखा कि अगल बगल और आमने-सामने उसके चेहरे के प्रतिबिंब दसेक आईनों में दिखायी देने लगे। अपने ही प्रतिबिंबों पर गर्व करने का जी हो रहा था। दो आईनों के बीच, गोपाल की एक तस्वीर सुन्दर 'फ़्रेम' में सजी टँगी हुई थी। नाई का उस्तरा जब सिर पर चल रहा था, तब उसकी आँखों में मीठी नींद भरने लगी। अधमुँदी-अधखुली आँखों से गोपाल का चित्र देखते हुए उसके मन में गोपाल के बारे में एक-एक कर विचार भी उभरते चले गये।

'गोपाल जी से मेरा बहुत दिनों का परिचय है। नाम के वास्ते मुझे 'इन्टरव्यू'

के लिए बुलाया और नये आये हुए लोगों की तरह सवाल भी किया ! सब कुछ ढोंग था, नाटक था !' माधवी ने तो उसके सामने गोपाल का सारा कच्चा-चिट्ठा खोलकर रख दिया था। पर गोपाल ने तो चूँ तक नहीं की और छुपा भी रहा था, मानो 'इन्टरव्यू' के समय ही माधवी को देखा है। माधवी को टाइप करने के लिए भेजते हुए भी उसने बात घुमा-फिराकर कही थी कि माधवी ने 'इंटरव्यू' में बताया था कि वह टाइप करना भी जानती है। इसलिए उसीको नाटक टाइप करने को बुलवा भेजूँगा।

गोपाल ने कभी इस बात का भान होने नहीं दिया कि वह पहले से ही माधवी को जानता है।

मुत्तुकुमरन् को विश्वास हो गया कि गोपाल उससे यह सब छुपाता रहा।

उसे सैलून से लौटते हुए सुबह के ग्यारह बज चुके थे। माधवी टाईपिंग का काम पूरा कर, शुरू से टाइप किये हुए काग़ज़ों को हाथ में लेकर अशुद्धियाँ सुधारने में लगी हुई थी।

मुत्तुकुमरन् सीधे स्नानागार गया और नहा-धोकर कपड़े बदलकर लौटा। माधवी उसपर दृष्टि फेरकर बोली, "एकाएक आप बड़े दुबले लगने लगे हैं। शायद बाल छोटे करवा लिये हैं !"

"ग़ौर नहीं किया ! बाल बनवाते समय मुझे बड़ी नींद आ गयी ! मैं सो गया !"

"नाटक तो बहुत अच्छा बन पड़ा है ! अभी तक शीर्षक नहीं दिया है। क्या शीर्षक देंगे ?"

"सोचता हूँ कि '**प्रेम—एक नर्तकी का**' रखूँ ! तुम्हारा क्या ख़याल है ?"

"मेरे ख़याल से भी अच्छा है !"

"न जाने, गोपाल क्या कहेगा ?"

"वे परसों आ जायेंगे। देखें, वे क्या बताते हैं ?"

"हो सकता है कि वह दूसरा—कोई फड़कता-सा नाम रखना चाहे !"

"तब तक के लिए इस पांडुलिपि और टंकित लिपि में 'प्रेम—एक नर्तकी का' ही लिख रखूँगी !"

मुत्तुकुमरन् ने हामी भरी। भोजन के बाद दोनों बैठकर बातें कर रहे थे कि मुत्तुकुमरन् ने पूछा, "आज तो नाटक लिखना पूरा हो गया है। इस खुशी में हम दोनों कोई सिनेमा देखने क्यों न चलें ?"

"'मैटिनी शो' के लिए चलें तो मैं साथ आऊँगी—" माधवी ने हामी भरी। मुत्तुकुमरन् मान गया और तुरन्त चल पड़ा।

दोनों एक नयी तमिळ फ़िल्म देखने गये। वह एक सामाजिक फ़िल्म थी। 'टाइटिल' में उसे एक बांग्ला कहानी पर आधारित बताया गया था—जिसके लिए

क्षमा-याचना भी की गयी थी। पट-कथा, संवाद, गीत और निर्देशन का पूरा भार एक ही व्यक्ति ने अपने पर लिया था। गोपाल की तरह ही प्रसिद्ध एक-दूसरे अभिनेता ने उसकी भूमिका की थी। पुराने ज़माने के **'वल्लि-विवाह'** नाटक में वेलन् (कुमार कार्तिकेय) व्याध और वृद्ध के भेष में जैसे एक ही व्यक्ति आया करता था, वैसे ही इस सामाजिक चित्र में भी पंजाबी, पठान और मारवाड़ी के भेष में उक्त अभिनेता ने तिहरी भूमिका निभायी थी।

फ़िल्म देखते-देखते मुत्तुकुमरन् ने माधवी से एक सवाल किया, "सभी चित्रों में न जाने क्यों एक ही आदमी अपने को सभी विधाओं में पारंगत दर्शाना चाहता है, जबकि हर विधा में अपने को अधूरा ही साबित करता है बेचारा!"

"तमिळ सिने-जगत का यह अभिशाप है, जो मिटाये नहीं मिटता। यहाँ अचानक कोई 'डाइरेक्टर' अपने चित्र के लिए कहानी लिखने लगेगा। उनका उद्देश्य यह दिखाने का होता है कि उन्हें कहानी लिखना भी आता है। तारीफ़ करनेवाले यह मानकर तारीफ़ करते हैं कि तारीफ़ करना उनका कर्तव्य है। देखनेवाले इसलिए देखते हैं कि देखना उनका कर्तव्य है। समालोचना करनेवाले इसलिए समालोचना करते हैं कि समालोचना करना या तारीफ़ का पुल बाँधना उनका कर्तव्य है।"

"रुक क्यों गयी? बोलो! डाइरेक्टर को कहानी लिखते देखकर अभिनेता के मन में यह धुन सवार क्यों नहीं होगी कि हम भी कोई कहानी लिखें? तो वह कोई कहानी लिख मारेगा! फिर तारीफ़ करनेवालों और समालोचना करनेवालों के कर्तव्य ज़ोर मारेंगे तो झख मारकर सब-के-सब मैदान में उतरेंगे!"

"बाद को इनकी देखादेखी स्टूडियो का 'लाइट ब्वॉय' भी एक दिन लव-स्टोरी लिखेगा। लोकतन्त्र में तो जिसको जो जी में आये, करने की स्वतन्त्रता है! उसकी कहानी पर फ़िल्म भी बनेगी। हो सकता है, वह डाइरेक्टर और अभिनेता की लिखी हुई कहानियों से बढ़कर कहीं ज़्यादा 'रियल' और 'प्रैक्टिकल' भी हो!"

पीछे की सीट पर बैठे किसी परम रसिक महोदय को मुत्तुकुमरन् और माधवी के वार्तालाप से फ़िल्म देखने में बाधा महसूस हुई तो वे गुस्से में बड़बड़ाने-से लगे। दोनों ने बोलना बन्द कर दिया।

सामने पर्दे पर नायिका का स्वप्न-दृश्य चल रहा था। चमाचम चमकते सुनहरे वृक्षों पर चाँदी के फल लगे थे। नायिका हर पेड़ पर चढ़ती और झूलती। लेकिन किसी पेड़ की शाखा तक नहीं टूटती। भारी-भरकम देह वाली नायिका एक बड़ा लम्बा गाना भी गाती रही। वह इतना लम्बा था कि सभी पेड़ों पर चढ़ने और झूलने के बाद ही कहीं जाकर समाप्त हुआ। 'डंगरी डुंगाले, डुंगरी डंगाले' वाली जो पंक्ति बार-बार आयी, न जाने वह किस जुबान की थी! मुत्तुकुमरन् ने समझ न पाने के कारण माधवी से पूछा तो वह मुत्तुकुमरन् के कानों

में फुसफुसायी—"लगता है, यह फ़िल्म की ज़ुबान है, प्रेमियों की भाषा है !"

"आप इस तरह बोलते रहेंगे तो हम फ़िल्म कैसे देख सकते हैं ? बोलना ही है तो बाहर जाकर बोलिए !"—पीछे की सीट से कैंची-सी ज़ुबान चली तो दोनों ने अपनी ज़ुबान खींच ली।

फ़िल्म के समाप्त होने तक उनसे वहाँ रहा नहीं गया। बीच में ही उठकर चल पड़े। वहाँ से चलकर वे माउंट रोड स्थित एक पश्चिमी ढंग के वातानुकूलित होटल में नाश्ता करने के लिए घुसे। सीट पर बैठकर नाश्ते के लिए ऑर्डर देने के बाद मुत्तुकुमरन् ने माधवी से पूछा, "जब तुम भी मेरी तरह इन अधकचरी फ़िल्मों से नफ़रत करती हो तो ऐसी स्थिति में, इस क्षेत्र में कैसे रह पा रही हो ?"

"दूसरा चारा भी क्या है ? पढ़ी-लिखी होने के कारण इसका बुरा-भला—सब-कुछ समझ में आ जाता है। पर किसी दूसरे के सामने हम इसकी बुराई मुँह से नहीं निकालते। इस क्षेत्र में, चापलूसी और सच्ची स्तुति के बीच कोई विशेष अन्तर नहीं है। सब चापलूस हैं, सच्ची स्तुति कुछ नहीं है। इसलिए फ़िक्र की कोई बात नहीं। अपने से जो बन पड़े, उसे ईमानदारी से करना चाहिए और बाक़ी दूसरों पर छोड़ देना चाहिए। यह भलमनसाहत इस क्षेत्र में ढूँढे नहीं मिलती। यहाँ यही मनोभावना काम करती है कि हर कोई हर काम कर सकता है। इस भावना को उतनी आसानी से कोई उखाड़ नहीं सकता !"

"इन सबमें गोपाल कैसा है ?"

"आप पूछ रहे हैं—इसलिए सतही बातें नहीं करना चाहिए !"

"सच्ची बात ही बताओ !"

"इस 'फ़ील्ड' में जब आये थे, तब दिल लगाकर बड़ी ईमानदारी के साथ काम किया था। अब तो दूसरों की तरह हो गये। सच्चाई विदा हो गयी !"

"कला के क्षेत्र में आत्म-वेदना होनी चाहिए !"

"माने ?"

"सच्ची-श्रद्धा होनी चाहिए !"

"बहुत से लोग शरीर को कोई कष्ट हो—ऐसा कोई काम नहीं करते। आप तो एक सीढ़ी ऊपर चढ़कर कहते हैं कि आत्म-वेदना होनी चाहिए !"

"हाँ, हृदय की बात, अन्दर की बात कहता हूँ। बिना आत्म-वेदना के मुझसे कविता की एक पंक्ति भी नहीं लिखी जाती, बिना आत्म-वेदना के मुझसे कहानी की एक पंक्ति भी नहीं लिखी जाती। बिना आत्म-वेदना के तो मैं संवाद की एक पंक्ति भी नहीं लिख पाता !"

"हाँ, सम्भव है। क्योंकि कला के प्रति आप की ऐसी श्रद्धा है, जिसके लिए आप में तड़प है और आप आत्म-वेदना का अनुभव करते हैं। लेकिन यहाँ कइयों को यह भी मालूम नहीं है कि आत्म-वेदना किस चिड़िया का नाम है ? पूछेंगे कि

कितने का एक किलो आता है ?"

"बड़े अफ़सोस की बात है ! देखकर आश्चर्य होता है कि इतने नक़ली लोग मिलकर लाखों में रुपये कैसे पैदा करते हैं ?"

नाश्ता आ गया। बिना कुछ बोले दोनों ने नाश्ता पूरा किया। कॉफ़ी के आने में थोड़ी देर लगी। उस होटल में 'ऑर्डर' लेनेवाला कछुए की गति से आता और नाश्ता लानेवाला कछुए को पछाड़ देता था। इसलिए नाश्ता पूरा कर उठने में उन्हें एक घण्टे से अधिक का समय लग गया। लौटते हुए मुत्तुकुमरन् माधवी को उसके घर पहुँचा कर लौटा।

दूसरे दिन सवेरे, बिना किसी पूर्व-सूचना के, एक दिन पहले ही गोपाल लौट आया। आते ही नाटक के बारे में पूछकर अपनी उतावली दिखाई। कश्मीर से लौटने के दिन गोपाल कहीं बाहर नहीं गया। नाटक की एक प्रति ले जाकर अपने कमरे में बैठकर पढ़ता रहा। शाम को छः बजे मुत्तुकुमरन् को देखने आउट हाउस में आया। वहाँ माधवी और मुत्तुकुमरन् बैठे बातें कर रहे थे। गोपाल को अचानक वहाँ देखकर माधवी भय-भक्ति के साथ उठ खड़ी हुई। मुत्तुकुमरन् को माधवी का यह भय नहीं भाया।

"नाटक पढ़ लिया !"

"....."

"शीर्षक बदलना चाहिए। कोई दिलकश नाम ढूँढ़ना चाहिए। हास्य का कोई 'स्कोप' नहीं है। उसके लिए भी कुछ करना चाहिए।"

"....."

"अरे, उस्ताद ! मैं कहता चला जा रहा हूँ। तुम तो जवाब ही नहीं देते !"

"इसमें जवाब देने को क्या है ? तुम्हीं सब कुछ जानते हो !"

"तुम्हारा जवाब चुभता-सा लगता है !"

"....."

"दिलकश शीर्षक देने में और बीच-बीच में हास्य को घुसेड़ने में हमारा जिल-जिल बड़ा फ़नकार है। सोच रहा हूँ कि उसके हाथ 'स्क्रिप्ट' देकर दुरुस्त करवाऊँ !"

"छिः-छिः ! वह किस लिए ? मेरे ख़याल में जिल-जिल से बढ़कर ऐसे कामों के लिए तुम्हारे पांडि बाजार के वातानुकूलित सैलून वाले हज्जाम ही ज्यादा क़ाबिल हैं !"

"तुम खिल्ली उड़ा रहे हो !"

"गोपाल···तुमने क्या समझ रखा है ? यह नाटक है या कोई तमस्सुक ?"

सिंह की दहाड़ की तरह मुत्तुकुमरन् का स्वर सुनकर गोपाल स्तंभित रह गया। उसके मुख से शब्द नहीं फूटे। फटे तो कैसे फूटे ? काफ़ी देर तक बिना कुछ कहे-

सुने क्रोध-भरा मौन धारण किये हुए वह खड़ा रहा। मुत्तुकुमरन् के मुँह से जैसे ज्वालामुखी फूट पड़ी थी ! उसके सामने गोपाल का क्या वश था ? मुत्तुकुमरन् के चेहरे पर क्रोध का तूफ़ान बरसा देखकर माधवी भी सहम गयी।

"जिल-जिल से बढ़कर पांडि बाजार के तुम्हारे सैलून वाला···" मुत्तुकुमरन् का जवाब गोपाल पर चाबुक की तरह पड़ा तो वह सकपका गया था। उसके सँभलने के पहले मुत्तुकुमरन् सँभल गया और ऐसे स्वाभाविक ढंग से बोला, मानो कुछ भी नहीं हुआ हो !

"कल से नाटक का रिहर्सल यहीं इसी आउट हाउस में होगा ! तुम भी आ जाना !"—मानो आदेश जारी किया।

गोपाल चुप था, वह कुछ भी बोल नहीं पाया।

नौ

"आज तुम्हारे पास पैसा है, हैसियत खड़ी हो गयी है। इसलिए मैं यह नहीं मानूँगा कि तुम नाटक के मामले में भी पारंगत हो गये हो। नाटक के बारे में मैं जो जानता हूँ, वह तुम नहीं जानते। मेरी बात मानकर चलो। मेरी बात से आगे मत बढ़ो। एकाएक तुम्हें बुद्धिमानी की सीढ़ी पर चढ़ने की कोई ज़रूरत नहीं। समझे ?" वह कुछ इस तरह गोपाल को आड़े हाथों लेना चाहता था। पर माधवी के सामने उसका सिर नीचा नहीं करना चाहता था।

वहाँ से चलते हुए गोपाल ने नाटक की एक प्रति हाथ में ली तो मुत्तुकुमरन् ने ऊँचे स्वर में फटकारते हुए कहा, "उसे कहाँ लिये जा रहे हो ? यहीं रख दो।"

गोपाल उसकी बातों का उल्लंघन नहीं कर सका।

इस दशा में माधवी को वहाँ रहना उचित नहीं जँचा तो घर चल दी। उसके जाने के थोड़ी देर बाद गोपाल भी अपने बँगले में चला गया। जाते हुए उसने मुत्तुकुमरन् से विदा नहीं ली। मुत्तुकुमरन् को लगा कि गोपाल नाहक़ रूठ रहा है। पर रूठे को मनाने से उसके अहंकार ने उसे मना कर दिया। रात को सात बजे नायर छोकरा खाना लाया और मुत्तुकुमरन् के हाथ एक बन्द लिफ़ाफ़ा देते हुए कहा, "मालिक ने भेजा है !"

मुत्तुकुमरन् जिज्ञासा से उसे खोलकर पढ़ने लगा। लड़के ने मेज़ पर खाना रखकर गिलास में पानी भरा और बिना उत्तर की प्रतीक्षा किये वापस बँगले को चल पड़ा।

"प्रिय मुत्तुकुमरन्,

माधवी के सामने तुम्हारा मेरे साथ बेपरवाही बरतना, खिल्ली उड़ाना या फिर डाँट-फटकार आदि जैसी बातें नहीं सोहतीं। मेरे हुक़्म पर चलनेवाले नौकरों के सामने तुम्हारे इस तरह पेश आने को मैं स्वीकार नहीं कर सकता। तुम्हारे मुँह के सामने ऐसा कहने को संकोच हो रहा था। इसीलिए लिखकर भेजना पड़ रहा है। तुम समझो तो ठीक ! नाटक तुम्हारा लिखा हुआ है तो उसका मंचन करनेवाला और भूमिका निभानेवाला मैं हूँ। आशा है, यह याद रखोगे।

तुम्हारा
—गोपाल

मुत्तुकुमरन् ने उस पत्र को मरोड़कर कोने में फेंक दिया। धीरे-धीरे गोपाल के असली रूप का उसे पता चलने लगा। उसके सामने बुज़दिल बनकर और दुम दबाकर चलनेवाला गोपाल उसके पीठ-पीछे क्या-क्या सोचता है? यह पत्र उसी का खुलासा करता-सा लगा। गोपाल पर इतना गुस्सा चढ़ आया कि उसे खाने की इच्छा ही नहीं हो रही थी। फिर भी, किसी तरह खाने की रस्म पूरी कर बिस्तर पर जा लेटा। अब उसे मालूम हो गया कि माधवी का उससे मिलना-जुलना और नेह बढ़ाना गोपाल को एक आँख भी नहीं भाता।

रात को बड़ी देर तक उसे नींद नहीं आयी तो अपने बारे में, माधवी के बारे में, गोपाल के बारे में और मंचित होने वाले अपने नये नाटक के बारे में सोचता हुआ बिस्तर में करवटें लेता रहा।

अब वह यह देखना चाहता था कि कल नियत समय पर गोपाल नाटक के रिहर्सल के लिए आता है कि नहीं ? अगर उसके कहे हुए वक्त पर गोपाल नहीं आये तो ? उसके दिल में प्रतिहिंसा की यह भावना उठी कि बिना कहे-सुने अपने नाटक की प्रतियों के साथ उस घर से निकल जाना चाहिए।

लेकिन दूसरे दिन सवेरे ऐसा कुछ नहीं हुआ। उसने रिहर्सल के लिए जो समय बताया था, उसके आधे घण्टे पहले ही गोपाल आउट हाउस में हाज़िर हो गया था। माधवी भी नियत समय पर आ गयी थी।

गोपाल बात को तूल दिये बग़ैर मान गया था—इस बात से मुत्तुकुमरन् को आश्चर्य हो रहा था। पर उसने उसे प्रकट होने नहीं दिया और स्वाभाविक ढंग से काम शुरू कर दिया।

नाटक कंपनियों में जैसा कि प्रचलन है, सारी औपचारिकताएँ पूरी की गयीं। पूजा के बाद, नाटक का रिहर्सल शुरू करने के पहले कथा और कथा-पात्रों के विषय में एक खाका खींचा गया। फिर पात्रों की सूची देकर गोपाल से कहा कि उनके सामने अभिनेताओं के नाम भर दे। यथा—

नर्तकी—माधवी
पांडिय—गोपाल
कवि—शठगोपन्
कवि मित्र—जयराम

इस तरह सूची में अठारह पात्र थे। उनके सामने अठारहों अभिनेताओं के नाम लिखकर गोपाल ने सूची मुत्तुकुमरन् के सामने बढ़ायी।

"इन अठारहों में तीन ही पात्रों को हमारी टाइप की हुई प्रतियाँ मिलेंगी। बाक़ी लोगों को याद करने के लिए संवाद लिख लेने होंगे!" मुत्तुकुमरन् ने कहा।

"हाँ-हाँ! वही ठीक रहेगा! मैं इसका इन्तज़ाम कर दूँगा! सब लिख लेंगे!" गोपाल ने कहा।

गोपाल और माधवी के लिए रिहर्सल का वक़्त सुबह और बाक़ी लोगों के लिए शाम का समय तय हुआ।

रिहर्सल करते-करते गोपाल ने नाटक के संवाद के विषय में एक संशोधन सुझाने का उपक्रम किया। वह यह था कि कथानायिका नर्तकी का नाम कमलवल्ली रखा गया है। संबोधन में हर बार 'कमलवल्ली, कमलवल्ली' कहकर कथानायक को पुकारना पड़ता है। "मेरे ख़याल में 'कमला' कहकर पुकारे तो अच्छा रहेगा। छोटा नाम सुन्दर रहेगा और बुलाने में भी सहूलियत रहेगी।"

"नहीं, कमलवल्ली ही बुलाना चाहिए!"

"क्यों? कमला बुलाने में क्या हर्ज है?"

"यह ऐतिहासिक नाम है। कमलवल्ली को 'कमला' कहकर पुकारने से सामाजिक नाटक का आभास हो जायेगा!"

"तुम्हारी बातें मेरी समझ में नहीं आतीं!"

"तुम्हारी समझ में आयेंगी भी कैसे?"

मुत्तुकुमरन् की इस टिप्पणी से गोपाल का मुँह लाल हो गया। मुत्तुकुमरन् ने यह महसूस किया कि उसके प्रतिवाद को गोपाल का घमंड हज़म नहीं कर पा रहा है। फिर भी रिहर्सल जारी थी।

मुत्तुकुमरन् ने गोपाल की ख़ातिर न तो अपना विचार बदला और न समझौते का प्रयत्न किया। संवाद और अभिनय के मामले में अपनी ही बातों पर ज़ोर देता रहा।

पहले दिन के रिहर्सल में गोपाल के साथ मुत्तुकुमरन् की कोई ज़्यादा मुठभेड़ नहीं हुई। वर्ना माधवी तो गोपाल के आगे इस तरह डरती थी जैसे बाघ के आगे हिरनी। उसे साथ रखकर मुत्तुकुमरन् भी गोपाल से कड़ाई से पेश आने या हद से बाहर होने को हिचकता था। पिछली रात को गोपाल ने जो पत्र भेजा था, वह सिर उठाकर उसे सतर्क करता रहा। पर गोपाल अंडबंड सवाल कर बैठता तो उसे

ऐसा गुस्सा आता कि एक की चार खरी-खोटी सुना दे। लेकिन किसी तरह अपने को सम्हाल लेता।

उस दिन गोपाल दो बजे के पहले ही यह कहकर चला गया कि उसे कोई 'कॉलशीट' है। केवल माधवी ही रह गयी। उसने मुत्तुकुमरन् को टोकते हुए कहा, "आप फ़िज़ूल के बखेड़ों में क्यों पड़ते हैं? आपने नाटक लिख दिया। वे जैसे चाहें, खेलें। इसमें आपका क्या आता-जाता है?"

"मैं नाटककार हूँ! इसे क्या आसानी से भूला जा सकता है?"

"मैं भूलने को नहीं कह रही! पूछती हूँ कि व्यर्थ का हठ क्यों ठानते हैं?"

"नहीं! हठ से ही आजकल भले-बुरे की रक्षा की जा सकती है!"

"आजकल भले-बुरे की रक्षा कौन करना चाहता है? सब पैसा ही बनाना चाहते हैं!"

"हाँ, पैसे की बात गोपाल पर लागू हो सकती है! अच्छा, छोड़ो! शाम को दूसरों के लिए रिहर्सल की बात कह गया न? वे दूसरे कौन हैं? कब आयेंगे? कैसे आयेंगे? इसका तो कोई पता-ठिकाना नहीं चलता!"

"सबका इन्तज़ाम किया होगा। 'वैन' जाकर उन्हें बटोर लायेगी। नाटकों में 'साइड रोल' की भूमिका करने के लिए यहाँ कितने ही घराने पड़े हैं, जो बड़ा कष्टकर जीवन बिता रहे हैं। ऐसे पात्रों का यहाँ कोई अकाल नहीं है।"

"हो सकता है कि अकाल न हो। पर अकालग्रस्त लोगों से कला-भावना की रक्षा हो सकती है कहीं?"

"कला की साधना के लिए कोई शहर नहीं आता। पेट पालने के लिए ही सब शहर आते हैं और आये भी हैं।"

"तभी शहरों में कला की हालत खस्ता है!"

इसका माधवी ने कोई उत्तर नहीं दिया। लेकिन जैसा कि उसने बताया था, थोड़ी देर में दस-पन्द्रह स्त्री-पुरुषों से खचाखच भरी एक 'वैन' आयी; जिसमें से सभी हाट-बाज़ार का-सा शोरगुल मचाते हुए उतरे। मुत्तुकुमरन् और माधवी को सामने देखते ही उनकी बोलती बन्द हो गयी। उन्हें आउट हाउस के बरामदे में ले जाकर यह फ़ैसला करने में आधे घण्टे से भी अधिक का समय लग गया कि किसे किस पात्र की भूमिका दी जाए।

एक युवक जो दूत की भूमिका करने के लिए चुना गया था, मुत्तुकुमरन् ने यह संवाद देकर पढ़ने को कहा, "हमारे महाराज तलवार लेकर घुमायें तो सारे दुश्मन ज़मीन चूमेंगे।" तो उसने पढ़ा, "हमारे महाराज तलवार लेकर घूम आयें तो सारे दुश्मन ज़मीन झूमेंगे।"

"अरे भाई! 'घूम आना' नहीं, 'घुमाना', 'झूमना' नहीं 'चूमना'।"—मुत्तुकुमरन् ने 'घुमाने' और 'चूमने' पर जितना ज़ोर दिया, उतना ही उसने 'घूम

आने' और 'झूमने' पर ज़ोर दिया, मानो कुत्ते की दुम हो।

"अरे भाई ! लड़ाई का मैदान है यहाँ···घूमने के लिए कोई बाग़-बगीचा नहीं !" मुत्तुकुमरन् के हास-परिहास को उसने क्या समझा ? ख़ाक समझा !

मुत्तुकुमरन् को सिर पीटने के सिवा कोई चारा नज़र नहीं आया। उनमें अधिकांश साफ़ संवाद बोलने, भाव-प्रदर्शन करने और भूमिका समझने में अयोग्य ही सिद्ध हुए। मुत्तुकुमरन् को अब यह समझते देर न लगी कि मद्रास में मज़दूरों की तरह ही नाटकों के उन पात्रों की भूमिका करने के लिए आदमी मिल रहे हैं।

माधवी ने सबको काग़ज-पेन्सिल देकर अपना-अपना संवाद लिख लेने को कहा। उनमें से कुछेक तो बिना ग़लती के लिखना तक नहीं जानते थे।

"हमारी बायस् कंपनी में ग़रीबी की भूख सताती थी। लेकिन कला के विषय में न ग़रीबी थी और न ज्ञान-शून्यता। यहाँ की हालत को देखते हुए लगता है, वह ज़माना कहीं अच्छा था।" माधवी को अन्दर ले जाकर मुत्तुकुमरन् ने अपनी मनो-व्यथा सुनायी।

"क्या करें ? यहाँ की हालत ऐसी ही है। कष्ट भोगने वाले ही इस तरह काम की तलाश में आते हैं। कला की साधना के मुक़ाबिले इस क्षेत्र को आने वाले जीविका का साधन मानकर, ही अधिक हैं" माधवी ने कहा।

रिहर्सल के समय, मुत्तुकुमरन् ने उन अभिनेताओं में एक और तरह के संक्रामक रोग को फैले हुए पाया। फ़िल्मी क्षेत्र के किसी नामवर अभिनेता की आवाज़, बोलने के तौर-तरीके, भाव-प्रदर्शन आदि की नक़ल करना ही उनका ध्येय और सामर्थ्य-दर्शन था। कला और कला के भविष्य की चिंता तो उनमें थी ही नहीं।

मुत्तुकुमरन् ने उन्हें अभ्यास कराने में दो-तीन घण्टे लगाया। हर एक अभि-नेता में उसने इस विचार को सिर उठाये हुए पाया कि मंच पर एक मिनट भी सिर घुसाने का मौका मिले तो उस मौक़े पर कथा-नायक से भी अपने को प्रमुख मान ले और प्रभाव पैदा कर चला जाय। कला की किसी भी विधा में आत्म-वेदना नहीं के बराबर थी और केवल स्वयं को प्रदर्शित करने की इच्छा तीव्रतम थी। हर उप-अभिनेता यही सपना देखता था कि हम भी फ़लाने मशहूर अभिनेता की भाँति पैसा कमायें, नाम-यश पायें, कार-बँगले खरीदें और सुख भोगें। मेहनत से काम करने और सामर्थ्य बढ़ाने का उत्साह किसी में नहीं दीखा। मुत्तुकुमरन् जानता था कि कला के क्षेत्र के लिए यह हानिकारक है। पर वह कर ही क्या सकता था ?

दूसरे दिन भी रिहर्सल के लिए आने को कहकर उसने उन्हें विदा किया तो शाम के छः बज गये थे। पहले जो 'वैन' उन्हें भरकर लायी थी, अब उन्हें भरकर बँगले से बाहर ले गयी। जाती हुई 'वैन' को देखते हुए मुत्तुकुमरन् ने माधवी से कहा, "लगता है कि हरेक अभिनेता ने अपने दस-पन्द्रह आदमियों को काम दिलाने के लिए ऐसी ही कोई नाटक-मंडली खोल रखी है !"

"बात सही है ! लेकिन जो लोग कला की साधना के उद्देश्य से यह कार्य शुरू करते हैं, वे भी धीरे-धीरे इसी चक्कर में पड़ जाते हैं। कला का ध्यान छू मंतर हो जाता है !"

"उप-अभिनेताओं को मासिक वेतन दिया जाता है या दैनिक मज़दूरी ? यहाँ कौन-सा रिवाज़ चलता है ?"

"अगर अपने आदमी कोई काम न भी करें तो वे मासिक वेतन दे देते हैं। दूसरे हों तो सिर्फ़ नाटक में भाग लेने के दिन के ही पैसे देते हैं। दस रुपये से लेकर पचास रुपये तक। आदमी, हैसियत और घनिष्ठता के अनुसार इनमें फ़र्क़ पड़ता है !"

"नाटक ज़्यादातर कैसे चलते हैं ? अकसर कौन देखने आते हैं ? पैसा वसूल कैसे होता है ?"

"मद्रास में ऐसी सभाओं को छोड़कर दूसरा चारा नहीं है। हर समुदाय की कोई-न-कोई सभा होती है। मद्रास के बाहर भी, बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली जैसे शहरों में जहाँ हमारे लोग हैं, वहाँ ये मण्डलियाँ जाती हैं। इनके अलावा नगर-पालिका की प्रदर्शनियों, मन्दिरों के मेलों और राजनीतिक दलों के अधिवेशनों में भी तरह-तरह के नाटक होते हैं। दूसरे शहरों में नाटक मंडली और सारी सज्जा-सामग्री को ले जाना होता है। यह तो ऐसा कठिन काम है कि जान ही निकल जाती है !"

"इतनी सारी सभाओं, प्रदर्शनियों और रंगमंचों के बढ़ने पर भी लगता है कि इस कला को समर्पित कलाकारों में उस ज़माने की तरह श्रद्धा या आत्मवेदना नहीं है। पेट की भूख तो है। किन्तु कला की भूख नहीं है। अगर है तो उसको पेट की भूख खा जाती है !"

"आप बिलकुल ठीक कह रहे हैं।" माधवी ने लम्बी साँस खींची। थोड़ी देर बाद बात जारी रखते हुए उसने कहा, "कलकत्ता में ऐसे थियेटर हैं, जहाँ रोज़ नाटक चलते हैं। वहाँ के लोगों में नाटक के प्रति श्रद्धा है और कला के प्रति आत्म-वेदना भी। मैं एक बार गोपालजी के साथ कलकत्ता गयी थी, तब हमने 'भूख' नामक एक बांग्ला नाटक देखा था। बड़ा अच्छा था। संवाद बहुत कम थे लेकिन हाव-भाव और भंगिमाएँ ही ज़्यादा थीं। नाटक इतना नपा-तुला था कि क्या कहें ?"

"गोपाल के साथ तुम कलकत्ता क्यों गयी थी ?" यह सवाल मुत्तुकुमरन् के होंठों तक आ गया था। पर उसने न जाने क्या सोचकर उसे निगल लिया !

थोड़ी देर तक दोनों में कोई बात-चीत नहीं हुई और मौन छाया रहा। गोपाल के साथ अपने कलकत्ता हो आने की बात कहने की क्या ज़रूरत थी ?— माधवी अपनी भूल को महसूस कर, कुछ क्षणों के लिए सिर झुकाये चुप बैठी रही। मानो कोई कलाकार अनजाने ही बाजे में बेसुरा तार छेड़कर शर्मिन्दा हो। श्रोता

तो यहाँ और भी असमंजस में पड़ गया था। इस दमघोंटू वातावरण से छूटने के विचार से माधवी ने बात बदलकर पूछा, "कल हम दोनों का रिहर्सल तो सवेरे ही है न ? दिन तो बहुत कम बचे हैं !"

"किसके लिए दिन बहुत कम हैं ?"

"नाटक के मंचन के लिए ! मंत्री ने तो तारीख़ दे दी है न ?"

"नाटक के मंचन से बढ़कर मंत्री के 'डेट' पर ही यहाँ सबका ध्यान केन्द्रित रहता है !"

"क़सूर हो तो माफ़ कीजिए ! मैंने उस अर्थ में नहीं कहा !"

"चाहे किसी माने में भी कहो ! लगता है कि आजकल कोई कला कला के लिए नहीं बल्कि मन्त्री महोदय की अध्यक्षता और अख़बारों में ख़बर छपने के लिए ही है।"

"एक और बात···बड़ी विनम्रता से कहना चाहती हूँ। आप बुरा न मानें तो कहूँ।"

"बात न बताकर इस तरह कहती रहोगी तो मैं कैसे जवाब दूँ ?"

"आपको गुस्सा नहीं करना चाहिए, सब्र से सुनना चाहिए। मुझे संकोच हो रहा है कि मैं अपनी वह बात कैसे शुरू करूँ ? अच्छा हुआ कि आज पहले दिन के रिहर्सल में वैसे कुछ नहीं हुआ !"

"कुछ नही हुआ का मतलब ?"

"कुछ नहीं ! रिहर्सल के समय गोपाल साहब मेरा तन स्पर्श करें या मुझे छेड़ें तो मैं न तो उसका विरोध कर सकती हूँ और न ही मुँह फेर सकती हूँ। आपको इसका बुरा नही मानना चाहिए। मैं एक अबला हूँ। आपको यह नहीं समझना चाहिए कि अपने स्पर्श करनेवालों को मैं भी छूना चाहती हूँ।"

यह कहते हुए माधवी की आवाज़ ऐसी रुँध गयी, मानो रो पड़ेगी। उसके सजल नेत्र गिड़गिड़ाते-से लगे। उसने उसे घूरकर देखा। उसकी विनती में सतर्कता और स्वरक्षा की भावना नज़र आयी। उसकी इस सतर्कता ने यह भी स्पष्ट कर दिया था कि वह उसपर अपना दिल न्योछावर कर चुकी है और उसके प्यार के बंधन में बँध चुकी है। उसकी बातों में बच्चों की निरीहता और स्त्रियोचित भोलापन देखकर वह खुश हुआ। उसे गौरव-सा महसूस हुआ। उसके जी में आया कि उसे आड़े हाथों ले, उसपर गुस्सा उतारे या कि उसे दिलासा देकर दिल से लगा ले। उसकी ओर आँखें उठाकर उसने दुबारा देखा तो उसकी गिड़गिड़ाती आँखें डबडबा आयी थीं।

दस

माधवी का चेहरा निहारते हुए मुत्तुकुमरन ने कहा, "न जाने क्यों, तुम लोग गोपाल से यों ही डरते हो, मानो वह कोई चक्रवर्ती राजा हो !"

"शायद आप यह भूल गये कि समाज की ऊँची चोटियों पर धनी-मानी, नामी-गिरामी व्यक्ति ही राजे-महाराजों की तरह अब भी बैठे हैं !"

"कहीं किसी चक्रवर्ती-महाराज की धौंस से डर मरने की मेरी आदत नहीं रही है। मैं खुद अपने को किसी चक्रवर्ती राजा से कम नहीं मानता।"

"शायद इसीलिए मुझे आजकल आप से भी डरना पड़ रहा है।"

"गोपाल से डरने और मुझसे डरने में कोई फ़र्क़ महसूस करती हो तो मुझे गर्व होगा।" कहकर मुत्तुकुमरन ने उसकी ओर देखा तो उसकी आँखों और अधरों पर मुस्कराहट खेल रही थी।

"आप बड़े 'वो' हैं !"

"लेकिन लगता है कि मुझसे बड़े 'वोओं' से ही तुम डरोगी !"

"प्रेम के बंधन में बँधते हुए डरने और हुकूमत के बंधन में डरने में बड़ा फ़र्क़ होता है !"

उसकी बातों की तह में सच्चे प्यार और लगन की गूँज सुनते हुए मुत्तुकुमरन मन-ही-मन बहुत खुश हुआ।

दूसरे दिन सवेरे से रिहर्सल खूब ज़ोर-शोर से चलने लगा। गोपाल चाहता था कि चाहे जो कुछ भी हो, मंत्री महोदय के दिये हुए 'डेट' पर उनकी अध्यक्षता में नाटक का मंचन हो जाये। नियत दिन के बहुत पहले ही रिहर्सल पूरा कर नाटक को पक्का रूप देने के प्रयत्न होने लगे। पार्श्वगायक-गायिकाओं द्वारा गीतों का गोपाल ने 'प्री-रिकार्ड' करवा लिया। फिल्मी जगत के एक संगीत निर्देशक ने गीतों की धुनें बनाकर बड़ा दिलकश अन्दाज़ पैदा किया था।

नाटक ठीक कितने समय का होगा, इसका ठीक-ठीक पता लगाने के लिए 'फ़ाइनल स्टेज रिहर्सल' का इन्तज़ाम एक स्थायी नाटक थियेटर में ही किया गया। गोपाल ने उसी दिन 'प्रेस प्रीव्यू' रखने का निश्चय किया।

नाटक के प्रथम मंचन और उसके बाद के प्रदर्शनों में 'हाउस फ़ुल' होने के लिए सभी पत्र-पत्रिकाओं में प्रशस्ति मूलक शब्द ही छपें—गोपाल ने इसकी भी पूरी व्यवस्था कर रखी थी।

इसके अलावा एक और योजना भी गोपाल के मन में उभर आयी। मलेशिया के पिनांग से अब्दुल्ला नाम के एक धनी रसिक मद्रास आये हुए थे। वे वहाँ के प्रसिद्ध

व्यापारियों में से थे। उनका एक पेशा यह भी था कि भारत की नाटक-मंडलियों को अनुबंध द्वारा मलाया ले जाते और जगह-जगह नाटक का मंचन कर पैसे बनाते और बनवाते। गोपाल नाटक-मंडली के प्रथम नाटक 'प्रेम-एक नर्तकी का' जिसका प्रथम मंचन मंत्री महोदय की अध्यक्षता में होना था—उसी दिन पिनांग के अब्दुल्ला को नाटक में बुलाने का भी निर्णय हुआ। यह आशा की गयी कि नाटक देखने के बाद वह गोपाल और गोपाल की नाटक-मंडली को इस नाटक के मंचन हेतु कम-से-कम एक महीने के लिए मलाया-सिंगारपुर में अनुबंध पर बुलायेंगे। अतः नाटक-मंडलीवालों की यह कोशिश रही कि नाटक पूरी तरह सफल हो ताकि अब्दुल्ला भी इस अनुबंध के लिए बाध्य हो।

नाटक नाटक के लिए सफल हो या न हो, दूसरे कई कारणों के लिए सफल हो—गोपाल का यह प्रयास मुत्तुकुमरन् को नहीं भाया।

मंचन के प्रथम दिन 'जिल जिल' संपादक कनियळकु मुत्तुकुमरन् से भेंट करने के लिए आ गया। इस समय भेंट-वार्ता छपे तो बड़ा अच्छा रहेगा—गोपाल की योजना का इसके पीछे हाथ था। लेकिन मुत्तुकुमरन् ने जिल जिल पर ऐसी फबती कसी कि वह सकपका गया। उसके हर सवाल का जवाब टेढ़ा-मेढ़ा ही मिला। उसके प्रति मुत्तुकुमरन का कोई आदर-भाव नहीं रहा।

"मैंने कितने ही बड़े-बड़े लोगों से भेंट की है। त्यागराज भागवतर, पि० यु० चिन्नप्पा, टी० आर० राजकुमारी—सबको मैं अच्छी तरह जानता हूँ।"

"लेकिन मैं उतना बड़ा आदमी नहीं!"

"हमारे 'जिल जिल' में आपकी एक भेंट-वार्ता छप जाए तो आप अपने आप बड़े हो जायेंगे!"

"तो कहिए कि बड़े आदमी बनाने का काम आप बहुत दिनों से कर रहे हैं!"

"हमारे जिल जिल की यह नियामत है!"

"हाँ, जिल जिल भी तो एक नियामत है!"

"अच्छा, छोड़िये उन बातों को! अब हम काम की बात करेंगे!"

"हाँ-हाँ! कहिए, आपको क्या चाहिए?"

"आपने कला के जगत में कब पदार्पण किया?"

"कला-जगत कहने का क्या मतलब है? पहले यह बताइये। बाद में मैं आपको जवाब दूँगा। मेरा जाना-माना जगत एक ही है। उसमें भूख-प्यास, अमीरी-ग़रीबी, तोष-रोष, सुख-दुख, शोक-संताप—सब सम्मिलित हैं। आप तो किसी दूसरी दुनिया की बात कर रहे हैं!"

"आप यह क्या कह रहे हैं? कला की ही दुनिया में तो आप, मैं और गोपाल साहब रहते हैं!"

"वह कैसे ? आप और मैं मिलकर जिस किसी दुनिया में रह सकते हैं, वैसी कोई दुनिया रह ही नहीं सकती।"

"अजी साहब ! हम दोनों इस तरह बोलते रहें तो भेंट-वार्ता की एक पंक्ति भी नहीं लिखी जा सकती !"

"चिंता मत कीजिए। आपको जो चाहिए, पूछिए, बता देता हूँ !"

"वह तो मैंने पूछ ही लिया ! आप ही ने अब तक कोई उत्तर नहीं दिया ! नहीं तो मैं एक काम करता हूँ। मैं एक ऐसी भेंट-वार्ता लिखकर लाता हूँ, जिसमें आप जवाब देते हैं और मैं सवाल करता हूँ। सवाल-जवाब मैं फिट कर लूंगा। उसमें आप अपना दस्तख़त भर कर दीजियेगा, बस !"

"पढ़कर दस्तख़त करूँ, या बिना पढ़े ही कर दूँ ?"

"आपकी मर्ज़ी ! पढ़ना चाहें तो पढ़कर कीजिएगा।"

मुत्तुकुमरन् को यह सुनकर बड़ा गुस्सा आया। लेकिन 'जिल जिल' जैसे चापलूस को एक आदमी मानकर, उसपर अपना क्रोध उतारने के विचार तक को वह मन में नहीं लाना चाहता था। पर 'जिल जिल' का मुँह खुलवाकर गप्पें लड़ाने की इच्छा ज़ोर मार रही थी। उसके पहले, सवाल के जवाब में अपनी जन्म-तिथि, कुटुंब की गरिमा, मदुरै की वायुस् कंपनी की नौकरी आदि का विवरण दिया और अगले सवाल की उससे प्रतीक्षा की। दूसरा सवाल करने के पहले ही 'जिलजिल' ने थके-हारे मन से जेब से सिगरेट की डिब्बी निकाली और एक सिगरेट निकालकर मुत्तुकुमरन् के आगे बढ़ायी। मुत्तुकुमरन् ने इनकार करते हुए कहा, "नहीं, धन्यवाद ! बहुत दिनों तक यह आदत पाले रहा। अब कुछ दिनों से छोड़ दी है।"

"अरे, रे ! कला की दुनिया में जिन योग्यताओं की ज़रूरत होती है, उनमें एक भी आप में नहीं है !"

"मिस्टर जिल जिल ! अभी आपने जो कुछ कहा, उसका क्या मतलब है ?"

"सुँघनी, पान-सुपारी, तम्बाकू, सिगरेट, शराब, औरत—इनमें एक भी न हो तो कोई कलाकार कैसे हो सकता है ?"

"कोई हो तो नहीं मानेंगे क्या ?"

"नहीं, ऐसी बात नहीं है ! मेरा मतलब है···" कहते हुए 'जिल जिल' ने सिगरेट सुलगायी।

उस कूबड़ शरीर वाले 'जिल जिल' को धुआँ निगलते-उगलते देखकर मुत्तुकुमरन् को तमाशा-सा लगा। इस बीच 'जिल जिल' ने अपना दूसरा सवाल शुरू किया, "आपका लिखा या खेला हुआ पहला नाटक कौन-सा है ?"

"इतना ज़रूर याद है कि मैंने कोई नाटक लिखा है और खेला है ! पर वह कौन-सा रहा होगा, यही याद नहीं आता !"

"सर, इस तरह के जवाब का हम क्या करेंगे ? आपके सभी जवाब एक जैसे

मालूम होते हैं। पाठकों को दिलचस्पी होनी चाहिए न ?"

"निश्चय ही ऐसे जवाब नये होंगे, मिस्टर जिल जिल ! क्योंकि सभी भेंट-वार्ताओं में एक ही जैसे सवाल और जवाब पढ़कर पाठक उकता गये होंगे !" कहकर मुत्तुकुमरन् ने अपनी आवाज़ धीमी कर पूछा, "अब तक तो ये सवाल और जवाब दोनों आप ही के लिखे हुए होते हैं न ?"

"हाँ, बात तो सच है !"

"कागज़ पर कुछ लिख लेने के बाद 'जिल जिल' ने अगला सवाल किया, "आपके पसंद के नाटककार कौन हैं ?"

"क्यों ? मैं खुद हूँ !"

"ऐसा कहेंगे तो क्या होगा ? जवाब ज़रा नम्र हो तो अच्छा होगा।"

"मुझी को मैं पसंद नहीं आया तो और किसको पसंद आऊँगा ?"

"अच्छा, छोड़िए ! अगला सवाल सुनिए ! क्या आप यह बता सकते हैं कि कला के क्षेत्र में आपके क्या आदर्श हैं ?"

"आदर्श तो बहुत बड़ा शब्द है ! आपके मुँह से इतनी सहजता और धैर्य के साथ इस शब्द का प्रयोग देखकर मुझे भय हो रहा है, मिस्टर जिल जिल ! मुझे इस बात का संदेह है कि इस शब्द का उच्चारण तक करने की योग्यता रखने-वाला व्यक्ति आज के कला के क्षेत्र में कोई होगा भी या नहीं !"

मुत्तुकुमरन् और 'जिल जिल' इन बातों में उलझे थे कि माधवी वहाँ आयी।

"आप आती हैं तो सचमुच बहार ले आती हैं !" कहकर 'जिल जिल' हँसा। किसी फोड़े की तरह उसका थोबड़ा उभर आया। यह देखकर मुत्तुकुमरन् को उबकाई आयी।

"अच्छा ! अगला सवाल है मेरा ! कहिए, आपने अभी तक शादी क्यों नहीं की ?"

"किसी मर्द से इस तरह के सवाल पूछने और जवाब छापने से आप किसी भी तरह पाठकों को बाँध नहीं सकते, मिस्टर जिल जिल !"

"परवाह नहीं, आप जवाब दीजिये !"

"जवाब दूं ?"

"हाँ, दीजिये !"

"इनकी तरह···" माधवी की ओर इशारा कर, मुत्तुकुमरन् बोला, "कोई बहार आये तो शादी करने का विचार है।"

"ऐसा ही लिख लूँ ?"

"ऐसा ही का क्या मायने ?"

"माधवी जैसी सर्वांग-सुन्दरी मिले तो शादी करूँगा।···नाटककार मुत्तुकुमरन् की यह प्रतिज्ञा है।···लिख लूँ ?"

"यह इच्छा मात्र है। इच्छा और प्रतिज्ञा अलग-अलग हैं। इसे प्रतिज्ञा कहना ग़लत है!"

"पत्रिका की भाषा में हम ऐसा ही कहते हैं।"

"पत्रिका की इस भाषा को भाड़ में झोंकिए!"

"ग़ुस्सा मत कीजिये!"

"छिः-छिः! यह कोई ग़ुस्सा है? मैं सचमुच ग़ुस्सा करूँ तो थरथरा जायेंगे आप?"

"मेहरबानी करके मेरे अगले सवाल का, बिना ग़ुस्सा किये जवाब दीजियेगा। आपकी अगली योजना क्या है?"

"वह तो मेरा भविष्य ही जाने! मैं क्या जानूँ?"

"आप भी ख़ूब मज़ाकिया बातें करते हैं।"

"मज़ाकिया?"

"हाँ, हास्य की।"

"इसमें कौन-सा बड़ा हास्य हो गया?"

मुत्तुकुमरन् माधवी की ओर देखकर मुस्कराया। जिल जिल झुककर कुछ लिखने लगा।

"एक मिनट इधर, अंदर आइए!" माधवी ने मुत्तुकुमरन् को आउट हाउस के बरामदे से अंदर बुलाया तो वह उसके साथ अंदर चला गया।"

"इस आदमी के सामने ऐसी बातें क्यों कीं?"

"कैसी बातें?"

"इनकी तरह कोई बहार आये तो शादी करने का विचार है!"

"तो कहो कि तुम्हारे ख़याल से मुझे यह कहना चाहिए कि शादी करूँ तो मैं इसी से शादी करूँगा। मेरी ग़लती माफ़ कर दो!"

"मेरे कहने का मतलब वह नहीं!"

"तो फिर क्या?"

"उन्होंने यह लिख लिया है कि माधवी-जैसी मनोहर सुन्दरी मिले तो शादी करूँगा।...नाटककार मुत्तुकुमरन् की यह प्रतिज्ञा है। अब इसे गोपाल साहब पढ़ेंगे तो क्या समझेंगे?"

"तो फिर तुम्हारा छुटकारा नहीं होने का। तुम्हें गोपाल का डर लग रहा है?"

"डर किस बात का? आप मेरी बात समझते नहीं!"

"समझता ख़ूब हूँ! शेरों से डरनेवाली हिरनियाँ मुझे पसन्द नहीं!"

"मुझे डरानेवाला शेर और कहीं नहीं, इधर है।" कहकर माधवी ने मुस्कुराते हुए उसकी मीठी चुटकी ली। बदले में मुत्तुकुमरन् भी मुस्कुराया। पर उसे इस बात का पता था कि वह मन-ही-मन गोपाल से डर रही है। इसका फ़ायदा उठाकर वह

हद से ज़्यादा उसका इम्तहान लेना या डराना नहीं चाहता था ; इसलिए हँसकर रह गया। माधवी भी उसके गांभीर्य के सामने अपने को डरपोक साबित करना नहीं चाहती थी। उसने अपनी बेबसी को हँसकर टाल दिया। जिल जिल ने और कुछ बेतुके और उबाऊ सवाल किये, मुँह-तोड़ जबाब पाये और अपनी भेंटवार्ता पूरी कर चल पड़ा।

उस रात को नारद गान सभा के मंच पर स्टेज-रिहर्सल हुआ, जो बड़ा सफल रहा। रात के ग्यारह बज गये। नाटक आठ बजे शुरू हुआ और ठीक ग्यारह बजे खत्म हुआ।

नाटक तीन घंटे का ही रहे या ढाई घंटे का बनाया जाए? गोपाल ने मुत्तुकुमरन्, माधवी और अन्य कुछ मित्रों से सलाह-मशविरा किया।

"जो लोग तीन या साढ़े तीन घंटे बैठकर सिनेमा देखते हैं, वे अच्छे सुरुचिपूर्ण नाटक देखने में आना-कानी नहीं करेंगे। किसी भी दृश्य को काटना नहीं चाहिए। नाटक जैसे का तैसा रहे। कहीं कैंची चली तो वह अपना प्रभाव खोकर हल्का-फुल्का हो जाएगा!" मुत्तुकुमरन् अपनी बात पर अड़ा रहा तो गोपाल को लाचार होकर चुप हो जाना पड़ा।

दूसरे दिन शाम को मन्त्री महोदय की अध्यक्षता में नाटक का मंचन होना था। इसलिए सबको जल्दी घर जाकर इस रिहर्सल की रात की थकान सोकर उतारनी भी थी। उन्हें कहा गया कि अगले दिन शाम को पाँच बजे अण्णामलै मन्ड्रम में हाजिर हो जाना चाहिए। ठीक छः बजे नाटक शुरू होगा। मंत्री महोदय अंतिम दृश्य के पहले अध्यक्ष का आसन ग्रहण कर नाटक की प्रशंसा में कुछ कहेंगे। अगली रात का सारा कार्यक्रम पूरा होते-होते रात के दस बज ही जायेंगे।

नाटक देखने के लिए शहर के कई प्रमुख व्यक्ति, अन्य नाटक-मंडलियों के सदस्य, पिनांग के अब्दुल्ला आदि विशेष रूप से निमंत्रित थे।

इसलिए स्टेज-रिहर्सल के पूरे होने की रात या दूसरे दिन की सुबह नाटक को घटाने-बढ़ाने या परिमार्जित करने के विषय में सोचने तक को किसी को समय नहीं मिला। स्टेज-रिहर्सल देखने-वालों में सिर्फ़ 'जिल जिल' ही ऐसा था जो सबसे यही कहते हुए नजर आया, "नाटक में हास्य कम है। थोड़ा ज़्यादा होता तो अच्छा होता।"

"मेरे विचार से पर्याप्त हास्य है। अगर कहीं कमी-बेशी नज़र आयेगी तो दर्शकों की गैलरी से आपको बुला लेंगे!" मुत्तुकुमरन् ने उसे टोका तो 'जिल जिल' का मुँह आप ही आप बंद हो गया।

दूसरी शाम को अण्णामलै मण्ड्रम 'हाउस फ़ुल' हो गया। अनेक व्यक्तियों को टिकट नहीं मिला—फलतः निराश होकर घर लौटना पड़ गया। नाटक ठीक छः बजे शुरू हुआ। मंत्री महोदय और पिनांग के व्यापारी अब्दुल्ला पौने छः बजे

ही आ गये थे।

हर दृश्य में संवाद, अभिनय और गीत-प्रस्तुति के लिए तालियाँ बजती रहीं।

मध्यांतर में पिनांग के व्यापारी अब्दुल्ला ने 'ग्रीन रूम' जाकर गोपाल से कहा—"जनवरी में तमिळों का त्योहार है। पोंगल के समय आप मलेशिया आ जाइए और एक महीने के लिए विभिन्न स्थानों पर यही नाटक खेलिए। दो लाख रुपये का 'कांट्रेक्ट' है। आने-जाने का खर्च, ठहरने की व्यवस्था—यह सब हमारे जिम्मे है। उम्मीद करूँ कि आप हमारी गुज़ारिश पर ज़रूर आयेंगे?"

यह सुनकर गोपाल फूला न समाया। अपनी इच्छा को पूरा होते हुए देखकर उसका दिल बल्लियों उछलने लगा।

मध्यांतर के बाद नाटक ने नाटकीय मोड़ लिया और उसमें और भी चमकभरी गति आयी। माधवी के नृत्य, अभिनय और गान को सुनकर ऐसी करतल-ध्वनि हुई कि सभा भवन हिल उठा।

अंतिम दृश्य के समापन के पूर्व मंत्री महोदय और अब्दुल्ला मंच पर आये। मंत्री के सामने 'माइक' रखी गयी। हार पहनाया गया। इसके बाद वे बोले, "तमिळ समुदाय के स्वर्णिम युग का यह नाटक यह प्रतिपादन करता है कि इसके पहले हमें ऐसा कोई नाटक देखने को नहीं मिला। भविष्य में भी इसकी ओई आशा नहीं कि मिलेगा। 'न भूतो न भविष्यति' की सूक्ति को यह नाटक चरितार्थ करता है। वीर्य, शौर्य और प्रेम से परिप्लावित इस दृश्य-काव्य के प्रणेता का मैं हृदय से अभिनंदन करता हूँ। भूमिका में उतरे पात्रों को साधुवाद देता हूँ। और अंत में, आज के दर्शकों और भविष्य के दर्शकों के भाग्य की सराहना करता हूँ।"

इस संस्तुति-माला पहनाने के साथ ही मंत्री महोदय ने गोपाल को फूल-माला पहनायी। गोपाल को तत्काल मुत्तुकुमरन् का ख़याल हो आया। कहीं मुत्तुकुमरन् बुरा न मान जाए—इस डर से दर्शकों की गैलरी में पहली पंक्ति में सामने बैठे हुए मुत्तुकुमरन् को मंच पर बुलवाया और पिनांग के अब्दुल्ला के हाथ में एक माला देकर उसे पहनाने की प्रार्थना की।

मुत्तुकुमरन् ने भी मंच पर आकर तालियों की गड़गड़ाहट के बीच अब्दुल्ला के हाथों माला स्वीकार की।

इतने से ही संतोष कर नाटक का अन्तिम दृश्य आरंभ हो गया होता तो अच्छा होता। 'तुम भी दो शब्द बोलो उस्ताद'—कहकर गोपाल ने मुत्तुकुमरन् के आगे माइक बढ़ायी।

मुत्तुकुमरन् उस समय घमंड के नशे से चूर था। उसके भाषण में भी वह नशा खूब उभर आया—

"मुझे अभी-अभी यह माला पहनायी गयी। पता नहीं क्यों, मुझे-हमेशा ही माला पहनाने की बात से नफ़रत-सी होती रही है। क्योंकि माला पहनते हुए माला

पहनानेवाले के आगे, एक पल के लिए ही सही, सिर झुकाना पड़ता है। मेरा सिर झुकवाकर कोई मेरा आदर-सत्कार करे—इसे मैं क़तई पसन्द नहीं करता। मैं सिर तानकर रहना ही पसंद करता हूँ। मेरे गले में माला पहनाने के बहाने साधारण से साधारण व्यक्ति भी अपने सामने मेरा सिर झुकवाने की हैसियत रखे, यह कैसी विडंबना है! धन्यवाद!"

मुत्तुकुमरन् के भाषण से पिनांग के अब्दुल्ला का मुँह ज़रा-सा हो गया। गोपाल सकपका गया।

मुत्तुकुमरन् किसी बात की चिंता किये बिना, सिंह की चाल से मंच से उतरकर अपने आसन की ओर बढ़ा।

ग्यारह

मंच पर मुत्तुकुमरन् का इस तरह पेश आना, गोपाल को क़तई पसंद नहीं आया। उसे दिल-ही-दिल में यह डर काटने लगा कि पिनांग के अब्दुल्ला के दिल को चोट पहुँची तो मलेशिया की यात्रा और नाटक के आयोजन में बाधा पड़ेगी। नाटक के अंतिम दृश्य में अभिनय करते हुए भी वह इन विचारों और चिंताओं से मुक्त नहीं हो पाया।

नाटक के अंतिम दृश्य को देखकर दर्शक कुछ ऐसे गद्गद हो गये कि परदा गिरने के बहुत देर बाद भी तालियों की गड़गड़ाहट नहीं रुकी। मंत्री महोदय विदा होते हुए गोपाल और मुत्तुकुमरन् की प्रशंसा कर गये। अब्दुल्ला भी दाद देता हुए विदा हुए। गोपाल ने दूसरे दिन रात को अपने घर में भोज के लिए उन्हें आमंत्रित किया।

मंच पर पहनायी गयी गुलाब की माला के बिखरने की तरह भीड़ भी वहाँ से धीरे-धीरे छँट गयी।

कार्यक्रम के समाप्त होने पर कितने ही लोग गोपाल की प्रशंसा करने और हाथ मिलाकर विदा होने को आये। खिलते चेहरे से गोपाल उन सबसे विदा लेकर चल पड़ा! कार में घर चलते हुए उसने माधवी और मुत्तुकुमरन् से अपनी मनो-व्यथा सुनायी—

"दूसरों का दिल दुखाने के लिए बोलना कभी अच्छा नहीं। अब्दुल्ला को हमने यहाँ एक बड़े काम की आशा में बुलवाया था। मुझे डर है कि उनके दिल को चोट पहुँचे तो हमारा काम बिगड़ जायेगा।"

उसकी बातों का किसी ने कोई उत्तर नहीं दिया। गोपाल ने स्वयं अपनी बात जारी रखी, "मंच पर मर्यादा निभाना या संयम बरतना कोई बुरा काम नहीं है!"

मुत्तुकुमरन् अपना संयम खो बैठा और चुटकी लेते हुए बोला, "जो कमजोर होते हैं उनकी रगों में खून नहीं बहता, भय दौड़ता है।"

गोपाल के गालों पर मानो थप्पड़ पड़ी। माधवी ने यह सोचकर चुप्पी साधी कि दोनों में किसी भी एक का पक्ष लेने पर दूसरे का कोप-भाजन बनना पड़ेगा। कार के बँगले में पहुँचने तक गोपाल के क्रोध का पारा भी कुछ ऐसा चढ़ा हुआ था कि उसका मौन टूटा ही नहीं। मुत्तुकुमरन् ने उसकी ज़रा भी परवाह नहीं की।

रात को खाते समय भी कोई किसी से अधिक नहीं बोला। खा चुकने के बाद माधवी घर को चल पड़ी। मुत्तुकुमरन् ने भी आउट हाउस में जाकर बत्ती बुझायी और बिस्तर पर लेट गया। दस मिनट के अंदर टेलिफ़ोन की घंटी बजी। नायर छोकरे ने बताया, "बाबूजी पूछ रहे हैं कि ज़रा यहाँ आ सकेंगे?"

"उनसे कहो कि नींद आ रही है। सवेरे मिलेंगे!" कहकर मुत्तुकुमरन् ने टेलिफ़ोन रखा। थोड़ी देर में टेलिफ़ोन की घंटी फिर से बज उठी। उठाया तो माधवी बोली, "न जाने दूसरों को मूली-गाजर समझते हुए मज़ाक उड़ाने में आपको कौन-सा मज़ा आता है? नाहक़ दूसरों का दिल दुखाने से क्या फायदा?"

"तुम मुझे अकल सिखा रही हो?"

"नहीं-नहीं! ऐसी बात नहीं। आप अगर वैसा समझें तो मुझे बड़ा अफ़सोस होगा!"

"हो तो हो! उससे क्या?"

"मेरा दिल दुखाने में ही आपको चैन मिलता हो तो खुशी से दुखाइए।"

"बात बढ़ाओ मत। मुझे नींद आ रही है!"

"मैं बोलती रहूँ तो शायद आपको नींद आ जायेगी!"

"हाँ, तुम्हारी बोली मेरे लिए लोरी है! सवेरे इधर आओ न!"

"अच्छा, आऊँगी!"

मुत्तुकुमरन् ने फ़ोन रख दिया। पहले दिन के स्टेज-रिहर्सल में बड़ी देर हो जाने और अधिक जागरण की वजह से मुत्तुकुमरन् को सचमुच बड़ी नींद आ रही थी। लेटते ही वह ऐसी गहरी नींद सो गया कि सपने भी उसकी नींद में दखल देते हुए डर गये। सवेरे उठते ही उसे गोपाल का ही मुँह देखना पड़ा। गोपाल हँसता हुआ बड़ी आत्मीयता से बात कर रहा था, मानो पिछली रात कुछ हुआ ही न था। वह बता रहा था—

"आज सवेरे उठने के पहले चार-पाँच सभाओं के सचिवों और अधिकारियों ने फ़ोन किया था। एक ही दिन में हमारे नाटक की बड़ी माँग हो गयी है!"

"अच्छा!" मुत्तुकुमरन् के मुख से इस एक शब्द को छोड़कर कुछ नहीं निकला।

गोपाल के इस असमंजस को मुत्तुकुमरन् अच्छी तरह देख पा रहा था। गोपाल एक ओर उमपर गुस्सा उतारने की तैयारी कर रहा था और इस कोशिश में हारकर दूसरी ओर उसी की शरण में आ रहा था।

"अगले दो हफ़्तों में हमें मलेशिया जाना होगा। अपनी नाटक-मंडली के साथ जाकर एक महीना वहाँ नाटक खेलना है तो बहुत-सारा प्रबंध करना पड़ेगा। काम अभी से शुरू करें, तभी पूरा हो सकता है!" गोपाल ने ही बात आगे बढ़ायी।

"हाँ, बुलाने पर जाना ही है!" अब भी मुत्तुकुमरन् के मुख से नपा-तुला उत्तर ही मिला।

सुनकर गोपाल के मन में न जाने क्या हुआ! बोला, "मैं डर रहा था कि तुम्हारी बातों का अब्दुल्ला बुरा मान गये तो क्या हो? भला हुआ कि ऐसा कुछ नहीं हुआ। पर अब ऐसा लगता है कि मेरी बातों से तुम्हारे दिल को चोट पहुँची है।"

"....."

"मैंने कुछ बुरा तो नहीं कहा!"

"मैंने तो कल ही कह दिया न कि कमज़ोर लोगों की रगों में खून नहीं, भय दौड़ता है।"

"कोई बात नहीं! तुम मुझे कायर कहो, डरपोक कह लो, मैं मान लेता हूँ।"

"मैंने तुम्हें या और किसी को बुरा नहीं कहा! दुनिया की रीति की बात ही दुहरायी, बस!"

"छोड़ो, उन बातों को! तुम्हें भी मलेशिया चलना चाहिए! माधवी, तुम और मैं—तीनों हवाई जहाज़ से चलेंगे। बाकी लोग समुद्री जहाज़ से चले जायेंगे। सीन-सेट वगैरह को भी जहाज़ से भेज देना पड़ेगा।"

"मैं वहाँ जाकर क्या करूँगा? तुम लोग तो अभिनेता हो। तुम लोगों के न जाने से नाटक ही नहीं चलेगा। मेरे जाने से किसे क्या लाभ होगा?" मुत्तुकुमरन् ने पूछा।

"ऐसा न कहो! तुम्हें भी ज़रूर जाना चाहिए। कल ही पासपोर्ट के लिए अर्ज़ी दे देने का प्रबंध कर दूँगा। आज रात अब्दुल्ला को अपने यहाँ दावत पर बुलाया है। बात पक्की हो गयी तो यह समझो, सारा काम बन गया!"

"हाँ-हाँ! किसी तरह काम बन जाये तो ठीक!"

"इस तरह उखड़ी बातें करोगे तो कैसे काम चलेगा? सबमें तुम भी हो!"

मुत्तुकुमरन् ने देखा कि सहसा गोपाल में सबको अपने साथ कर लेने की भावना बढ़ी है। किसी काम की आशा में इस प्रकार की कृत्रिमता बरतने, दावत देने आदि बातों से मुत्तुकुमरन् को चिढ़ थी।

ऐसी बातों में मुत्तुकुमरन् की मनोभावना क्या होगी? गोपाल भी अच्छी तरह

से जानता था। फिर थोड़ी देर इधर-उधर की बातें कर गोपाल चला गया।

उसके जाने के थोड़ी देर बाद माधवी आ पहुँची। उसने भी आते ही पिनांग के अब्दुल्ला ही की बात उठायी। दावत की बात कही और यह भी कहा कि वे बड़े भारी रईस हैं···करोड़पति हैं।

"दस-पन्द्रह साल पहले दो गायक या दो नाटकवाले आपस में मिलते थे तो अपनी-अपनी कला की बातें किया करते थे, पर अब बात यह होती है कि किसे दावत देने से किसका काम कैसे बनेगा?—इसी पर विचार-विमर्श हो रहा है। कला की दुनिया सड़ गयी है—इसका सबूत इससे बढ़कर और क्या चाहिए?"

"क्या आप यह समझते हैं कि उस सड़ी हुई चीज़ को आप अकेले में सुधार सकते हैं?"

"क़तई नहीं। दुनिया को सुधारने के लिए मैंने अवतार नहीं लिया। लेकिन दो पुश्तों को एक साथ देखकर विचार कर रहा हूँ। राजाधिराजों को अपने द्वार पर आकर्षित करने वाले वे पुराने गंभीर कलाकारों और मंत्रियों और 'नाम बड़े पर दर्शन छोटे' वाले व्यक्तियों के दरवाज़ों पर मारे-मारे फिरने वाले आज के बौने कलाकारों में मुक़ाबला कहाँ? तुलना कर देखता हूँ तो दिल को ठेस पहुँचती है, माधवी!"

"यह सब कहते-कहते मुत्तुकुमरन् भाव-विभोर हो गया तो माधवी की समझ में नहीं आया कि क्या जवाब दे? थोड़ी देर के मौन के बाद बात पलटती हुई बोली, "नाटक लोगों को बहुत भा गया है। सभी बड़ी प्रशंसा कर रहे हैं! सभा वालों में 'डेट' के लिए होड़-सी लग गयी है। सब आपकी क़लम का कमाल है!"

"तुम्हारा अभिनय भी कहाँ कुछ कम था? मुझे चापलूसी की बातें ज़्यादा पसंद नहीं। तुमने प्रसंग छेड़ दिया तो मुझे भी बराबर होकर तुम्हारे क़दम पर चलना पड़ रहा है!"

"अच्छी बात को अच्छा कहना क्या कोई ग़लत काम है?"

"आजकल तो लोग बुरी-से-बुरी चीज़ को ही अच्छी-से-अच्छी चीज़ साबित करने की कोशिश क्या, उसे साबित ही कर देते हैं! इसलिए सचमुच की अच्छी चीज़ों के विषय में हमें मुँह पर लगाम लगानी पड़ रही है!"

"लगानी पड़े तो पड़े। पर मैं तो आपकी तारीफ़ सुनकर अघाती नहीं। मेरा जी चाहता है कि चौबीसों घंटे मेरे सामने कोई आपकी तारीफ़ करता रहे!" माधवी उसके पास ऐसी खड़ी थी, मानो पूर्णयौवना मदालसा ही साकार खड़ी हो। उसकी आँखों की चमक और होंठों की नमी में मुत्तुकुमरन् मानो नहा ही गया। उसकी देह पर लगी पाउडर की महक, उसके केशों पर लगे तेल की भीनी खुशबू और उसके बालों में गुँथे बेले की सुगंध, नासारंध्र से प्रवेश कर उसकी नस-नस में फैल गयीं। सुमधुर संगीत की तरह उसकी सुंदरता ने उसे बाँध लिया। फिर क्या

था ? मुत्तुकुमरन् ने उसे अपने आलिंगन में बाँध लिया। माधवी भी माधवी लता की तरह उससे लिपट गयी। उसके कानों में अपने फूल-से होंठ ले जाकर वह गद्गद् कंठ से बोली, "ऐसे ही रह जाने को जी चाहता है !"

"ऐसे ही रह जाने का जी करने से ही आदिम नर-नारी के बीच संसार का सृजन हुआ।"

उसकी बाँहें माला बनकर पीठ को लपेटती हुईं मुत्तुकुमरन् के मज़बूत कंधों पर आ रुकीं और कसने लगीं।

इसी समय थोड़ी दूर पर बँगले से आउट हाउस को आनेवाली वीथी पर किसी के जूतों की चरमर सुनायी दी।

"हाय, हाय ! लगता है कि गोपाल जी आ रहे हैं। छोड़िए, छोड़िए !" माधवी घबराकर अपने को छुड़ाने लगी। मुत्तुकुमरन् को यह नहीं भाया। उसकी आँखें लाल हो गयीं। माधवी को घूरकर देखते हुए उसपर अपना गुस्सा उतारा।

"कल रात को नाटक से लौटते हुए मैंने गोपाल से जो कुछ कहा था—उसीको तुम्हारे सामने भी दुहराता हूँ कि कमज़ोर की रंगों में खून नहीं, भय का भूत दौड़ता है।"

गोपाल यह सुनते हुए अंदर आया और बोला, "कल रात से ही कविता की भाषा में कोस रहे हो, गुरु !"

माधवी ने झट से सँभलकर, होंठों पर स्वाभाविक हँसी लाकर गोपाल का स्वागत किया।

"माधवी ! तुम्हारी तस्वीरों की दो प्रतियाँ चाहिए; 'पासपोर्ट' के 'आवेदन' के लिए। सोच रहा हूँ, कल ही सारे आवेदन भेज दूँ ! मुत्तुकुमरन् साहब को भी फ़ोटो स्टूडियो में जाकर फ़ोटो खिचवाना चाहिए। दोपहर तक तुम्हीं ले जाकर फ़ोटो का इंतज़ाम कर दो। दिन बहुत कम हैं !" गोपाल ने कहा।

"कहाँ ? पांडि बाज़ार के सनलाइट स्टूडियो में ही ले जाऊँ न ?"

"हाँ-हाँ ! वही ले जाओ। वहीं जल्दी तैयार कर देगा !"

माधवी और गोपाल के बीच की इन बातों में मुत्तुकुमरन् शामिल नहीं हुआ।

थोड़ी देर बाद गोपाल वहाँ से चलने लगा तो द्वार तक जाकर मुड़ा और आँखें मारकर बोला, "माधवी ! एक मिनट।" उसे इस तरह आँखें मारते देखकर मुत्तुकुमरन् का दिल कचोटने लगा।

माधवी की दशा साँप-छछूंदर की-सी हो गयी। जाये या न जाये। इस असमंजस में पड़कर गोपाल और मुत्तुकुमरन् को बारी-बारी से देखने लगी। गोपाल ने ज़ोर से उसका नाम लिया और ड्योढ़ी फलाँग गया। माधवी को जाने के सिवा और कोई रास्ता नहीं दीखा। मुत्तुकुमरन् की आँखों में उतर आयी

नफ़रत का सामना करने का वह साहस नहीं कर सकी ! गोपाल उसे वहीं नहीं छोड़कर बँगले तक ले गया।

गोपाल के आँखें मटकाकर बुलाने और उसके। उसके साथ बँगले तक जाने की बात पर मुत्तुकुमरन् के दिल में कैसे-कैसे विचार आयेंगे ? इस विचार ने माधवी को धर दबोचा। गोपाल की बातों पर उसका ध्यान नहीं जमा।

"सुना है, पिनांग के अब्दुल्ला तबीयत के बड़े शौक़ीन आदमी हैं। उनका तुम्हें ख़याल रखना होगा। होटल 'ओशियानिक' से उन्हें बुला लाने का भी काम तुम्हीं को सौंपनेवाला हूँ !"

"....."

"यह क्या ? मैं कहता जा रहा हूँ और तुम अनसुनी करती जा रही हो ?"

"नहीं तो ! मैं आपकी बात सुन ही रही हूँ। होटल ओशियानिक से अब्दुल्ला को बुला लाना है और···"

"और क्या ? उनकी खुशी का ख़्याल भी रखना। तुम्हें सुग्गे की तरह पढ़ाने की ज़रूरत नहीं है। तुम खुद समझदार हो।"

"....."

"दावत में किन-किनको बुलाया है—उनकी लिस्ट सेक्रेटरी के पास है। उसे लेकर देखो और अपनी ज़ुबानी सबको 'रिमाइंड' कर दो तो बड़ा अच्छा रहेगा !" दुबारा आँखें मटकाकर गोपाल ने उसकी पीठ पर थपकी दी। माधवी ने आज तक किसी मर्द के इस तरह थपकी देने पर शील-संकोच का अनुभव नहीं किया था। पर आज वह लज्जा से गड़-सी गयी। गोपाल के कर-स्पर्श से उसे उबकाई होने लगी। मुत्तुकुमरन् ने उसे इस हद तक बदल दिया था।

गोपाल ने पाया कि पीठ पर थपकी देते हुए या आँखें मटकाकर बातें करते हुए उसमें जो उत्साह भरता था और सिहरन-सी दौड़ती थी, उसका कोई नामो-निशान तक नहीं। उसने पूछा भी, "आज उखड़ी-उखड़ी-सी क्यों हो ?"

"नहीं, मैं तो हमेशा की तरह वैसी ही हूँ।" माधवी हँसने का उपक्रम करने लगी।

"अच्छा, मैं स्टूडियो जा रहा हूँ ! मेरी बातों का ख़याल रखना !" कहकर गोपाल चला गया।

माधवी के मन में एक छोटा-मोटा युद्ध ही छिड़ गया। पिनांग के अब्दुल्ला को गोपाल ने रात की दावत के लिए ही बुलाया था। उन्हें लिवा लाने के लिए शाम को सात बजे के क़रीब जाना काफ़ी था। लेकिन गोपाल के बात करने के ढंग से यह ध्वनि निकल रही थी कि पहले ही जाकर उनसे हँसी-खुशीभरी चुहल करती रहो और उसे लिवा लाओ।

माधवी के मन में, इस लमहों में वे सारी पुरानी स्मृतियाँ उभर आयीं, जब

कभी भी गोपाल ने आँखें मटकाकर, 'एक मिनट इधर आओ' कहकर बुलाया है और इसी प्रकार का काम सौंपा है। वहाँ जाकर उसने क्या-क्या नहीं किया ! ओह !

उन्हें दुबारा सोचते हुए उसे संकोच हो रहा था और वह शरम से गड़ी जा रही थी। मुत्तुकुमरन् जैसा, कला-गर्व में फूला रहनेवाला गंभीर नायक उसके जीवन में नहीं आया होता तो उसे आज भी ऐसा शील-संकोच नहीं हुआ होता। दुनिया में कुछ ऐसे लोग होते हैं, जिनके संपर्क में आने पर उसके पहले के जीवन के बेहूदा तरीक़ों को याद करते हुए संकोच महसूस होता है। याद आये तो चुल्लू भर पानी में मरने को जी करता है। माधवी और मुत्तुकुमरन् का संपर्क ऐसा ही था।

गोपाल की बातों में जो ध्वनि थी, उसके अनुसार तो माधवी को उसी समय होटल जाकर अब्दुल्ला से मिलना होता। शाम को सात बजे तक उसके साथ रहकर लिवा लाना होता। लेकिन माधवी ने उस दिन ऐसा नहीं किया। वह सीधे मुत्तुकुमरन् के सामने जा खड़ी हुई। लेकिन उसकी आँखें उसपर अंगार उगलने लगीं। आवाज़ में बिजली कड़क उठी—

"क्या हो आयीं ? उसने आँखें मारकर बुलाया था न !"

"न जाने, मैंने क्या पाप किया कि आप भी मुझ पर नाराज़ होते हैं।"

"उसका इस तरह आँखें मटकाने का तरीका मुझे बिल्कुल पसंद नहीं है।"

"तो मैं क्या करूँ ?"

"क्या करूँ, पूछती हो ? पालतू कुतिया बनकर उसके पीछे-पीछे भागती रहो, इससे बढ़कर और करने को क्या रखा है ?"

"गालियाँ दीजिए, खूब गालियाँ दीजिए ! मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी। मैं सब कुछ सुनने को तैयार हूँ, सहने को तैयार हूँ—कुतिया-चुड़ैल···"

"मान-मर्यादा ही न हो तो सब कुछ सुना जा सकता है, सहा जा सकता है। कुछ असर नहीं पड़ता।"

"आपके संपर्क में आने पर मैं बहुत कुछ बदल चुकी हूँ। जब आप ही दोष थोपेंगे तो मैं क्या करूँगी भला ! डूब मरूँ कहीं ?"

"पहले मेरी बातों का जवाब दो ! उस धूर्त ने तुम्हें बुलाया क्यों ?"

"बात कुछ नहीं ! अब्दुल्ला को दावत के लिए बुला लाना है !"

"जाना किसे है ?"

"और किसे ? मुझी को !"

"तुम क्यों जाओगी ? वही जाये ! या फिर वह अपने सेक्रेटरी-वेक्रेटरी को भेजकर बुला ले !"

"जब मुझे बुलाकर कहा है तब। मैं ना कैसे कह दूँ ?"

"हाँ, नहीं कह सकती ! इसीलिए मैं कल से रट लगा रहा हूँ कि कमज़ोर की

रंगों में ख़ून नहीं, भय ही दौड़ता है···"

"कला के हर क्षेत्र में आज व्यापार की बाज़ारी मिलावट आ गयी है। अब इसे सुधारा नहीं जा सकता । जैसे लोग अकालग्रस्त बेची न जानेवाली चीज़ें भी बेचकर पेट भरते हैं, वैसे ही आज के कलाकार किसी भी हालत में न खोई जानेवाली चीज़ें गँवाकर अपने बौने अस्तित्व को बचाने के लिए पैसे के पीछे मारे-मारे फिर रहे हैं। मैं मद्रास में ऐसे ही कलाकारों को देख रहा हूँ, जिनमें अपनी कला को लेकर गर्व अनुभव करने की तनिक भी मनोदृढ़ता बाक़ी नहीं रह गयी है। यह इस युग की महामारी ही है।"

"आपकी इन बातों को सुनने के लिए काश, मैं दस साल पहले आपसे मिली होती !" कहते-कहते माधवी का स्वर भर्रा गया। मुत्तुकुमरन् उसके पश्चात्ताप से प्रभावित हुआ। उसके संताप से उसका दिल पिघल गया। बात करने को कोई सिरा नहीं मिला तो वह कुछ देर तक टकटकी लगाये उसे देखता रह गया।

माधवी ने उसका मौन तोड़कर पूछा, "कहिए, अब मैं क्या करूँ ?"

"मुझसे क्यों पूछती हो ?"

"आपको छोड़कर और किससे पूछूँ ? उन्होंने जैसा कहा, मैं अब्दुल्ला से मिलने अभी नहीं जाऊँगी । अगर गयी भी तो शाम को जाऊँगी। और मैं अकेली नहीं, आप को भी साथ लेकर जाऊँगी !"

"मुझे ? मुझे क्यों ?"

"मेरे साथ आप नहीं जायेंगे तो और कौन जाएगा ?"—यह वाक्य सुनकर मुत्तुकुमरन् का तन-मन पुलकित हो उठा।

बारह

मुत्तुकुमरन् ने महसूस किया कि नारी की सुकुमारता अपने प्रेम प्रदर्शन में विलक्षणता और चातुरी लाने से चमक उठती है। 'मेरे साथ आप नहीं जायेंगे तो और कौन जाएगा ?' इस वाक्य ने उसपर जादू-सा कर दिया ! उसमें कैसी आत्मीयता टपकती थी ? 'उसके साथ चलने और उसका साथ देने को उसे छोड़कर दूसरा कोई व्यक्ति योग्य नहीं है' यह आशा उसमें कहाँ से बँधी ? यह भरोसा कहाँ से पैदा हुआ ? जहाँ यह सोचकर वह आत्म-विभोर हुआ वहाँ यह विचार करते हुए उसे यह हैरानी भी हुई कि मैं कौन हूँ कि उसपर, बेतरह अपना ग़ुस्सा उतारूँ ? उसका-मेरा परिचय कितने दिनों का है ?

उसके अधिकारों पर अधिकार जमाने का, उसे अपने इशारों पर नचाने का, या ढीला छोड़कर तमाशा देखने का अधिकार मुझे कहाँ से मिला और कैसे मिला ? यह सोचते-सोचते वह इस नतीजे पर पहुँचा कि अनन्य प्रेम की कोई डोर दोनों को गँठबंधन में बाँध रही है; बल्कि बाँध चुकी है।

शाम को अब्दुल्ला को बुलाने जाने के पहले माधवी ने मुत्तुकुमरन् को स्टूडियो हो आने के लिए बुलाया।

"मुझे तो मलेशिया नहीं जाना। फिर फ़ोटो खिंचवाने की क्या ज़रूरत है ?" मुत्तुकुमरन् ने कहा।

"आप नहीं चलेंगे तो मैं भी नहीं जाती !" माधवी ने कहा।

"तुम तो नाटक की कथा-नायिका हो। तुम न जाओगी तो नाटक नहीं चलेगा ! इसलिए तुम्हें जाना ही पड़ेगा !" मुत्तुकुमरन् ने हँसते हुए उसकी बातों का विरोध किया।

'कथानायक ही जब नहीं जा रहा तो कथानायिका के जाने से क्या फ़ायदा ?"

"गोपाल तो जा रहा है न ?"

"मैं अब गोपाल की बात नहीं करती ! अपने कथानायक की बात करती हूँ।"

"वह कौन है ?"

"समझकर भी नासमझ बननेवालों को कैसे समझाया जाये ?"

माधवी की इस आत्मीयता पर वह फिर न्योछावर हो गया। थोड़ी देर बाद माधवी ने स्टूडियो जाने के लिए बुलाया तो उसने कोई आपत्ति नहीं की। स्टूडियो जाकर 'पासपोर्ट' के लिए फ़ोटो खींचने के बाद दोनों ने एक साथ मिलकर एक फ़ोटो खिंचवाया।

शाम को अब्दुल्ला को लाने के लिए 'ओशियानिक' जाते हुए माधवी अकेली नहीं चली। उसकी मानसिकता से परिचित होने के लिए मुत्तुकुमरन् को भी साथ लेकर कार में रवाना हुई।

इधर इनकी कार फाटक के बाहर हो रही थी और उधर गोपाल की कार बँगले में घुस रही थी। गोपाल को यह समझते देर नहीं लगी कि माधवी अभी अब्दुल्ला को लाने के लिए जा रही है। उसके आदेश के अनुसार अकेली न जाकर मुत्तुकुमरन् को भी साथ लिये जा रही है। इससे उसे दुहरा क्रोध चढ़ आया और वह मुँह चिढ़ाकर बोला, "मैंने तो तभी जाने को कहा था, पर तुम अभी जा रही हो !"

"हाँ, इन्हें फ़ोटो-स्टूडियो ले गयी थी। देर हो गयी। अब जाकर निकल पायी।"

"सो तो ठीक है। लेकिन इन्हें क्यों कष्ट दे रही हो ? अब्दुल्ला को लाने के लिए सिर्फ़ तुम्हारा जाना काफ़ी नहीं ?" गोपाल ने मुत्तुकुमरन् को काट देने का विचार किया।

माधवी को धर्म-संकट से बचाने के विचार से मुत्तुकुमरन् स्वयं आगे बढ़कर बोला, "बात यह है कि मैं भी ओशियनिक देखना चाहता था। इसलिए मैं स्वयं इसके साथ चल पड़ा।"

गोपाल की समझ में नहीं आया कि इस हालत में मुत्तुकुमरन् को गाड़ी से कैसे उतारे। वह झींककर बोला, "अच्छा, तो दोनों ही हो आओ। लेकिन गाड़ी में लौटते हुए उनसे बातों में न उलझना। उनके ज़रिये ही हमारा काम होना है। उनका दिल दुखाने का कोई बहाना नहीं ढूँढ़ लेना।"

वह माधवी को आगाह कर धड़ाधड़ अन्दर चला गया। माधवी को उसकी चाल से ही उसके क्रोध का पता चल गया। पर मुत्तुकुमरन् के सामने उसने इसे प्रकट नहीं किया।

मुत्तुकुमरन् गुस्से की हँसी हँसते हुए बोला, "इसका जी तो मेरा हाथ खींचकर कार से उतारने को हो रहा था, पर वह हो नहीं पाया।"

संयोग से उस समय माधवी कार चला रही थी। तीसरे व्यक्ति के न होने से वे दोनों खुलकर बातें कर पा रहे थे।

पिनांग के अब्दुल्ला के कमरे में जब वे गये, तब उनके साथ चार-पाँच मुलाक़ाती और थे। अब्दुल्ला ने दोनों का स्वागत कर कमरे में ही बिठा लिया।

"गोपाल साहब ने रात की 'डिनर' के लिए ही तो बुलाया है। साढ़े आठ बजे के क़रीब आना काफ़ी नहीं होगा क्या? अभी साढ़े छः ही बज रहे हैं!" अब्दुल्ला ने घड़ी देखकर कहा।

"गोपालजी के विचार से आप अभी आ जाते तो थोड़ी देर बातचीत भी हो जाती। बाद में डिनर तो है ही। बातों में समय कटते कितनी देर लगती है? पल भर में आठ बज जायेंगे!" माधवी ने उत्तर दिया।

"सचमुच आपका कल का अभिनय बहुत अच्छा था। मलेशिया में आपका बड़ा नाम होगा।" अब्दुल्ला ने माधवी के मुख के सामने माधवी की ऐसी तारीफ़ की कि वह शरमा गयी।

आये हुए मुलाक़ाती एक-एककर विदा हुए।

मुत्तुकुमरन् को पास बिठाकर अब्दुल्ला को इस तरह तारीफ़ करते देखकर माधवी सिकुड़-सी गयी और बोली, "सारा-का-सारा श्रेय तो इनका है। इन्होंने नाटक इतना अच्छा लिखा है कि हम आसानी से अभिनय कर नाम पा गये।"

"पर यह भी हो सकता है न कि अभिनेताओं की किरदारी से लिखनेवाले का नाम भी रोशन हो जाये!"—अब्दुल्ला ने फिर वही चक्की पीसी।

मुत्तुकुमरन् इस विवाद में पड़ना नहीं चाहता था। क्योंकि उसके विचार से कला का महत्त्व न जाननेवाले व्यापारी ऐसे ठूँठ थे, जिनपर हज़ार कोशिश करने पर भी कील न चढ़ती। वह अपने विचारों को 'भैंस के आगे बीन' होने नहीं देना

चाहता था। अब्दुल्ला की क़दर करते हुए वह उससे कला की बात करे तो वह कला के प्रति द्रोह हो जाएगा और कला की हत्या का पाप सिर पड़ेगा—यह सोचकर वह पैर-पर-पैर चढ़ाये चुपचाप बैठा रहा।

उसकी इस मनोदशा को माधवी ने पढ़ लिया। अब्दुल्ला की बातों की लीक बदलने के विचार से बोली, "पिछले महीने 'गंगा नाटक-मंडली' मलेशिया गयी थी न? सुना है कि आप ही की 'कांट्रेक्ट' पर वहाँ गयी थी। वह वहाँ नाम-यश भी प्राप्त कर पायी?"

"अब्दुल्ला की कांट्रेक्ट हो तो नाम आप-ही-आप हो जाता है। हमारी कंपनी पचीस सालों से नाट्य-मंडली या नाटक कंपनियों को तमिळनाडु से ले जाती है और वहाँ प्रोग्राम चलाती है। मलेशिया में अब्दुल्ला कंपनी का एक भी प्रोग्राम अब तक नाकामयाब नहीं हुआ। इसे बढ़ी-चढ़ी बात न मानिए तो अब्दुल्ला कंपनी की यह खुसूसियत है!"

"कंपनी के बारे में हमने बहुत कुछ सुन रखा है।"

"हम पेशे से डायमंड मर्चेंट हैं, जौहरी हैं। कला के प्रोग्राम तो शौक़ के लिए करते हैं।"

मुत्तुकुमरन् उन बातों से ऊब गया तो उसने माधवी को इशारा किया।

"चलिए! गोपाल साहब आपका इंतज़ार करते होंगे! जल्दी चलें तो अच्छा हो।"

माधवी के कहने पर अब्दुल्ला कपड़े बदलने अंदर चले गये।

कमरे में ड्रेसिंग टेबुल में आईने के पास विभिन्न सेंटों की छोटी-बड़ी शीशियाँ करीने से सजी थीं। अब्दुल्ला कपड़े बदलकर एक आईने के सामने जाकर खड़े हुए और एक शीशी खोलकर शरीर पर 'सेंट' लगाने लगे। इत्र की खुशबू सारे कमरे में बिजली की तरह फैल गयी। एक दूसरी शीशी में लगे 'स्प्रे' से गले और कुरते के कॉलर में 'सेंट' छिड़क ली। कपड़े बदलने और तैयार होने में उनमें जेम्स बांड की-सी फुर्ती थी। उनकी एक-एक बात और अदा में शौक़ चर्रा रहा था।

उन्होंने होटल के बैरे को बुलाकर चाय मँगवायी। मना करने पर भी नहीं माना। चाय तैयार कर वे तीनों प्यालों में डालने लगे तो माधवी मदद को आगे बढ़ी। यह देखकर अब्दुल्ला बहुत खुश हुए।

मुत्तुकुमरन् सब से बैठा था। चाय पीते ही तीनों चल पड़े। जाते-जाते माधवी ने उस 'स्प्रे' वाली शीशी के बारे में पूछा। "लीजिए, इस्तेमाल कीजिए!" कहते हुए अब्दुल्ला ने वह शीशी उठाकर माधवी को दे दी।

"नहीं, मैंने यों ही पूछा था!" कहकर माधवी ने लेने से इनकार किया तो, "नो, नो! कीप इट···डोंट रिफ़्यूज़।" कहकर उसके हाथ में थमाकर ही अब्दुल्ला ने दम लिया।

मुत्तुकुमरन् को माधवी पर क्रोध आया। यदि माधवी अपनी ज़ुबान पर काबू रखती और अब्दुल्ला से सेंट की बात नहीं पूछती तो क्या वे भिखमंगों को भीख देने की तरह उसके हाथों में 'सेंट' की शीशी उठाकर थमाते? भड़कते क्रोध में भी उसका विचार औरतों की इस आम कमज़ोरी पर गया कि सारी दुनिया में बिरला ही ऐसी कोई औरत होगी, जो सुगंधित वस्तुओं, पुष्पों और साड़ियों के मामले में उद्विग्न और चंचल न हो उठती हो! पर अपनी इच्छित वस्तुओं को माँगने की एक मर्यादा होती है। जैसे एक कुलीन स्त्री का सुगंध, पुष्प, साड़ी आदि के विषय में अन्य पुरुषों से पूछना बेहूदा है, वैसे ही माधवी का अब्दुल्ला से इस बारे में पूछना भी उसे अशिष्ट लगा।

यह सब सिने जगत में जाने का नतीजा है। यह सोचकर उसने उसे दिल-ही-दिल में माफ़ भी कर दिया।

कार में मांबलम जाते हुए अब्दुल्ला मलेशिया की यात्रा के विषय में एक-पर-एक सवाल करते जा रहे थे।

"तुम्हारी मंडली के साथ कुल कितने लोग आयेंगे? कौन-कौन हवाई जहाज़ से आयेंगे? कौन-कौन समुद्री जहाज़ से आयेंगे?"

माधवी जो कुछ जानती थी, बताये जा रही थी। कार की अगली सीट पर मुत्तुकुमरन् माधवी के साथ बैठा था और अब्दुल्ला पिछली सीट पर अकेले बैठे थे।

बँगले के द्वार पर पोर्टिको में गोपाल ने अब्दुल्ला का स्वागत किया और स्वागत करते हुए हाथी की सूंड जैसी भारी गुलाब के फूलों की माला अब्दुल्ला को पहनायी। फिर दावत में आये हुए अभिनेता-अभिनेत्रियों, प्रोड्यूसरों और सिनेमा-जगत् के दूसरे व्यक्तियों से अब्दुल्ला का परिचय कराया। दावत के पहले सब बैठकर हँसी-खुशी बातें करते रहे।

गोपाल के दावत का इन्तज़ाम और उसका ठाठ-बाट देखकर अब्दुल्ला दंग रह गये और एक तरह से मोहित भी हो गये। न जाने क्यों, गोपाल उस दिन मुत्तुकुमरन् और माधवी से कुछ खिंचा-सा रहा।

दावत के समय अब्दुल्ला अभिनेत्रियों और एक्स्ट्राओं के झुंड के मध्य बैठाये गये। लगा कि कोई अमीर शेख अपने हरम में बैठा हो। अभिनेत्रियों की खिल-खिलाती हँसी के बीच अब्दुल्ला के ठहाके पटाखे की तरह छूट रहे थे।

दावत के बाद यह प्रश्न उठा कि लौटते हुए अब्दुल्ला को ओशियानिक पर पहुँचाने कौन जाये? माधवी हिचकते हुए गोपाल के सामने जाकर खड़ी हुई कि शायद उसी को पहुँचाना पड़ेगा।

"न, तुम्हें नहीं जाना है। जाकर अपना काम देखो! तुम्हें तमीज़ नहीं! सारी दुनिया को साथ लेकर चलोगी!" गोपाल ने ज़रा कड़े शब्दों में कहा तो माधवी

को यह तमाचा-सा लगा। 'आ बला, गले से लग' कहकर जानेवाली के सामने से आयी बला गले से टल गयी तो वह मन-ही-मन खुश हो रही थी। उसने देखा कि किसी उप-अभिनेत्री के साथ अब्दुल्ला को गोपाल ओशियानिक भेज रहा है। उसने चैन की साँस ली। अब्दुल्ला हाथ जोड़कर सबसे विदा हुए।

खाना खाने के तुरन्त बाद मुत्तुकुमरन् आउट हाउस चला आया था। सिर्फ़ माधवी सबको विदा करने के लिए 'पोर्टिको' में खड़ी थी। उस समय माधवी के मन में यह विचार उठ रहा था कि मुत्तुकुमरन् मेरी परीक्षा लेने के लिए ही जल्दी-जल्दी आउट हाउस चला गया है कि मैं अब्दुल्ला को पहुँचाने अकेली ओशियानिक जाती हूँ कि नहीं?

अब उसके मन में इस बात की खुशी हो रही थी कि अब्दुल्ला के साथ मेरे अकेले न जाने से मुत्तुकुमरन् को खुशी होगी।

एक-एक करके सब गोपाल से विदा लेकर चले। कुछेक माधवी से भी विदा हुए। सबको हाथ जोड़कर उसने विदा किया। सबके जाने के बाद, घर में काम करने वाले, गोपाल के सेक्रेटरी और माधवी ही वहाँ बाकी रह गये थे। नायर छोकरा टेलिफ़ोन के पास विनम्रता का पुतला बनकर खड़ा था। अचानक उन लोगों के सामने गोपाल माधवी पर कहर भरा जहर उगलने लगा। जिस अदम्य क्रोध को उसने अबतक दबा रखा था, वह फूट पड़ा—

"बड़ी चरित्रवान बन गयी है, मानो मैं त्रिया-चरित समझता नहीं! चर्बी चढ़ गयी है। मैंने पढ़ा-पढ़ाकर कहा था कि दो या तीन बजे अब्दुल्ला के यहाँ जाओ, थोड़ी देर बातें करके फिर बुला लाओ। मेरी बातों पर कान न देकर अपनी मर्ज़ी की कर रही है। यह सब मुझे अच्छा नहीं लगता। मैं देखता आ रहा हूँ कि उस्ताद के इस घर में आने के बाद तुम्हारी चाल बदल रही है।"

माधवी बिना कोई जवाब दिए सिर झुकाकर खड़ी रही। उसकी आँखों में आँसू छलक आए। इसके पहले चार जनों के मध्य गोपाल ऐसी बातें करता था तो भी उसके दिल पर उसका कोई असर नहीं होता था। सब झाड़-पोंछकर गोपाल से पहले की तरह मिलने-जुलने लग जाती थी। अब वह जिसके वश में हो चुकी थी, उसका अहम और स्वाभिमान भी अब उसके मन में घर कर बैठे थे। गोपाल के इन वार्तावों के खिलाफ़ ज्वार-भाटा तो उठे। पर आदत पड़ जाने से गोपाल के मुँह के सामने कुछ कह नहीं पायी। पहले ऐसी बातों को सुनती हुई काठ की तरह खड़ी रहती। पर आज तन-बदन में आग-सी लग गयी।

गोपाल कोई दस मिनट तक अपनी बेलगाम ज़बान को हाँककर अंदर चला गया।

माधवी इतनी लाल-पीली हो गयी कि उसे रुलाई आ गयी। वह सीधे आउट हाउस की ओर बढ़ी। ड्राइवर ने बीच में ही आकर कहा, "मालिक ने आपको घर

छोड़ आने को कहा है !"

माधवी ने गोपाल पर का गुस्सा ड्राइवर पर उतारा, "कोई ज़रूरत नहीं। तुम अपना काम देखो। मुझे अपने घर का रास्ता मालूम है !"

"अच्छा ! मालिक को यही कह दूँगा !"कहकर ड्राइवर चला गया।

आउट हाउस में जाते-जाते माधवी को रुलाई आ गयी। मुत्तुकुमरन् को देखते ही वह फूटकर रो पड़ी। रोते-रोते वह मुत्तुकुमरन् के सीने से मुरझायी माला की भाँति लग गयी !

"क्या है ? क्या हुआ ? किसने क्या कहा ? इस तरह क्यों रो रही हो ?" मुत्तुकुमरन् ने घबराकर पूछा। कुछ देर तक वह कुछ बोल नहीं पायी। बोल फूटने के बदले सिसकी ही फूटी। मुत्तुकुमरन् ने बड़े प्यार से उसकी पीठ पर थपथपाकर सांत्वना दी तो वह अपने को सँभालकर बोली, "मुझे घर जाना है। बस का टाइम हो गया है। टैक्सी के लिए मेरे पास पैसे नहीं हैं। आप मेरा साथ दें तो मैं पैदल ही घर चलूँगी। मेरा और कोई साथी नहीं है। मैं अकेली हूँ···अबला हूँ।"

"क्या हुआ ? क्यों ऐसी बातें करती हो ? साफ़-साफ़ बताओ !"

"वह कहते हैं कि मैं त्रिया-चरित्र खेल रही हूँ। अब्दुल्ला को बुला लाने के लिए मैं अकेली क्यों नहीं गयी ? आपके आने पर मेरा बर्ताव ही बदल गया है !"

"कौन कहता है ? गोपाल ?"

"उनके सिवा और कौन···?"

मुत्तुकुमरन् की आँखें क्रोध से लाल हो उठीं। कुछ पल वह कुछ बोल नहीं पाया। थोड़ी देर बाद उसका मुँह खुला, "अच्छा, चलो ! मैं तुम्हें घर छोड़कर आता हूँ !"

मुत्तुकुमरन् उसे साथ लेकर चल पड़ा। उन दोनों के बँगले की चारदीवारी के अन्दर ही गोपाल नेअ ाकर उनका रास्ता रोका !

"तुमने गुस्से में आकर जो कहा, ड्राइवर ने आकर बता दिया है। मैंने कुछ ग़लत तो नहीं कहा। हमारा परिचय आज या कल का नहीं है। कितनी ही ऐसी बातें मैंने कही हैं। अब कुछ दिनों से गुस्सा तुम्हारी नाक पर चढ़ा रहता है। अजनबी समझकर मुझपर सारा गुस्सा निकालने लगो तो मेरे लिए कहने को कुछ नहीं है।"

माधवी उसकी बातों का कोई जवाब दिए बिना सिर झुकाए खड़ी रही। मुत्तुकुमरन् भी कुछ बोला नहीं। गोपाल ने ताली बजाकर किसी को बुलाया। ड्राइवर ने कार लाकर माधवी के नजदीक़ खड़ी की।

मुत्तुकुमरन् चुपचाप यह देखता खड़ा रहा कि माधवी अब क्या करती है।

"बैठो ! घर पर उतरकर कार वापस भिजवा देना। मेरा दिल न दुखाओ !" गोपाल मानों गिड़गिड़ाया।

माधवी ने मुत्तुकुमरन् को यों देखा, मानो उसकी सलाह चाह रही हो। मुत्तुकुमरन् ने उसे अनदेखा कर और कहीं देखा।

"तुम ही कहो उस्ताद! माधवी मुझपर नाहक़ नाराज़ हो रही है। तुम्हीं समझाकर घर भेजो"—गोपाल ने मुत्तुकुमरन् से विनती की।

मुत्तुकुमरन् ने उसकी बातों पर भी कान नहीं दिया। होंठों पर हँसी लाकर चुप रह गया। लेकिन वह इस तरह खड़ा था कि आज माधवी के दृढ़ चित्त की टोह लेकर ही रहेगा।

एकाएक गोपाल ने एक काम किया। इशारे से ड्राइवर को उसकी सीट से उतारकर बोला, "आओ! मैं ही तुम्हें 'ड्राप' कर आऊँ!"

माधवी 'न'···नहीं कह सकी। हिचकते-हिचकते मुत्तुकुमरन् की ओर देखती हुई कार की अगली 'सीट' का द्वार खोलकर बैठ गयी।

गोपाल ने कार 'स्टार्ट' की तो माधवी ने मुत्तुकुमरन् से बिदा लेने की मुद्रा में हाथ हिलाया। पर उसने बदले में हाथ नहीं हिलाया। इतने में कार बँगले का फाटक पार कर सड़क पर हो गयी। वह समझ गयी कि मुत्तुकुमरन् उसके इस व्यवहार से असंतुष्ट अवश्य हुआ होगा। घर पहुँचने तक वह गोपाल से कुछ नहीं बोली, गोपाल ने भी उसकी उस समय की मनोदशा का अनुमान करके उससे बात करने की कोशिश नहीं की। लाइडस रोड तक आकर उसे उसके घर छोड़कर गोपाल लौट गया। घर के अंदर जाते ही माधवी ने धड़कते दिल से मुत्तुकुमरन् को फ़ोन किया।

"आप बुरा तो नहीं मान गए! उनकी इस गिड़गिड़ाहट पर मैं इनकार नहीं पायी!"

"हाँ, पहले से भी अच्छा साथी मिल जाए तो इनकार कैसे कर पाओगी?" एक-एक शब्द पर ज़ोर देते हुए मुत्तुकुमरन् ने पूछा। आवाज़ में दबा हुआ क्रोध गूँज उठा।

"आपकी बात समझ में नहीं आती। लगता है कि आप गुस्से में बोल रहे हैं!"

"हाँ, ऐसा ही समझ लो!" कड़े स्वर में जवाब देकर मुत्तुकुमरन् ने चोंगा पटक दिया। माधवी के दिल पर ऐसी करारी चोट पड़ी कि वह किंकर्तव्य-विमूढ़ होकर फ़ोन हाथ में लिये खड़ी रही। फिर फ़ोन रखकर बिस्तर पर जा पड़ी और सुबक-सुबक कर रोने लगी। उसे लगा कि उसकी बदक़िस्मती से ही मुत्तुकुमरन् भी उसे ग़लत-सलत समझ रहा है। साथ ही, उसके मन में यह बात भी आयी कि इसमें मेरा ही दोष बड़ा है। उसके पास जाकर रोयी-धोयी। फिर साथ चलने को मना लायी और आधे रास्ते में ही उसे छोड़कर गोपाल की कार में चली आयी! इस हालत में हर कोई बुरा ही मानेगा।

तेरह

उस रात वह सोयी ही नहीं। आँसुओं से तकिया गीला हो गया। वह यह अनुमान नहीं लगा सकी कि उसका मन कैसे और कहाँ से कमज़ोर हुआ कि मुत्तुकुमरन् को घर पहुँचाने के लिए साथ चलने की प्रार्थना करने और उसके तुरन्त मानकर साथ चले आने के बाद भी वह उसे ठुकराकर, गोपाल के साथ कार में चल पड़ी थी। अब अपनी करनी पर सोचते हुए उसे स्वयं ग्लानि का अनुभव हो रहा था।

वह इस सोच में पड़ गयी कि कल कौन-सा मुँह लेकर मुत्तुकुमरन् से मिलूँगी! गोपाल के स्वयं घर पहुँचाने के लिए तैयार हो जाने पर, मैं उसका मन रखने के लिए कैसे मान गयी? यह सोचते हुए अपनी करनी पर उसे हैरानी हो रही थी।

सुबह उठने पर उसे एक दूसरी हैरानी का सामना करना पड़ा। उसकी वजह से गोपाल से मिलने में भी उसे संकोच का अनुभव हो रहा था। दरअसल डर लग रहा था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि अब क्या करे? कारण आज की पहली डाक से उसके नाम 'जिल जिल' का ताज़ा अंक आया था, जिसमें मुत्तुकुमरन् से कनियळकन की भेंट-वार्ता छपी थी। 'जिल जिल' कनियळकन ने भेंटवार्ता के बीच एक फ़ोटो भी छपवाया था। मुत्तुकुमरन् और माधवी के अलग-अलग चित्रों को कैंची की करामात से काट-छाँटकर ऐसा एक ब्लाक बनवाया गया था, जिसमें दोनों सटकर खड़े थे। भेंट के बीच मुत्तुकुमरन् की ज़ुबानी यह बात छापी गयी थी कि माधवी जैसी लड़की मिले तो मैं शादी करूँगा। इसे पढ़कर उसे कनियळकन पर क्रोध चढ़ आया। माधवी ने सोचा कि जिस प्रकार मेरे नाम 'जिल जिल' का यह अंक आया है, उसी प्रकार गोपाल और मुत्तुकुमरन् के नाम भी गया होगा। उसने यह अनुमान लगाने का भी प्रयत्न किया कि इसे पढ़कर गोपाल के मन में कैसी-कैसी भावनाएँ सिर उठाती होंगी!

उसका मुत्तुकुमरन् के साथ एक चित्र में सटकर खड़े होने और मुत्तुकुमरन् के मुँह से उस जैसी लड़की से शादी की बातों को देख-पढ़कर गोपाल कैसे जल उठेगा?—यह बात वह एक भुक्तभोगी की भाँति जानती थी। इसलिए उस दिन उन दोनों से मिलने में उसे भय-संकोच हो रहा था।

उसने मन में निश्चय किया कि आज मांबलम की तरफ़ न जाना ही अच्छा है ताकि मुत्तुकुमरन् या गोपाल से मुलाकात नहीं हो पाये। लेकिन अप्रत्याशित रूप से ग्यारह बजे के क़रीब गोपाल ने उसे फ़ोन पर बुलाया और बोला, "पासपोर्ट जैसे कुछ ज़रूरी कागज़ात पर दस्तख़त करना है। एक बार आ जाओ।"

"मेरी तंबीयत ठीक नहीं है। अगर जल्दी हो तो किसी के हाथ भिजवा दीजिए। हस्ताक्षर कर दूँगी।" उसके यहाँ जाने से बचने के लिए उसने यह बहाना बनाया। उसे इस काम में सफलता मिली। गोपाल यह मान गया कि वह ड्राइवर के हाथों आवेदन आदि पर हस्ताक्षर करने को भेज देगा।

उसे मालूम था कि मुत्तुकुमरन् फ़ोन नहीं करना चाहेगा। लेकिन उसे भी फ़ोन करने से भय-संकोच होता था। पिछली रात को मुत्तुकुमरन् ने जो उत्तर दिया था, वह अब भी उसके मन में खटक रहा था। मुत्तुकुमरन् की कड़ी बातों से बढ़कर उसे अपनी ही ग़लती कहीं ज़्यादा अखर गयी। मुत्तुकुमरन् के क्रोध की वह कल्पना भी नहीं कर सकी।

उस दिन वह बड़ी उधेड़बुन में पड़कर घर पर ही रह गयी। बाहर कहीं नहीं गयी। गोपाल का ड्राइवर दो बजे के बाद आया और कागज़ों पर हस्ताक्षर ले चला गया। उसे इस बात की चिंता सताने लगी कि फॉर्म आदि भरकर मुत्तुकुमरन् से इस तरह के हस्ताक्षर लिये होंगे कि नहीं ? क्योंकि उसे इस बात का डर सताने लगा था कि पिछली रात की घटना से मुत्तुकुमरन् उससे और गोपाल से नाखुश हैं। इसलिए संभव है कि मलेशिया जाने से इनकार कर दे। एक ओर निष्कलंक वीर के आत्माभिमान और कवि के विद्या-गर्व से भरे मुत्तुकुमरन् की याद में उसका दिल द्रवित हो रहा था और दूसरी ओर उसके निकट जाते हुए डर भी लग रहा था। उस पर अपार प्रेम होने से और उस प्रेम के भंग हो जाने के डर से वह बड़ी दुविधा में पड़ गयी। उसने यह निश्चय किया कि यदि मुत्तुकुमरन् मलेशिया जाने के डर से इनकार कर दे तो उसे भी वहाँ नहीं जाना चाहिए। इस तरह का निर्णय लेने की हिम्मत उसमें थी। लेकिन उस हिम्मत को कार्य रूप देने की हिम्मत नहीं थी।

जनवरी के प्रथम सप्ताह से तीसरे सप्ताह तक मलेशिया और सिंगापुर में भ्रमण करने का आयोजन हुआ था। मुत्तुकुमरन को साथ लिये बिना, सिर्फ़ गोपाल के साथ विदेश-भ्रमण करने को उसका मन नहीं हो रहा था। जीवन में पहली बार और अभी अभी उसके हृदय में गोपाल के प्रति भय और भेदभाव के अंकुर फूटे थे।

गोपाल के बँगले में काम करनेवाले छोकरे नायर को फ़ोन पर बुलाकर माधवी ने पूछा, "तुम्हें यह पता है कि नाटक लिखने वाले बाबू मलेशिया जा रहे हैं या नहीं ?" पर उसे इस बात का कुछ अधिक पता नहीं था। ज़्यादा पूछने पर, 'आप ही पूछ लीजिये' कहकर वह आउट हाउस का फ़ोन मिला देगा। ऐसी हालत में वह क्या बोले और कैसे बोले। यह भय-संकोच अब भी उसके मन से नहीं गया था।

मुत्तुकुमरन् से घर पहुँचाने की प्रार्थना करके, गोपाल के साथ घर लौटने की अपराधी भावना उसके दिल में कुंडली मारे बैठ गयी थी और बाहर होने का नाम ही नहीं लेती थी ! तो बेचारी क्या करे ? दूसरे दिन भी तबीयत खराब होने

के बहाने मांबलम की ओर नहीं गयी।

"कोई जल्दी नहीं। तबीयत ठीक होने पर आ जाना। बाक़ी ठीक है।" गोपाल ने तो फ़ोन कर दिया। लेकिन वह जिस फ़ोन की प्रतीक्षा में थी, वह नहीं आया। मुत्तुकुमरन् को फ़ोन करने के लिए वह तड़प उठी। पर भय ने हाथ रोक दिया। वह तो हठ ठाने बैठा था, फ़ोन क्यों करने लगा!

माधवी को लगा कि उससे बातें किये बिना वह पागल हो जाएगी। 'आउट हाउस' में हाथ भर की दूरी पर फ़ोन होते हुए भी वह कुछ कहता क्यों नहीं? वह तड़प उठी कि अभी जाकर मुत्तुकुमरन् से क्यों न मिल लूँ? उस आवेग में वह यह भूल गयी कि उसने गोपाल से झूठमूठ का बहाना किया था कि तबीयत ठीक नहीं है। शाम को पाँच बजे तक वह अपने मन को काबू में रख पायी। पर साढ़े पाँच बजते-न-बजते वह हार गयी और हाथ-मुँह धोकर कपड़े बदलकर चल पड़ी।

वह चाहती तो गोपाल से कहकर कार मँगवा सकती थी। लेकिन टैक्सी पर जाने के विचार से चल पड़ी। जब वह 'टैक्सी स्टैंड' पर पहुँची, तब वहाँ कोई टैक्सी नहीं थी। टैक्सी मिलने में बड़ी देर हो गयी। उस तनाव में उसे लगा कि सिर्फ़ मुत्तुकुमरन् ही नहीं, सारी दुनिया उससे रूठ गयी है। हर कोई किसी-न-किसी बात पर उसी पर गुस्सा उतार रहा है और उसी से बदला ले रहा है। उसे अपने आप पर भी खीझ-सी हो आयी।

घर से अजंता होटल तक पहुँचते हुए उसने देखा कि रास्ते पर पैदल चलने वाले लोग उसे घूर-घूरकर देखते जा रहे हैं। टैक्सी की प्रतीक्षा में खड़ी रहते हुए, उसे इतनी परेशानी हुई थी कि वह आत्मग्लानि से गड़ गयी थी।

कद-काठी से ऊँची, गदराये बदन वाली किसी औरत को रास्ते चलते देखकर ही रास्ते पर चलती आँखें उसे निगल जाती हैं। सिने-सितारे जैसी नपे-तुले नाक-नक्श वाली किसी सुन्दरी पर नज़र पड़ जाए तो पूछना क्या? नोचकर न खा लेंगी? माधवी पर भी ऐसी नज़रें उठीं कि शरम से वह नज़र ही नहीं उठा पायी।

आधे घंटे के बाद एक टैक्सी मिली। इधर टैक्सी बोग रोड का मोड़ ले रही थी कि उधर गोपाल की कार कहीं बाहर जा रही थी। माधवी ने गोपाल को देख लिया। पर भाग्य से गोपाल ने माधवी को नहीं देखा। माधवी ने टैक्सी को बँगले के द्वार पर नहीं, आउट हाउस के द्वार पर रुकवाया। 'आउट-हाउस' के झरोखों से बत्ती की रोशनी आ रही थी। भला हुआ कि मुत्तुकुमरन् कहीं बाहर नहीं गया था। यहाँ आते हुए जिस झंझट का सामना करना पड़ा था, उसकी पुनरावृत्ति न हो—इसलिए माधवी ने टैक्सी को रुकवा लिया।

छोकरा नायर द्वार पर मानो रास्ता रोके खड़ा था। वह बोला, "बाबूजी ने किसी को अन्दर आने को मना किया है।"

माधवी ने आँखें तरेरीं तो वह रास्ता छोड़कर हट गया। अन्दर जाते ही वह

हिचककर खड़ी हो गयी।

मुत्तुकुमरन् सामने एक तिपाई पर बोतल, गिलास, सोडा और ओपनर वगैरह लिये डटा था। लगा कि वह पीने की तैयारी कर रहा है।

द्वार पर ही से माधवी ने हिचकते हुए पूछा, "लगता है आपने बहुत बड़ा काम शुरू कर दिया है। मैं अन्दर आ सकती हूँ कि नहीं ?"

"सबको अपना-अपना काम बड़ा ही लगता है !"

"अन्दर आऊँ ?"

"विदा लेकर जानेवालों को इजाज़त लेकर आना पड़ता है। बिना कहे-सुने हर किसी के साथ यहाँ-वहाँ-जहाँ कहीं भी जानेवालों के बारे में कहने को क्या रखा है ?"

"अभी तक आपने अन्दर बुलाया नहीं !"

"बुलाना कोई ज़रूरी है क्या ?"

"तो मैं जाती हूँ !"

"खुशी से ! वह तो अपनी-अपनी मर्ज़ी है !"

पता नहीं, उसने वहाँ से चले जाने की बात किस हिम्मत से उठा दी। लेकिन एक पग भी बाहर नहीं रख सकी। उसकी नाराज़गी और बेपरवाही पर वह तड़प उठी। चेहरा लाल हो गया और आँखें गीली हो गयीं। वह जहाँ-की-तहाँ खड़ी रही।

मुत्तुकुमरन् पीने के उपक्रम में लगा। अचानक अप्रत्याशित ढंग से वह तेज़ी से अन्दर गयी और झुककर उसके पाँव पकड़ लिये। मुत्तुकुमरन् ने पैरों में आँखों की नमी महसूस की।

"मानती हूँ कि मैंने उस दिन जो किया, ग़लत किया ! मेहरबानी करके मुझे माफ़ कर दीजिये !"

"किस दिन ? क्या किया ? अरे···अचानक यह नाटक क्यों ?"

"मानती हूँ मैंने आपको साथ चलने को बुलाया था और गोपाल की कार में घर चली गयी थी। मैंने यह ठीक नहीं किया। मैं अपनी विवशता को क्या कहूँ ? सहसा मैं उनसे बैर न ठान सकी और न मुँह मोड़ पायी।"

"मैंने तो उसी दिन कह दिया न ? चाहे जो भी साथी मिलें, उनके साथ तुरन्त चल पड़नेवालों के लिए; वह चाहे जिस किसी के भी साथ जाये, इससे मेरा क्या आता-जाता है ?"

"वैसा मत कहिए। पहले मैं ऐसी रही होऊँगी लेकिन अब मैं वैसी नहीं हूँ। आपसे मिलने और परिचय पाने के बाद मैं आप ही को अपना साथी मानती हूँ !"

"....."

"मेरा यह अनुरोध तो मानिए ! मेरे सिसकते-बिलखते आँसुओं पर विश्वास

कीजिए। मैं दिल से आपको निश्चय ही धोखा नहीं दे रही।"

इतना कहकर उसने अपना सिर झुका लिया। उसके होंठ मुत्तुकुमरन् के पाँव चूमने लगे और आँसू उन्हें धोने लगे। मुत्तुकुमरन् का दिल पसीज गया। उसे भूलने के लिए ही तो उसने मदिरा का आश्रय लिया था! लेकिन कुछ ही क्षणों में उसने मदिरा को भुला दिया। उसने अपने आँसुओं से उसका दिल इस तरह पिघला दिया था कि उसे इस बात का अब भान ही नहीं रहा कि सामने शराब पड़ी है।

अपने पैरों में पड़ी हुई उसकी केश-राशि और उसकी देह से लिपटी सुगंध में मदिरा से भी अधिक मादकता पाकर वह निहाल हो गया। माधवी के अश्रुपूरित नेत्रों ने उसके हृदय-पटल पर अमिट भाव-चित्र खींच दिये थे।

"आप साथ चलने को तैयार हों तो हम पैदल ही घर चले जायेंगे" —कहते हुए जो आत्माभिमान था, वह न जाने कहाँ बहकर चला गया?

"आप तनिक शांति से सोचेंगे तो स्वयं जान जायेंगे। जब वे कार पास खड़ी करके ज़िद करने लगे कि चलो चलें···तो कैसे इनकार किया जा सकता था भला!"

"हाँ, जब किसी का ग़ुलाम हो गये तो अस्वीकार करना मुश्किल ही है!"

"कोई किसी का ग़ुलाम न भी हो तो भी तकल्लुफ़ बरतना पड़ता है!" कहते हुए वह उठी और द्वार पर जाकर नायर लड़के को बुलाया। उसके अन्दर आने पर, मुत्तुकुमरन् की अनुमति के बिना ही उसे बोतल, गिलास वगैरह उठा ले जाने को कहा। यद्यपि लड़का उसकी आज्ञा का उल्लंघन नहीं कर सका, फिर भी ज़रा हिचका कि, मुत्तुकुमरन् कहीं मना न कर दे। ऐसा लगा जैसे बिना मुत्तुकुमरन् की आज्ञा के वह नहीं ले जायेगा। मुत्तुकुमरन् ने मुँह खोलकर कुछ नहीं कहा। थोड़ी देर वहाँ वैसा ही मौन छाया रहा।

लगभग पाँच मिनट बाद, मुत्तुकुमरन् ने हाथ से सारी चीज़ें ले जाने का इशारा किया। लड़का 'ट्रे' सहित सब कुछ उठा ले गया तो माधवी बोली, "यह लत क्यों पालते हैं? आदत पड़ गयी तो तन्दुरुस्ती ख़राब हो जायेगी!"

"माना कि तुम बड़ी अच्छी आदतों वाली हो और मेरी सारी बुरी आदतों को दूर करने का कौशल जानती हो!"

"नहीं, मैं ऐसा नहीं कहती! आप मुझे जितना भी बुरा कहें, पर आप मेरे लिए अच्छे हैं!"

"तो कहो कि तुम्हें चापलूसी भी खूब आती है!"

"हाँ, आपके दिल में स्थान जो बनाना है।"

"मुँहज़ोरी भी कम नहीं आती।"

"आपके सामने मैं डरपोक भी हूँ और मुँहज़ोर भी। 'एक म्यान में दो तलवार' वाली कहावत झूठी हो सकती है भला?"

थोड़ी देर में दोनों सहज-स्वाभाविक हो गये थे। अपने मन की आशंका दूर करने के लिए उसने पूछा, "मलेशिया जाने के लिए पासपोर्ट के काग़ज़ात पर हस्ताक्षर कर दिये कि नहीं ?"

"मैं साथ न जाऊँ तो आप लोगों को सुविधा होगी कि नहीं ?"

"यों क्यों दिल छेदते हैं ? आपके साथ जाने पर ही मेरे लिए सहूलियत होगी !"

मुत्तुकुमरन् के कानों में मानो शहद की फुहार-सी पड़ी। उसने माधवी के गदराये कंधों को ऐसा दबाया कि वह मधुर-पीड़ा के सुख में चिहुँक उठी और अपनी फूल-माला-सी बाँहों से उसे जकड़ लिया। दोनों की साँस जुगलबंदी करके चलने लगी। माधवी उसके कानों में फुसफुसायी—"उस पत्रिका में हमारी तस्वीर छपी थी, आपने देखी ?"

"हाँ, देखी ! उसमें क्या रखा है ?"

"तो इसमें क्या रखा है ?"

"इसी में तो सब कुछ रखा है !" उसकी बाँहें और कसने लगीं।

"चलो, बगीचे में चलकर घास पर बैठकर बातें करेंगे !" माधवी ने हौले-से कहा। मुत्तुकुमरन् को लगा कि माधवी डर रही है कि एकाएक कोई यहाँ आ जाए तो क्या हो ? लेकिन उसकी बात मानकर उसके साथ वह बगीचे में गया।

वे जब बगीचे में बैठकर बातें कर रहे थे, तब गोपाल लौट गया था। 'आउट हाउस' में जाकर खोजने के बाद वह वहीं आ गया, जहाँ वे दोनों बैठे थे। उसके हाथ में भी वही पत्रिका थी।

"देखा उस्ताद ! तुम्हारे बारे में जिल जिल ने कितना बढ़िया लिखा है !"

"बढ़िया क्या लिख दिया ? मैंने जो कहा है, सो लिखा है ! अगर कुछ बढ़िया हो तो वह मेरी बात है !"

"अच्छा, तो यह कहो कि तुमने जो कुछ कहा है, वही लिखा है !"

गोपाल की बातों में चुभता व्यंग्य था। उसकी बातों में अभिधा, लक्षणा और व्यंजना—तीनों इस तरह घुली-मिली थीं कि उन्हें समझने में थोड़ी देर लग गयी। मुत्तुकुमरन माधवी से शादी करना चाहता है—इस बात का पुष्टीकरण मुत्तुकुमरन् के मुँह से गोपाल चाहता था।

थोड़ी देर तक तीनों खामोश रहे।

"इस साक्षात्कार में छपा चित्र भी नया-नया खिंचवाया मालूम होता है !" गोपाल ने उन दोनों को चित्र दिखाकर पूछा।

चौदह

पत्रिका में छपे उस चित्र से गोपाल का ध्यान बँटाने के प्रयत्न में माधवी लगी रही। पर मुत्तुकुमरन् ने गोपाल की बातों पर ध्यान दिया ही नहीं। उसने एक तरह से लापरवाही बरती। दोनों के पास आकर गोपाल का उस तरह बातें करना बड़ा बचकाना लगा। मुत्तुकुमरन् और गोपाल दोनों रुष्ट हो जाएँ तो क्या हो? इस नाजुक स्थिति को टाल देने का माधवी का प्रयत्न उतना सफल नहीं रहा।

थोड़ी देर की बातों के बाद, गोपाल ने पूछा, "आज रात को अब्दुल्ला यहाँ से जा रहे हैं। मैं उन्हें विदा करने 'एयरपोर्ट' तक जानेवाला हूँ। आप में से कोई चलना चाहेंगे?"

मुत्तुकुमरन् और माधवी ने एक-दूसरे का मुँह देखा। गोपाल की बातों का किसी ने उत्तर नहीं दिया। उनकी हिचकिचाहट देखकर गोपाल, 'अच्छा! मैं जा रहा हूँ!' कहते हुए उठा। जाते हुए वह पत्रिका ऐसे छोड़ गया, मानो भूल गया हो!

गोपाल के जाने के बाद मुत्तुकुमरन् ने माधवी की खिल्ली उड़ाते हुए पूछा, "अब्दुल्ला को विदा करने तुम गयी क्यों नहीं?"

इतने में छोकरा नायर दौड़ता हुआ आया और बोला, "टैक्सी बड़ी देर से 'वेटिंग' में खड़ी है। ड्राइवर चिल्ला रहा है।"

तभी माधवी को यह बात याद आयी कि अरे वह तो टैक्सी में यहाँ आयी थी और वह बड़ी देर से उसके लिए खड़ी है। उसने मुत्तुकुमरन् की ओर मुड़कर ऐसी दृष्टि फेरी, कि मानो पूछती हो कि अब मैं जाऊँ या और थोड़ी देर ठहरूँ?"

"टैक्सी खड़ी है तो जाओ। कल मिलेंगे!" मुत्तुकुमरन् ने कहा।

वह बुझे दिल से वहाँ से चली मानो और ढेर सारी बातें कहने को रह गयी हों। मुत्तुकुमरन् भी बगीचे से चलकर 'आउट हाउस' में गया।

दूसरे दिन सवेरे गोपाल ने माधवी को फ़ोन किया कि वह अपने लिये कुछ रेशमी साड़ियाँ खरीद ले। पांडि बाज़ार में एक वातानुकूलित कपड़े की दूकान में गोपाल का ख़ाता चलता था। नाटक आदि के लिए जो साड़ियाँ खरीदनी होती थीं, माधवी वहीं से जाकर लिया करती थी। बिल वहाँ से सीधे गोपाल के पास पहुँच जाता था।

"दूकान वालों को मैं इत्तिला कर दूँगा कि तुम ग्यारह बजे वहाँ पहुँच रही हो।" गोपाल ने बताया और उसने भी स्वीकार लिया था। अतः जल्दी से नहा-

धोकर, कपड़े बदलकर वह चलने को तैयार हो गयी।

सिंगापुर जाने में कुछ ही दिन बाक़ी रह गये थे। उसके पहले सारा प्रबन्ध कर लेना था। सीन-सेटिंग जैसे भारी सामान, जो हवाई जहाज से नहीं लिये जा सकते थे, उन्हें साथ लेकर, दो दिनों में दस-पन्द्रह आदमी समुद्री जहाज़ पर जाने वाले थे। हवाई जहाज़ पर हल्के-फुल्के सामान ही लिये जाने की बात थी। अतः संभव था कि ज़रूरत से ज्यादा के कपड़े-लत्ते और साड़ियाँ भी जहाज़ के ज़रिये ही भेजे जाएँ। इसलिए उसने गोपाल की बात न टालकर जल्दी कपड़े की दूकान हो आने की बात मान ली थी।

गोपाल की नाटक-मंडली को मुत्तुकुमरन् के लिखे हुए नये नाटक के अलावा मलेशिया में एक-दो अन्य सामाजिक नाटक भी मंचित करने की योजना थी। उन नाटकों में कभी बहुत पहले गोपाल और माधवी ने भूमिका की थी। उनकी पुनरावृत्ति के लिए भी उन्हें तैयार रहना था।

हालाँकि अब्दुल्ला ने 'प्रेम एक नर्तकी का'—इसी ऐतिहासिक नाटक के लिए अनुबन्ध किया था, फिर भी, विदेश के नगरों में लगातार इसी नाटक के खेलने में कठिनाइयाँ संभव थीं। इस विचार से बीच-बीच में दूसरे नाटक भी सम्मिलित किये गये। सामाजिक और ऐतिहासिक दोनों प्रकार के नाटकों में माधवी को ही बारी-बारी से नायिका की भूमिका अदा करनी थी। इसलिए उन पात्रों के अनुरूप आधुनिकतम रेशमी साड़ियाँ लेनी थीं। ग्यारह बजे जाने पर भी साड़ियाँ चुनते-चुनते दोपहर का एक तो बज ही जायेगा।

माधवी ने सोचा कि बोग रोड के बँगले पर जाकर, मुत्तुकुमरन् को भी साथ ले जाये तो अच्छा रहे। इसके साथ ही वह इस सोच में पड़ गयी कि मुत्तुकुमरन् कहीं इनकार कर दे तो क्या हो?

"मालिक ने आपको कपड़े की दूकान पर ले जाने को कहा है।" कहते हुए ड्राइवर सवा दस बजे के क़रीब गाड़ी के साथ आ गया।

उसके कार में बैठते ही ड्राइवर ने पूछा, "सीधे पांडि बाज़ार चलूँ?"

"नहीं! पहले बँगले पर चलो। आउट हाउस से नाटककार को भी साथ ले जायेंगे।" माधवी ने कहा तो कार बोग रोड की तरफ़ बढ़ी।

उस समय मुत्तुकुमरन् 'आउट हाउस' के बरामदे में बैठकर उस दिन का समाचार-पढ़ रहा था। माधवी कार से उतरकर उसके सामने जा खड़ी हुई तो उसने समाचार-पत्र से सिर उठाकर देखा और पूछा, "बड़ी खुशबू आ रही है। यह अब्दुल्ला की दी हुई 'सेंट' तो नहीं?"

"अच्छा! इस खुशबू में इतनी बड़ी तासीर है कि देने वाले आदमी का नाम भी बतला दे।"

"अन्यथा मैं उसका नाम कैसे ले पाता?"

वह कोई उत्तर नहीं देकर मुस्करायी।

"कहीं बाहर जा रही हो क्या ?"

"हाँ ! आपको भी साथ ले जाने के विचार से आयी हूँ !"

"मुझे ? मुझे क्यों ? साथ ले जाकर आधी दूर जाने के बाद किसी की कार में बैठकर चल पड़ने के लिए ?"

"आपको मुझ पर ज़रा-सा भी तरस नहीं आता क्या? बार-बार उसी बात की सूई चुभाते हैं !"

"जो होता है, सो कहता हूँ !"

"बार-बार उलाहना देते हुए आपको न जाने क्या मज़ा आता है ?"

"वही, जो तुम्हें तंग करने से आता है !"

"कहते हैं कि क़सूर माफ़ करना भलमनसाहत है !"

"समझ लो कि वह भलमनसाहत मुझमें नहीं है !"

"कैसे मान लूँ ? यों हठ न पकड़िये। मैं प्रेम से बुला रही हूँ। इनकार कर मेरा जी मत दुखाइये। चलिये···"

"उफ़ ! इन औरतों से पार पाना···"

"···बड़ा मुश्किल है !" उसने उसका अधूरा वाक्य पूरा किया।

मुत्तुकुमरन् हँसता हुआ उठा और कुर्ता पहनकर उसके साथ चल पड़ा। द्वार की सीढ़ियाँ उतरते हुए उसने पूछा, "कहाँ ले जा रही हो ?"

"चुपचाप मेरे साथ चलते चलिये तो पता चलेगा।" उस पर अपना रोब जमाते हुए उसने कहा।

दूकान के सामने उतरने के बाद ही, उसे पता चला कि उसे वह कपड़े की दूकान में लायी है।

"ओहो ! अब तो हालत यहाँ तक बढ़ गयी कि ज़ोर-जबरदस्ती खींचकर मुझे कपड़े की दूकान तक लाओ ! भगवान जाने, आगे क्या हाल होगा !" मुत्तुकुमरन् ने दिल्लगी की। माधवी को वह दिल्लगी अच्छी लगी।

"आप देखकर जो पसन्द करेंगे, उन्हें मैं आँख मूँदकर ले लूँगी।"

"साड़ी पहननेवाला मैं नहीं हूँ ! पहननेवालों को ही अपनी पसंद की लेनी चाहिए !"

"आपकी पसंद मेरी पसंद है !"

दूकानवालों ने बड़े तपाक से उनका स्वागत किया।

"गोपाल साहब ने फ़ोन किया था। हम तब से आँखें बिछाये आपकी राह देखे खड़े हैं !" दूकान के मालिक ने बत्तीसी दिखाते हुए कहा।

नीचे बिछी नयी कालीन पर ढेर-सारी साड़ियों का अंबार-सा लगा था। मुत्तुकुमरन् और माधवी क़ालीन पर बैठे थे।

"आप हैं हमारे नये नाटक के लेखक ! बड़े भारी विद्वान और कवि।" माधवी उसका उन्हें परिचय देने लगी तो मुत्तुकुमरन् ने उसके कानों में फुसफुसाया, "बस, बस ! अपना काम देखो !"

ठंडे 'रोज़ मिल्क' के दो गिलास उनके सामने रखे गये।

"इन सबकी क्या ज़रूरत है ?" माधवी ने कहा !

"आप जैसे ग्राहक बार-बार थोड़े ही आते हैं !" दूकान के मालिक ने हाथ ऐसे जोड़े कि उँगलियों में फँसी अंगूठियाँ चमक उठीं।

रेशमी धोती, रेशमी कुरता, पान-सुपारी की लाली से रँगी मुस्कान, मुलायम रेशम को मात करनेवाली चिकनी-चुपड़ी बातें और बात-बात में चमत्कृत करने की कोशिश।

रंग, चमक, किनारी, बनावट आदि में एक से बढ़कर एक बढ़िया साड़ियाँ उनके सामने बिछायी गयीं।

"यह आपको पसंद है ?" सुआपंखी रंग की साड़ी निकालकर दिखाते हुए माधवी ने पूछा।

"शुक-सारिकाओं को अपने रंग से मोह हो तो आश्चर्य की क्या बात है ?" मुत्तुकुमरन् होंठों में मुस्कान फेरते हुए बोला।

माधवी साड़ियों से नज़र उठाकर मुत्तुकुमरन् को देखते हुए बोली, "हास-परिहास छोड़िये न ?"

"साड़ी के बारे में मर्द बेचारा क्या जाने !"

क़रीब एक घंटे तक साड़ियों को उलट-पलटकर देखने के बाद माधवी ने दर्जन भर साड़ियाँ चुनीं।

"आप कोई रेशमी धोती लीजिये ना ?"

"नहीं !"

"ज़रीवाली धोती आप पर खूब फबेगी !" दूकानदार ने कहा। पर मुत्तुकुमरन् ने इनकार कर दिया।

उन्हें लौटते हुए दोपहर के दो बज गये थे। जब वे बँगले पर पहुँचे, तब गोपाल के सेक्रेटरी 'पासपोर्ट' के क्षेत्रीय कार्यालय से पासपोर्ट ला चुके थे। थोड़ी देर में पासपोर्ट सम्बन्धित व्यक्तियों के हाथ सौंपे गये। जहाज़ पर पहले जानेवाले अपनी यात्रा की तैयारी में लगे थे। सीन, सेट और नाटक के अन्य सामान आदि जहाज़ से भेजे जाने के योग्य ढंग से बाँधे गये।

कलाकार संघ ने विदाई समारोह का आयोजन भी किया था। गोपाल की नाटक मंडली की मलेशिया यात्रा के बारे में भड़कीला विज्ञापन निकाला गया। उस समारोह में जहाज़ से जानेवाले कलाकारों के साथ गोपाल, माधवी और मुत्तु-कुमरन् भी सम्मिलित हुए थे। संघ के अध्यक्ष ने गोपाल की मंडली की सांस्कृतिक

विजय-यात्रा की कामना करते हुए उसकी तारीफ़ के पुल भी बाँधे।

जैसे-जैसे यात्रा के दिन निकट होते गये—वैसे-वैसे घनिष्ठ मित्रों के यहाँ विदाई-दावतों का ताँता लग गया। कुछेक में मुत्तुकुमरन् शामिल नहीं हुआ। एक दिन माधवी ने स्वयं ज़ोर दिया कि मेरी अभिनेत्री-सहेली पार्टी दे रही है। आपको उसमें अवश्य शामिल होना चाहिए। पर वह गया नहीं। जिस दिन हवाई जहाज़ की यात्रा थी, उसके पहले दिन रात को माधवी ने स्वयं अपने घर में मुत्तुकुमरन् और गोपाल को दावत के लिए बुलाया था।

मुत्तुकुमरन् उस दिन शाम को ही माधवी के घर आ गया था। शाम का नाश्ता भी वहीं किया। उसके बाद माधवी और वह दोनों बैठे बातें कर रहे थे।

उस दिन माधवी सुरमई रेशम की साड़ी पहने हुए थी, जिसपर बीच-बीच में ज़री के सितारे चमक रहे थे, जिससे उसकी सुनहली देह की सुन्दरता में चार-चाँद लग गये थे! मुत्तुकुमरन् उसकी मोहिनी सूरत पर मोहित होकर कवित्वमयी भाषा में कह उठा, "अंधकार की साड़ी पहने, विद्युल्लता विचरती है, विश्व के प्रांगण में।"

"वाह, वाह! क्या खूब! इस पर तो कुबेर का भंडार उड़ेला जा सकता है!"

"सच कहती हो या मेरी तारीफ़ की तारीफ़ में तुम मेरी तारीफ़ करती हो?"

"सच कह रही हूँ। आपने मेरी तारीफ़ की। बदले में मैंने आपकी तारीफ़ कर दी।"

इस तरह दोनों बातें कर ही रहे थे कि गोपाल का फ़ोन आया। माधवी ने रिसीवर उठाया।

"आयकर के एक मामले में मुझे एक अधिकारी से अभी तुरत मिलना है। मैं आज वहाँ नहीं आ सकता। माफ़ करना!"

"आप भी ऐसा कहें तो कैसे काम चलेगा? आपको ज़रूर आना है। मैं और लेखक महोदय काफ़ी देर से आपका इन्तज़ार कर रहे हैं।"

"नहीं-नहीं, आज यह मुमकिन नहीं लगता। मुत्तुकुमरन् जी से भी कह देना।"

उसका चेहरा स्याह पड़ गया। फ़ोन रखकर मुत्तुकुमरन् से बोली, "आज वे नहीं आ रहे हैं। कहते हैं, किसी आयकर अधिकारी से मिलना है।"

"जाये तो जाये! उसके लिए तुम उदास होती क्यों हो?"

"उदास नहीं होती! कोई आने की बात कहकर सहसा न आने की बात कहे तो दिल हताश हो जाता है न?"

"माधवी! मैं एक बात पूछूँ? बुरा तो नहीं मानोगी?"

"क्या है भला?"

"आज की दावत में गोपाल आता और मैं नहीं आता तो क्या समझती?"

"ऐसी कोई कल्पना मैं कर ही नहीं सकती!"

"वैसा हुआ होता तो तुम क्या करती ? यही मैं पूछना चाहता हूँ !"

"वैसा हुआ होता तो मेरे चेहरे पर उल्लास की रेखा तक फूटी नहीं होती। एक तरह से मैं जीवित लाश ही दीख पड़ती।"

"जो भी कहो, गोपाल के न आने से तुम्हें निराशा ही हुई है।"

"जैसा आप समझें !"

"मेरे आने पर तुम्हारा क्या बड़प्पन रहा ? गोपाल जैसा 'स्टेटस्' वाला कलाकार आता तो तुम्हारा बड़प्पन बढ़ता और अड़ोस-पड़ोस के लोग भी गर्व का अनुभव करते।"

"आप चुप न रहकर मेरा मुँह खुलवाना चाहते हैं। गोपाल जी के न आने का मुझे ज़रूर दुख हुआ है। पर उनके न आने के दुख को आपके आने के सुख ने कोसों दूर भगा दिया है !"

"मुझे खुश करने के लिए यों ही कह रही हो !"

"आप मेरे प्रेम पर सन्देह करें तो निश्चय ही आपका भला नहीं होगा।"

"शाप देती हो मुझे ?"

"मैं शाप देनेवाली कौन होती हूँ ? आप मेरे साथ जा रहे हैं—केवल इसी आश्वासन पर मैं इस यात्रा में सम्मिलित हो रही हूँ !"

"नाराज़ न होओ। यों ही तुम्हें उकसाकर तमाशा देखना चाहता था।"

मुत्तुकुमरन् ने उसकी आँखों में आँखें डालकर देखा तो उसे यह पूरा विश्वास हो गया कि सच ही वह उसपर मन-प्राण न्योछावर कर चुकी है। दावत से बड़ा उपहार पाकर खुश कौन नहीं होता ? खुशी से वह दावत खाने बैठा।

पन्द्रह

तीन, दो और एक गिन-गिनकर आख़िर वह दिन भी आ ही गया। दोपहर को एक बजे उड़ान थी। सिंगापुर जाने वाले एयर इण्डिया के बोइंग विमान में यात्रा का प्रबंध हुआ था। अब्दुल्ला ने आग्रह किया था कि पहले पिनांग में ही नाटक प्रदर्शन होना चाहिए। इसलिए सिंगापुर में उतरने के बाद, उन तीनों को हवाई जहाज़ बदलकर पिनांग जाना था। उन्हें लिवा ले जाने के लिए स्वयं अब्दुल्ला सिंगापुर हवाई अड्डे पर उपस्थित होनेवाले थे।

यात्रा के दिन गोपाल बहुत-बहुत खुश था। माधवी और मुत्तुकुमरन् से किसी प्रकार की तकरार या तनाव न बढ़ाकर सलीके से पेश आ रहा था।

बँगले में आने-जानेवालों का ताँता लगा हुआ था। पोर्टिको और बगीचे में जगह न होने से अनेक छोटी-बड़ी कारें बोग रोड में ही खड़ी की गयी थीं।

'जिल जिल' और दूसरे पत्रकार फोटो खींचते अघा नहीं रहे थे। आने-जानेवालों में से किसी को भी गोपाल ने अपनी आँखों से बचने नहीं दिया और हाथ मिलाकर विदा ली ! सिने-निर्माता, सह-कलाकार और मित्र-वृन्द बड़ी-बड़ी मालाएँ पहनाकर गोपाल को विदा कर रहे थे और फिर वापस जा रहे थे। पूरे हाल में फ़र्श पर गुलाब की पंखुरियाँ ऐसी बिखरी थीं, मानो खलिहान में धान की मणियाँ सुखायी गयी हों। एक कोने में गुलदस्तों का अंबार-सा लगा था।

पौने बारह बजे हवाई अड्डे के लिए वहाँ से रवाना हुए तो गोपाल की कार में कुछ फ़िल्म-निर्माता और सहयोगी कलाकार भी चढ़ गये थे। इसलिए मुत्तुकुमरन् और माधवी को एक अलग कार में अकेले चलना पड़ा।

मीनम्बाक्कम में भी कई लोग माला पहनाने आये थे। दर्शकों की अपार भीड़ थी। मुत्तुकुमरन् के लिए यह पहला हवाई सफ़र था। अतः हर बात में उसकी जिज्ञासा बढ़ रही थी।

विदा देनेवालों की भीड़ गोपाल पर जैसे छायी हुई थी। उनमें से बहुतों को माधवी भी जानती थी ! उनसे बात करने और विदा होने के लिए वह गोपाल के पास चली जाती तो यहाँ मुत्तुकुमरन् अकेला रह जाता। इसलिए वह मुत्तुकुमरन् के पास ही खड़ी रही। बीच-बीच में गोपाल उसका नाम लेकर पुकारता और कुछ कहता तो वह जाकर उत्तर देती और वापस आकर मुत्तुकुमरन् के पास खड़ी हो जाती।

माधवी को यह अपना कर्तव्य-सा लगा कि वह इस तड़क-भड़क और चहल-पहल वाले माहौल में मुत्तुकुमरन् को अकेला और अनजाना-सा महसूस नहीं होने दे। क्योंकि वह उसकी मानसिकता से परिचित थी। साथ ही, उसे इस बात की भी आशंका थी कि उसे हमेशा मुत्तुकुमरन् के पास देखकर कहीं गोपाल बुरा न मान जाये। पर उसने उसकी कोई परवाह नहीं की।

'कस्टम्स' की औपचारिकता पूरी करके जब वे विदेश जानेवाले यात्रियों की 'लाउंज' में पहुँचे तो मुत्तुकुमरन् ने माधवी को छेड़ा, "तुम तो नाटक की नायिका हो और गोपाल नायक। तुम दोनों का जाना ज़रूरी है। मेरी समझ में नहीं आता कि तुम दोनों के बीच तीसरे व्यक्ति की हैसियत से किस खुशी में सिंगापुर आ रहा हूँ ?"

माधवी ने एक-दो क्षण इसका कोई उत्तर नहीं दिया। हँसकर टाल गयी। कुछ क्षणों के बाद उसके कानों में मुँह ले जाकर बोली, "गोपाल नाटक के कथा-नायक हैं। पर कथानायिका के असली कथानायक तो आप ही हैं !"

यह सुनकर मुत्तुकुमरन् के होंठ खिल उठे। उसी समय गोपाल उनके पास

आया और पूछा, "उस्ताद के कानों में कौन-सा लतीफ़ा डाल रही हो?"

"कुछ नहीं ! इनकी यह पहली हवाई यात्रा है !"

"हाँ-हाँ ! यह 'माइडेन फ़्लाइट'—पहली उड़ान है ! पर लगाकर उड़ेंगे !" गोपाल आज बेहद खुश था। बोला, "हमें अपनी धाक का ऐसा डंका पिटवाना चाहिए कि मलेशिया भर में इसी बात की चर्चा होती रहे कि वहाँ के लोगों ने ऐसा बढ़िया नाटक आज तक नहीं देखा !"

सिंगापुर जानेवाला एयर-इण्डिया 'बोइंग' विमान बंबई से उड़ता हुआ बड़ी भव्यता के साथ उतरा। ऊँची आवाज़ भरते हुए उस विमान के उतरने का दृश्य मुत्तुकुमरन् बड़े उत्साह और विस्मय से देख रहा था। उस-जैसे देहाती कवि के लिए ये सब बिल्कुल नये अनुभव थे। इनसे उसे गर्व अनुभव हो रहा था।

माधवी भी उस दिन खूब सज-धजकर आयी थी। मुत्तुकुमरन् को बार-बार यह भ्रम होने लगा कि वह किसी अपरिचित लड़की को देख रहा है। अपना भ्रम दूर करने के बहाने बार-बार उसे देखकर वह पुलकित हो रहा था।

थोड़ी देर में ही इस हवाई जहाज़ के यात्री अन्दर आकर बैठने के लिए बुलाये गये।

माधवी, मुत्तुकुमरन् और गोपाल हवाई जहाज़ की ओर बढ़े। हवाई जहाज़ के अन्दर घुसते ही भीनी-भीनी खुशबू हवा में और मीठी-मीठी स्वर-लहरी कानों में तैरने लगी। मुत्तुकुमरन्, माधवी और गोपाल की सीटें एक ही कतार में एक-के-बाद एक थीं। माधवी बीच में बैठी। मुत्तुकुमरन् इस ओर बैठा और गोपाल उस ओर।

जब जहाज़ गंभीर ध्वनि के साथ उड़ने लगा तो ज़मीन से ऊपर उड़ने का उत्साह तीनों के मन में भर उठा। 'आ हा ! ज़मीन से ऊपर उड़ने में कितना आनन्द है !'

हवाई जहाज़ के ऊपर···और ऊपर उड़ने पर गोपाल ने 'ह्विस्की' मँगाकर पी। मुत्तुकुमरन् और माधवी ने 'आरेंज जूस'। तीनों 'एकॉनमी क्लास' के यात्री थे। अतः गोपाल ने 'ह्विस्की' के लिए पैसा भी दिया।

मुत्तुकुमरन् को लगा कि हवाई जहाज़ के अन्दर एक छोटी-सी दुनिया ही चल रही है। ग़ौर से न देखने पर लगा कि इतनी तीव्रगति से चलनेवाला जहाज़ भीतर जैसा का तैसा खड़ा है। इस नये अनुभव के सुख में बहते हुए मुत्तुकुमरन् को माधवी या गोपाल से बातें करने का ख़्याल ही नहीं आया।

हवाई जहाज़ के अन्दरवाले 'माइक' ने प्रसारित किया कि अब हम निकोबार द्वीपों के ऊपर से उड़ रहे हैं। नीचे नारियल के पेड़ और खपरैल घर वाले छोटे-छोटे बिंदुओं के रूप में—धुँधली-सी ज़मीन पर पड़े दिखायी पड़ी।

डिस एम्बार्केशन कार्ड के बँटने पर माधवी ने उनपर हस्ताक्षर करके 'होस्टेस'

को वापस सौंप दिया। दोपहर का भोजन हवाई जहाज़ पर ही बाँटा गया। गोपाल ने खाने के बाद फिर 'ह्विस्की' मँगाकर पी।

हवाई जहाज़ के नब्बे से अधिक यात्रियों को— परिचारिकाओं ने कितनी फुर्ती से खाना परोसा? कितनी मीठी आवाज़ में यात्रियों के कानों के पास अपने होंठों को ले जाकर उनकी फ़रमाइशों के बारे में पूछताछ की? मुत्तुकुमरन् यह तमाशा देखकर विस्मय में पड़ गया!

हवाई जहाज़ में हल्की ठंडक और 'यू-डी-कोलोन' की खुशबू तिर रही थी। मुत्तुकुमरन् ने इस बारे में पूछा तो गोपाल ने कहा कि हर 'उड़ान' के पहले 'एयर क्राफ्ट' के अन्दर खुशबू 'स्प्रे' की जाती है।

नीचे बहुमंज़िली इमारतें, समुद्र पर तैरनेवाले जहाज़ आदि दीख पड़े। सिंगापुर का स्थानीय समय सूचित किया गया—भारत और सिंगापुर के समय में लगभग दो घंटे से अधिक का फ़र्क़ था। यात्रियों ने तुरन्त अपनी-अपनी घड़ियाँ मिला लीं।

हवाई जहाज़ सिंगापुर के हवाई अड्डे पर उतरा। मीनम्बाक्कम से चलते हुए माधवी ने मुत्तुकुमरन् की जिस तरह से बाँधने में मदद की थी, वैसी ही मदद जहाज़ से उतरते वक़्त भी 'सीट बेल्ट' खोलने में की।

हवाई अड्डे के 'रन-वे' में छोटे-बड़े कई हवाई जहाज़ों को खड़े पाकर मुत्तुकुमरन् एकदम विस्मय में पड़ गया। अपने प्रिय कलाकारों को देखने के लिए हवाई अड्डे के बाहर-भीतर और बालकनियों में खचाखच भीड़ भरी थी।

अब्दुल्ला ने आगे बढ़कर सबका स्वागत किया। मालाओं के पहाड़ ही लग गये। हवाई अड्डे के 'लाउंज' में ही माधवी और गोपाल ने टेलिविजन के लिए 'इन्टरव्यू' दिया। उत्सुक भीड़ 'ऑटोग्राफ़' के लिए जैसे उमड़ पड़ी।

मुत्तुकुमरन् के नाम-यश या आगमन का अधिक विज्ञापन नहीं किया गया था। अतः माधवी और गोपाल के इर्द-गिर्द ही स्वागत की रौनक़ थी; मालाओं का अंबार लगा था।

मुत्तुकुमरन् ने इसका बुरा नहीं माना। उसने दुनिया के सामने अपना ढिंढोरा ही कहाँ पीटा था कि उसका भी ठाठ-बाट से स्वागत हो! सिने-सितारों की हैसियत पर पहुँचनेवालों का जो 'ग्लैमर' होता है, वह मुत्तुकुमरन् जैसे कलाकारों को आसानी से कहाँ से मिलेगा? अभी-अभी तो वह मद्रास आया है और गोपाल की मेहरबानी से एक नाटककार बनने का उपक्रम कर रहा है। जो अपने देश में ही नसीब नहीं, वह सम्मान दूसरे देशों में क्यों कर मिलेगा? मुत्तुकुमरन् को अपनी इस हैसियत का खूब पता था। फिर भी, लोगों ने उसके सुदर्शन व्यक्तित्व को यों देखा, मानो किसी कलाकार को देख रहे हों। इसपर वह दिल-ही-दिल में खुश हो रहा था।

अब्दुल्ला जिस तरह माधवी और गोपाल से पेश आये, वैसे मुत्तुकुमरन् के साथ पेश नहीं आये। हो सकता है, इसके मूल में मद्रास में उनके साथ हुई घटनाएँ हों। माधवी से मुत्तुकुमरन् ने कहा,"मुझे डर लग रहा है कि भीड़ में मैं कहीं खो न जाऊँ और तुम लोग भी इस चहल-पहल में मुझे भूल न जाओ। फिर मैं इस नये देश में क्या कर पाऊँगा ?"

"वैसा कुछ नहीं होगा। मेरी आँखें चोरी-छिपे लेकिन हमेशा आपकी निगरानी कर रही हैं !"

"जब सबकी आँखें तुम्हारी ओर लगी हैं, तब तुम मुझे कहाँ से देख पाओगी ?"

"मैं तो देख पा रही हूँ। पाओगी का सवाल ही नहीं उठता। न जाने आपने मुझपर कौन-सा टोना-टोटका कर दिया कि मैं आपके सिवा और किसी को देख ही नहीं पा रही !"

माधवी की बात सुनकर वह फूला न समाया।

सिंगापुर के हवाई अड्डे के 'लाउंज' में पौन घंटा बिताने के बाद, वे एक-दूसरे हवाई जहाज़ पर पिनांग के लिए रवाना हुए। पिनांग जानेवाले 'मलेशियन एयरवेज़' के हवाई जहाज़ पर अब्दुल्ला और गोपाल केबिन के पासवाली अगली सीट पर अकेले बैठकर बातें करने लग गये। उनके चार सीट पीछे मुत्तुकुमरन् और माधवी भी साथ बैठकर बातें करने लगे। जहाज़ पर कोई विशेष भीड़ नहीं थी।

माधवी बड़े प्यार से बोली, "जहाँ देखो, इस देश में, हरियाली-ही-हरियाली नज़र आती है ! यह जगह सचमुच बहुत अच्छी है !"

"हाँ, यह देश ही क्यों ? इस देश में तुम भी इतनी प्यारी लग रही हो कि बिलकुल परी-सी लगती हो !"

"आप तो खुशामद कर रहे हैं।"

"तभी तो कुछ मिलेगा ?"

सचमुच, माधवी का दाहिना हाथ उसकी पीठ के पीछे से माला की तरह बढ़ा और उसका दाहिना कंधा सहलाने लगा।

"बड़ा सुख मिल रहा है !"

"यह हवाई जहाज़ है। आपका 'आउट हाउस' नहीं। अपनी मर्ज़ी यहाँ नहीं चल सकती।"

"तुम्हारी बातों से तो ऐसा लगता है कि जब कभी तुम 'आउट हाउस' में आयीं, मैंने अपनी मर्ज़ी पूरी कर ली !"

"तोबा ! तोबा ! इसमें मेरी मर्ज़ी भी शामिल है, मेरे राजा !" माधवी ने उसके कानों में फुसफुसाया।

मुत्तुकुमरन् ने उससे पूछा, "जो समुद्री जहाज़ से चले थे, वे आज पिनांग पहुँच गये होंगे न ?"

"नहीं, कल सवेरे ही पहुँचेंगे। कल उनका पूरा 'रेस्ट' है। पहले हम तीनों का प्रोग्राम है—'साइट सीइंग' का ! पहला नाटक परसों है।"

"कहाँ-कहाँ नाटक खेलने का आयोजन हुआ है ?"

"पहले के चार दिन पिनांग में नाटक का मंचन है। बाद के दो दिन ईप्पो में हैं। उसके बाद एक हफ़्ते के लिए क्वालालम्पुर में है। बाद के दो दिनों में फिर 'साइट सीइंग', रेडियो और टेलिविज़न के लिए साक्षात्कार वगैरह हैं। अंतिम सप्ताह सिंगापुर में नाटक है। फिर वहीं से मद्रास के लिए हवाई उड़ान है।" माधवी ने उसे पूरा कार्य-क्रम बता दिया।

मुत्तुकुमरन् को उसके साथ बातें करते रहने का जी हुआ तो बोला, "आज तुम्हारे होंठ इतने लाल क्यों हैं ?"

"....."

"बोलो न !"

"इसलिए कि आपसे मुझे बड़ा प्यार है !"

"ग़ुस्से में भी औरतों के होंठ लाल हो जाते हैं न ?"

"हाँ-हाँ ! हो जाते हैं। थोड़ी देर पहले सिंगापुर के हवाई अड्डे पर आप जैसे महान व्यक्ति का स्वागत न कर, हम जैसे नाचीज़ खिलाड़ियों का जब अब्दुल्ला ने दौड़-दौड़कर और सिर पर उठाकर स्वागत किया था, तब मुझे इस दुनिया पर बड़ा ग़ुस्सा आ रहा था।"

"तुम्हें ग़ुस्सा आया होगा; पर मुझे नहीं। मेरा दिल तो उस वक्त बल्लियों उछलने लगा था। हाँ, मुझे इस बात से अवश्य गर्व ही हो रहा था कि मेरी माधवी का कितना मान-सम्मान हो रहा है। उतनी बड़ी भीड़ में, महल जैसे हवाई अड्डे के 'लाउंज' में, हाथों में भारी-भरकम फूलों की मालाएँ लिये हुए तुम तितली की तरह खड़ी थी और मेरा दिल बुलबुल की तरह फुदक रहा था !"

"अगल-बग़ल में न जाने कौन खड़े थे ! और मेरा दिल तड़प रहा था कि आप खड़े हों तो कितना अच्छा रहे ?"

"हाँ, मुझे इसका पता है ! क्योंकि अब हम दो दिल नहीं, एक-दिल हैं !"

"आपके मुँह से यह सब सुनते हुए बड़ी खुशी हो रही है ! जैसे वसिष्ठ के मुँह से ब्रह्मर्षि सुनना।"

"क्या कहती हो तुम ?"

"आपके मुँह से आख़िर निकल गया न कि हम दोनों एक हैं !"

मुत्तुकुमरन् के मन में आया कि बातें बंदकर माधवी को आलिंगन में भरकर एक हो जाये।

इसी वक़्त गोपाल और अब्दुल्ला वहाँ आये ।

"माधवी ! अब्दुल्ला साहब तुमसे कुछ कहना चाहते हैं। ज़रा उस तरफ़ अगली 'सीट' पर चली जाओ न !" गोपाल ने आँखें मटकाकर कहा तो माधवी की आँखें आप-ही-आप मुत्तुकुमरन् पर ठहर गयीं ।

"माफ़ करना उस्ताद !" गोपाल ने मुत्तुकुमरन् से ही प्रार्थना की, मानो उसकी धरोहर को एक पल के लिए माँग रहा हो। मुत्तुकुमरन् को आश्चर्य हो रहा था कि वह उससे क्यों अनुमति चाह रहा है ? साथ ही, उसका आँखें मटकाकर माधवी को बुलाने पर क्रोध भी आ रहा था ।

गोपाल के कहने पर भी, माधवी मुत्तुकुमरन् को देखती हुई यों बैठी रही कि बिना उसकी अनुमति के, उठने का नाम नहीं लेगी ।

अब्दुल्ला का चेहरा कठोर हो गया । वह भारी आवाज़ में अंग्रेज़ी में चीखे, "हू इज़ ही टु ऑर्डर हर ? ह्वाय आर यू अननेसेसरिली आस्किंग हिम् ?"

"जाओ ! अंग्रेज़ी में वह कुछ चिल्ला रहा है ।" मुत्तुकुमरन् ने माधवी के कानों में कहा ।"

अगले क्षण माधवी ने जो किया, उसे देखकर मुत्तुकुमरन् को ही विस्मय होने लगा ।

"आप जाइए ! मैं थोड़ी देर में वहाँ आती हूँ ! इनसे जो बातें हो रही थीं, उन्हें पूरा करके आऊँगी !"—माधवी ने अब्दुल्ला को वहीं से उत्तर दिया ।

गोपाल का चेहरा कटु और कठोर हो गया । दोनों 'केबिन' की ओर बढ़े और पहली क़तार की अपनी सीटों पर गये तो मुत्तुकुमरन् बोला, "हो आओ न ! विदेश आकर व्यर्थ की बला मोल क्यों ले रही हो ?"

माधवी के होंठ फड़क उठे । बोली, "मैं चली गयी होती । पर उसने अंग्रेज़ी में क्या कहा, मालूम ?"

"कहो तो सही ।"

"आपके बारे में गोपाल से उसने कहा कि इसे हुक़्म देनेवाला यह कौन होता है ? उससे जाकर क्यों पूछते हो ?"

"उसने तो कुछ ग़लत नहीं कहा । ठीक ही तो कहा !"

उसके होंठ आरक्त पुष्प बनकर फड़कने लगे । आँखों में आँसू भर आये । दोनों का भेद यद्यपि मुत्तुकुमरन् ने कौतुक के लिए किया था, फिर भी माधवी उसे बर्दाश्त नहीं कर सकी ।

"मैं अब्दुल्ला के पास नहीं जाऊँगी, नहीं जाऊँगी ।" कहकर फड़कते होंठों वह हाथ बाँधे बैठ गयी ।

हवाई जहाज़ किसी अड्डे पर उतरा । नीचे ज़मीन पर 'कोत्तपारु एयरपोर्ट' लिखा हुआ दिखायी दिया ।

मालूम हुआ कि वह जहाज़ कोत्तपारु, कुवान्तान, क्वालालम्पुर, ईप्पो आदि जगहों में उतरने के बाद अन्त में पिनांग को जाएगा।

धीरे-धीरे अँधेरा छा रहा था। शाम के झुटपुटे में वह हवाई अड्डा और चारों ओर के हरे-भरे पर्वत-प्रदेश बहुत सुन्दर दिखायी दिये।

जहाँ देखो, मरकत की हरीतिमा छायी थी। पहाड़ों पर रबर के बगीचे ऐसे दिखायी दे रहे थे, मानो 'कर्लिंग' करके केश कुन्तल-से बनवाये गये हों। केले और रम्बुत्तान के पेड़ झुंड-के-झुंड खड़े थे। वहाँ की पर्वतस्थली वनस्थली जैसी थी।

रम्बुत्तान, डोरियान जैसे मलेशियाई फलों के बारे में स्वदेश में ही मुत्तुकुमरन् ने चेट्टिनाडु के एक मित्र के मुँह से सुन रखा था।

एक मलाय स्त्री, जो उस हवाई जहाज़ की होस्टस थी, हाथ में 'ट्रे' लिये केबिन से निकलकर आख़िरी सिरे तक आती-जाती रही। उसका डील-डौल ऐसा था कि पीठ और छाती का फ़र्क़ ही मालूम नहीं पड़ता था। लेकिन उसकी आँखें ऐसी सुन्दर थीं, मानो सफ़ेद मख़मल पर काले जामुन लुढ़क गये हों।

हवाई जहाज़ उस अड्डे से रवाना हुआ तो सिर्फ़ गोपाल उनके पास आया और बोला, "माधवी! तुम्हारा बर्त्ताव अगर तुम्हें ठीक लगे तो ठीक है।"

माधवी ने आँखें पोंछीं और सीट की बेल्ट खोलकर उठी। इस बार मुत्तुकुमरन् से कुछ कहे और उसका मुँह देखे बिना अब्दुल्ला की सीट की ओर बढ़ी। मुत्तुकुमरन् अपने को अकेला महसूस न करे—इस विचार से गोपाल माधवी की सीट पर बैठकर उससे बातें करने लगा।

"बात यह है उस्ताद! अब्दुल्ला ज़रा शौक़ीन किस्म का आदमी है। काफ़ी बड़ा रईस। एक तारिका के पास बैठने-बोलने को लालायित है। औरतों का दीवाना भी है। उसके पास बैठकर ज़रा देर बातचीत करने में क्या बुराई है? उसी की 'कांट्रेक्ट' पर ही तो हम इस देश में आये हैं। ये बातें माधवी की समझ में नहीं आतीं। ऐसा तो नहीं कि वह बिलकुल नहीं समझती। वह बड़ी होशियार है और अक्लमंद भी। आँखों के इशारे समझनेवाली है। वैसे उस्ताद तुम्हारे आने के बाद वह एकदम बदल गयी है। ज़िद पकड़ लेना, गुस्सा उतारना, उदासीनता बरतना—न जाने क्या-क्या बदलाव आ गये?"

"यह सब मेरी ही वजह से आये हैं न?"

"ऐसा कैसे कहूँ? फिर तुम्हारे गुस्से का कौन सामना करे?"

"तो फिर किस मतलब से तुमने यह बताया गोपाल?"

मुत्तुकुमरन् की आवाज़ को ऊँचा पड़ते देखकर गोपाल दिल-ही-दिल में डर गया। मुत्तुकुमरन् आग उगलते हुए बोला—"औरत औरत है। कोई व्यापार की चीज़ नहीं। उसकी इज़्ज़त का ख्याल रखना चाहिए। तुम्हारा यह काम मुझे कलाकार का काम नहीं लगता। ऐसे काम करनेवाले तो दूसरे होते हैं। मुझे इतना

तो ज़रूर पता चल गया है कि अब तुम पहले के नाटक कंपनीवाले गोपाल नहीं ! अब्दुल्ला या ऐरा-ग़ैरा कोई तुम्हारी क़द्र करे तो इसलिए करे कि तुम एक कलाकार हो। इसलिए नहीं कि तुम्हारे साथ चार-पाँच लड़कियाँ हैं, जो तुम्हारे इशारे पर चल सकती हैं। क्या तुम ऐसी ही क़द्र की खोज में हो ? बड़े अफ़सोस की बात है।"

इस गहमा-गहमी के बीच, दोनों को इस बात का ख़याल नहीं रहा कि हवाई जहाज़ कहाँ-कहाँ उतरा और फिर उड़ान भरता रहा।

जब हवाई जहाज़ क्वालालम्पुर के सुबाङ् इन्टरनेशनल एयरपोर्ट पर उतरा तो अब्दुल्ला ने आकर कहा, "यहाँ कुछ लोग माला पहनाने आये होंगे। ज़रा आइए। लाउंज तक हो आयें।"

गोपाल गया। माधवी संकोचवश खड़ी रही। मुत्तुकुमरन् तो अपने आसन से उठा ही नहीं। वह माधवी से बोला, "मैं नहीं आता। मेरे लिए कोई माला नहीं लाया होगा। तुम हो आओ !"

"तो मैं भी नहीं जाती।"

अब्दुल्ला ने फिर हवाई जहाज़ के अन्दर आकर अनुरोध किया, "डोंट क्रिएट ए सीन हियर, प्लीज़ डू कम।"

माधवी उनके पीछे चली। उसने भी तो सिर्फ़ माधवी को ही बुलाया था। अब्दुल्ला ने मुत्तुकुमरन् की ओर तो आँखें उठाकर देखा तक नहीं।

क्वालालम्पुर में आये हुए लोगों की माला-मर्यादा और गुलदस्ते स्वीकार कर गोपाल, अब्दुल्ला और माधवी—तीनों हवाई जहाज़ पर चढ़ आये। "अरे रे ! उस्ताद नीचे उतरकर नहीं आये क्या?" गोपाल ने ऐसी नक़ली हमदर्दी-सी जतायी, मानो मुत्तुकुमरन् के हवाई जहाज़ के अंदर ही ठहर जाने की बात का उसे अभी-अभी पता चला हो। मुत्तुकुमरन् ने उसका कोई उत्तर नहीं दिया।

हवाई जहाज़ फिर उड़ान भरने लगा तो पहले की तरह अब्दुल्ला और गोपाल अगली पंक्ति में बैठकर बातें करने चले गये। माधवी भी मुत्तुकुमरन् के पास आकर, पहले जहाँ बैठी थी, वहीं बैठ गयी और रूमाल से मुँह ढँक लिया, मानो बहुत थक गयी हो !

थोड़ी देर वे दोनों एक-दूसरे से कुछ नहीं बोले। अचानक किसी के सिसकने की आवाज़ आयी तो मुत्तुकुमरन् ने आसपास की सीटों की ओर मुड़कर देखा। आगे-पीछे की ही नहीं, अगल-बगल की सीटें भी खाली थीं। उसके मन में कुछ सन्देह हुआ तो उसने माधवी के चेहरे पर से रूमाल हटाने के लिए अपना हाथ बढ़ाया। माधवी ने वह हाथ रोक लिया। लेकिन फिर उसने ज़बरदस्ती रूमाल खींच लिया तो देखा कि माधवी आँसू बहाती हुई सिसक रही है।

"यह क्या कर रही हो ? यहाँ आकर जगहँसाई करने पर तुली हो ?"

"मेरा दिल ख़ौल रहा है !"

"क्यों ? क्या हुआ ?"

"उस उल्लू के पट्ठे को इतना भी लिहाज़ नहीं रहा कि आपको भी बुला ले !"

"वह कौन होता है, मुझे बुलानेवाला ?" पूछते हुए उसने रूमाल से उसकी आँखें पोंछीं और बड़े प्यार से उसके सिर के बाल सहलाये।

"मेरा इसी क्षण मर जाने को जी कर रहा है। क्योंकि इस क्षण में आप मुझपर प्रेम बरसा रहे हैं। अगले क्षण कौन जाने, आपका ग़ुस्सा उभारने का कोई ग़लत काम हो जाये ! इससे अच्छा तो प्यार के क्षणों में ही मर जाना है न ?"

"सुनो ! पागल की तरह बको मत ! और कोई दूसरी बातें करो—हाँ, अब्दुल्ला के पास गयी थी न तुम ! वह क्या बोल-बक रहा था ?

"कुछ नहीं, बेहूदी बातें बकता रहा। दस मिनट से भी ज़्यादा देर तक उसकी बकवास सुननी पड़ी। कह रहा था कि 'आइ एम ए मैन ऑफ़ फ़ैशन्स अंड फ़ैन्सीज़ !' "

"इसका क्या मतलब ?"

माधवी ने मतलब भी बता दिया और इसके साथ ही, मुत्तुकुमरन् भी बोलना बंद कर किसी सोच में पड़ गया।

हवाई जहाज़ ईप्पो में उतरा। वहां भी माला पहनाने के लिए कई प्रशंसक तैयार खड़े थे। सिर्फ़ गोपाल ही अब्दुल्ला के साथ उतरकर गया। माधवी सिर-दर्द का बहाना बनाकर इस सिर-दर्द से बच गयी।

सोलह

इप्पो के हवाई अड्डे पर अब्दुल्ला के साथ उतरा हुआ गोपाल वापस विमान के अन्दर लौट आया। उसने माधवी को बुलाया, "माधवी ! तुम एक मिनट आकर अपना मुँह तो दिखा आओ। अरे; आजकल सिर्फ़ मर्द जाए तो कौन रसिक क़द्र करने को तैयार होता है ? पूछता है, आपकी मंडली में कोई अभिनेत्री नहीं है ?"

"मैं नहीं आती ! मुझे बड़ा सिर-दर्द हो रहा है।"

"प्लीज़ ! बहुत-से लोग हाथों में माला लिये खड़े हैं !"

माधवी असमंजस में पड़कर मुत्तुकुमरन् को यों देखती रही मानो वह बाहर

जाने या न जाने की अनुमति माँग रही हो ।

"हो आओ न ! माला के साथ आये सज्जनों को निराश न करो !" मुत्तुकुमरन् ने आदेश दिया ।

माधवी अनिच्छा से उठकर गयी । मुत्तुकुमरन् ने काँच के झरोखे से बाहर की भीड़ को देखा । चार-पाँच मिनट में दोनों—माधवी और अब्दुल्ला जहाज़ पर लौट आये ।

जहाज़ फिर उड़ने लगा । पलक झपकते-न-झपकते पिनांग आ गया । पिनांग के हवाई अड्डे में भी दर्शकों की भीड़ उमड़ी पड़ी थी । बड़े ठाठ-बाट से उनका स्वागत हुआ । माधवी और गोपाल ने सबको मुत्तुकुमरन् का परिचय दिया । अब्दुल्ला ने जैसे उसकी परवाह ही नहीं की । मुत्तुकुमरन् ने भी अब्दुल्ला की परवाह कहाँ की ? फिर भी उसे इस बात का दुख अवश्य हो रहा था कि अब्दुल्ला अपने देश में आये हुए मेहमान कलाकारों का मेज़बान होकर भी उदासीनता बरत रहा है ।

हवाई अड्डे से पिनांग के शहर में जाते हुए काफ़ी अँधेरा हो चला था ।

उस रात अब्दुल्ला ने 'पिनांग हिल' के अपने बँगले पर उन्हें ठहराने की व्यवस्था की थी । इसलिए हवाई अड्डे से निकली कारें सीधे पिनांग हिल जाने वाली रेल गाड़ी पकड़ने के लिए स्टेशन पर आ रुकीं । उस छोटी-सी रेलगाड़ी को सीधे पहाड़ पर चढ़ते देखकर उन्हें बड़े उत्साह का अनुभव हो रहा था । उस रेल के डिब्बे में माधवी और मुत्तुकुमरन् पास-पास बैठे थे । नीचे मुड़कर देखा तो रेलवे स्टेशन और नगर के कुछ इलाकों की बत्तियाँ उस धुँधलके में—रोशनी की नन्हीं-नन्हीं बूँदें बनकर झिलमिला रही थीं ।

पहाड़ी पर चढ़ने पर अब्दुल्ला के बँगले की ओर जानेवाले रास्ते से नीचे देखने पर समुद्र और पिनांग के बंदरगाह दीख पड़े । पिनांग से पिरै और पिरै से पिनांग आने-जानेवाली फेरी-सर्विस की रोशनियाँ टिमटिमा रही थीं । शहर की रंग-बिरंगी बत्तियों और नियान साइन दृश्यों से आँखें आनंद से चमक रही थीं । पिनांग के हिल पार्क में थोड़ी देर बैठे रहने के बाद, वे अब्दुल्ला के बँगले में गये । अब्दुल्ला का बँगला पहाड़ी के शिखर पर घनी फिर भी शांत बस्ती में स्थित था । बँगले की ऊपरी मंज़िल पर हरेक को अलग-अलग और सुविधाजनक कमरे दिये गये ।

रात के भोजन के बाद हॉल में बैठे बातें करते हुए अब्दुल्ला ने कहा, 'मिस्टर गोपाल ! 'कॉकटेल मिक्स' करने में इस मलेशियन 'एट्रयिट्स' भर में मैं 'एक्स्पर्ट' माना जाता हूँ । अनेक प्रांतों के सुलतान अपना जन्म-दिन मनाते हुए 'कॉकटेल 'मिक्स' करने के लिए मुझे विशेष रूप से आमंत्रित करते हैं ।"

"वह सौभाग्य मेहरबानी करके हमें भी प्रदान करें ।"—गोपाल ने उनसे अनुनय किया । माधवी और मुत्तुकुमरन् ने मुँह नहीं खोला तो अब्दुल्ला ने अपनी

बात जारी रखी, "आप जो कह रहे हैं, ठीक है। पर माधवी जी कुछ बोलती नहीं! इस प्रॉविन्स वेलसली से कितने ही करोड़पति मेरे हाथ का 'कॉकटेल' सेवन करने के लिए लगभग रोज़ ही यहाँ आते रहते हैं। न जाने क्यों, माधवीजी मुँह नहीं खोल रहीं?"

"उसे इसकी आदत नहीं। मेरे ख़्याल में, उस्ताद तो साथ देंगे"—गोपाल ने मुत्तुकुमरन् की ओर इशारा किया। पर अब्दुल्ला तो माधवी के पीछे ही पड़े हुए थे।

"सो कैसे? इतने दिनों से माधवीजी फिल्म-जगत् में काम कर रही हैं। यह सुनते हुए यकीन नहीं होता है कि अभी आदत नहीं पड़ी?"

माधवी ने इसका भी कोई उत्तर नहीं दिया।

इस बीच अब्दुल्ला का नौकर 'कॉकटेल' बनाने के लिए तरह-तरह की शराब की बोतलें और प्याले मेज़ पर रख गया। विभिन्न चमकीले रंगों में, विभिन्न आकारों वाली वे बोतलें और प्यालियाँ इतनी सुन्दर थीं कि उन्हें चूमने को जी करता था। सुनहरी रेखाओं से बेल-बूटे कढ़ी प्यालियों पर से आँखें हटाना असंभव-सा था।

अब्दुल्ला उठे और मेज़ के पास जाकर कॉकटेल मिक्स करने लगे। गोपाल भी उठा और माधवी के पास जाकर बोला, "प्लीज़! कीप कंपनी! आज एक दिन के लिए मेरी बात मानो। अब्दुल्ला का दिल न तोड़ो!" गोपाल अपनी बातों पर जितना अड़ा था, उससे रत्ती भर भी माधवी की ज़िद कम नहीं थी। अब्दुल्ला तो बात-बात पर माधवी का ही नाम संकीर्तन करते जा रहे थे। गोपाल अब्दुल्ला का दिल रखना चाहता था। पर माधवी हठ ठाने हुए थी। गोपाल को उसके हठ पर क्रोध आ रहा था। असल में कोध उसके हठ पर भी नहीं, उस हठ को हवा देनेवाले व्यक्ति पर था! मुत्तुकुमरन् जैसे आत्माभिमानी और हठी व्यक्ति की संगति में आने पर ही तो वह इतना बदल गयी थी! मुत्तुकुमरन् जैसा मर्द उसके जीवन में नहीं आया होता तो माधवी झक मारकर उसकी बातें मानती चली जाती; उंगलियों पर नाचती-फिरती। इसीलिए गोपाल का क्रोध माधवी पर न जाकर मुत्तुकुमरन् पर गया। वह मन-ही-मन भुनभुनाया कि इस पापी कलमुँहे उस्ताद की वजह से ही तो माधवी में मानाभिमान और रोष का भाव इस तरह सवार है।

गोपाल को लगा कि माधवी के एक इशारे पर अब्दुल्ला जैसा व्यक्ति अपनी दौलत का सारा खजाना लुटा देगा। अब्दुल्ला की हर बात और हर नज़र पर ज़िद-भरी हवस का रंग चढ़ा हुआ था। बात जो भी हो, वह यही पूछते नज़र आते कि माधवीजी भी आ रही हैं न? माधवीजी क्या कहती हैं? माधवी जी क्या चाहती हैं?

लेकिन माधवी कुछ ऐसी निकली कि किसी को आँख उठाकर देखना हो या

किसी पर मुस्कान फेरनी हो तो वह मुत्तुकुमरन् की आज्ञा चाहेगी। हाँ, बिना उसकी आज्ञा के माधवी लता का अब एक पत्ता भी नहीं हिलता।

गोपाल ने देखा कि ऐन मौक़ा हाथ से निकला जा रहा है। उसे इस बात की पहले आशा नहीं थी कि वातावरण कुछ इस तरह करवट लेगा। उसे इस बात की तनिक बू तक लगी होती तो मुत्तुकुमरन् को इस सफ़र में साथ लाया ही नहीं होता।

'शुरू में ही मुझे मना कर देना चाहिए था। मैंने बड़ी भूल कर दी! अब पछताने से क्या फ़ायदा?' गोपाल विचारों में खो गया।

'कॉकटेल-मिक्स' करके, एक 'ट्रे' में चार गिलास उठाये जब अब्दुल्ला ने मुड़कर देखा तो पाया कि वहाँ गोपाल के सिवा कोई तीसरा नहीं था।

"वे कहाँ हैं? मैंने तो चार गिलास मिला लिये हैं।"

"न जाने, कहाँ नीचे उतर गये! शायद टहलने गये हों।"

"आप ज़रा ज़ोर डालते तो वे रुक जाते, मिस्टर गोपाल! वह नाटककार बड़ा ढीठ है और हमेशा उसी के पीछे लगा रहता है। उसे एक गिलास देकर दो घूंट पिला देते तो माधवी आप ही वश में आ जाती।"

गोपाल ने कोई उत्तर नहीं दिया। अब्दुल्ला बोलते चले गये—"ऐसे 'ट्रिपों' में ऐसे झक्की आदमी हों तो 'ट्रिप' का मज़ा ही किरकिरा हो जाता है। कंपनी देने के लिए आदमी चाहिए न कि बिगाड़ने के लिए। ऐसे ढीठ और सरफिरों को तरज़ीह देना ठीक नहीं।"

"क्या करें? सगुन के डर से बिल्ली को गोद में लाने जैसी बात हो गयी! इस मनहूस को साथ लाने के पाप का फल भुगतना ही पड़ेगा।"

दोनों आमने-सामने बैठकर 'कॉकटेल' में डूब गये।

बातों की दिशा बदलकर गोपाल ने पिनांग शहर की सुन्दरता और स्वच्छता पर विस्मय प्रकट किया।

"इसकी वजह क्या है, मालूम है? इस शहर को सँवारने का काम अंग्रेज़ों ने किया है। वे इसे 'जॉर्ज टाउन' मानते हैं।"

"हमारे तमिळ भाइयों के अलावा यहाँ और कौन बसे हुए हैं?"

"चीनी हैं। सेनयीन नाम से मेरे एक दोस्त हैं। उनके घर हम कल 'लंच' के लिए जा रहे हैं। बड़े भारी टिम्बर मर्चेन्ट हैं वे। हांगकांग में भी उनका 'बिज़नस' चलता है। बड़े मिलनसार आदमी हैं।"

"हमारे नाटकों में सिर्फ़ तमिळ दर्शक आते हैं या चीनी और मलेशियन आदि भी आते हैं?"

"सब आते हैं। पर नाटकों में विशेष रुचि लेनेवाले तो तमिळ ही अधिक हैं। नाच या 'ओरियंटल डान्स' जैसा कुछ हो तो चीनी और मलेशियन अधिक तादाद

में आते हैं। आपका नाम तो सिने-संसार में भी काफ़ी फैला है, इसलिए अच्छी कमाई होगी। पिनांग की ही बात लीजिए तो पहले के दो दिनों तक खेले जानेवाले नाटक तो अभी से 'हाउसफ़ुल' हो गये हैं।"

"अच्छा ! दूसरे शहरों के इंतज़ाम कैसे होंगे ?"

"क्वालालम्पुर, ईप्पो, मलाया, सिंगापुर—सभी जगहों में प्रोग्राम अच्छा ही रहेगा। सभी शहरों में आपके चाहनेवाले बड़ी तादाद में हैं।"

गोपाल 'कॉकटेल' का दूसरा प्याला भी गटक गया।

अब्दुल्ला ने नौकर को बुलाकर माधवी और मुत्तुकुमरन् के बारे में पूछताछ की। पिनांग हिल पर अब्दुल्ला के बँगले के पास ही एक पार्क था। नौकर ने कहा कि दोनों उसी ओर गये होंगे। गोपाल ज़रा ज़्यादा ही थक गया था। नशा भी चढ़ रहा था। इसलिए लड़खड़ाते पैरों अपने कमरे में गया और बिस्तर पर गिर गया।

अब्दुल्ला नाइट गाउन पहनकर हाथ में पाइप लिये आये और द्वार पर कमरे के अन्दर सोफ़ा लगवाकर बैठ गये। उनके मुख से पाइप का गोलाकार धुआँ सिर पर गुम्बद-सा बनाता और मिटाता जा रहा था।

उनके मन से माधवी की याद मिटी ही नहीं। सच पूछा जाए तो नशे-पर-नशा चढ़ा था। पिनांग शहर में ही उनका एक बँगला था। उसमें घर के लोग रहते थे। इसीलिए वे 'हिल' वाले बँगले पर आये थे। उन्हें इस बात की तकलीफ़ हो रही थी कि यहाँ आकर भी हम माधवी को वश में नहीं कर पाये। अब वे इसी ताक में उसके लौटने की राह पर बैठे थे कि कोई-न-कोई व्यूह बनाकर किसी-न-किसी तरह, माधवी को वश में कर लें।

द्वार के बाहर कोहरा धुएँ की तरह छाया हुआ था। धीरे-धीरे सरदी भी बढ़ने लग गयी थी।

नीचे समुद्र में उस पार से पिनांग द्वीप को जोड़नेवाले फ़ेरी बोट आते हुए 'साइरन' बजा रहे थे। उनकी मंद-मंद ध्वनि कानों में सुनायी दे रही थी। उस पार के, पिरै की बत्तियाँ धुँधली दिखायी दे रही थीं। समुद्र के जल में प्रकाश में घुली-मिली छाया लहरा रही थी।

बड़ी लम्बी प्रतीक्षा के बाद माधवी और मुत्तुकुमरन् हाथ-में-हाथ लिये आ पहुँचे। सामने अब्दुल्ला को बैठे देखकर दोनों के हाथ अलग हो गये। ऐसा लगा कि अपनी प्राकृतिक घनिष्ठता को अस्वाभाविक ढंग से काटकर दोनों एक-दूसरे से विलग होकर आ रहे हैं।

माधवी के जूड़े में पिनांग हिल पार्क में खिले सफ़ेद रंग के गुलाबों में से एक, दो पत्तों सहित तोड़कर खोंसा हुआ था। अब्दुल्ला ने जब यह देखा तो उन्हें याद आया कि यहाँ से जाते हुए उसके बालों पर कोई फूल न था। उन्होंने मुत्तुकुमरन्

पर ईर्ष्या भरी तिरछी दृष्टि यों फेरी, मानो कोई हाथी झुकी आँखों से नीचे देखता हो।

"एकाएक कहाँ गुम हो गये? कॉकटेल मिक्स करके देखा तो तुम दोनों अचानक ग़ायब हो गये थे। पार्क गये थे क्या?"

"हाँ, ये ज़रा टहलने को साथ बुला रहे थे तो चल पड़े।" माधवी ने जान-बूझकर 'ये' पर ज़ोर देकर कहा।

मुत्तुकुमरन् तो उनके सामने ठहरना नहीं चाहता था। वह तेज़ी से डग भरता हाल में चला गया।

माधवी को रोकने के विचार से अब्दुल्ला ने बात ज़ारी की—"पार्क जाने की बात कही होती तो हम भी आये होते।"

"आप और गोपाल साहब कॉकटेल में काफ़ी गहरे डूबे थे; इसलिए साथ आयेंगे या नहीं आयेंगे—सोचकर हम चले गये।"

"कहा होता तो किसी को साथ भेजा होता।"

"जब लेखक साथ रहे तो और किसी को व्यर्थ में साथ करने की क्या ज़रूरत थी?"

"आपको कोई अच्छी 'सेंट' चाहिए तो कहिये! मेरे पास बढ़िया-से-बढ़िया सेंट हैं।" उनकी बातों में इत्र की बू नहीं; वासना की बू थी।

माधवी ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसके मन की जानकर मन-ही-मन में हँस पड़ी।

"चानल नंबर फ़ाइव, चाटरा, इवनिंग इन पेरिस—जो चाहिए, कहिए। दूँगा। मुझे मालूम है, गोपाल साहब ने बताया है कि आपको सुगंधित चीज़ें बहुत पसंद हैं।"

"जी नहीं! अब मुझे किसी की कोई ज़रूरत नहीं। ज़रूरत पड़ी तो अवश्य माँग लूँगी; ज़रा भी संकोच नहीं करूँगी।" माधवी ने कहा।

उसका जी अब्दुल्ला की बातों और दृष्टि से बचकर भागने का कर रहा था। वह जल्दी-से-जल्दी अपने कमरे में जाकर सोना चाहती थी। अब्दुल्ला तो मानो उससे गिड़गिड़ाने ही लग गये, "थोड़ी देर बैठो न माधवी! अभी से ही नींद आ गयी है क्या?"

"हाँ, सवेरे मिल लेंगे! गुड नाइट!" कहकर माधवी अपने कमरे में गयी और छिटकनी लगाकर उसने चैन की साँस ली।

सवेरे उठकर, 'ब्रेक फास्ट' से निवृत्त होकर वे सब पिनांग हिल से नीचे उतर पड़े। उसी दिन, मद्रास से जहाज़ पर चले कलाकार, कर्मचारी और सीन-सेटिंग जैसे नाटक के सामान पिनांग के बंदरगाह के किनारे लगनेवाले थे। उन्हें लिवा लाने के लिए उन्हें जाना था।

पिनांग हिल से लौटने के बाद से अब्दुल्ला मुत्तुकुमरन् की बड़ी उपेक्षा करने ख़ामख़ाह नफ़रत का ज़हर उगलने लग गये थे। और गोपाल उनका विरोध मोल लेना नहीं चाहता था। इसलिए देखकर भी अनदेखा कर चुप्पी साध गया।

माधवी बड़े धर्म-संकट में पड़ गयी। उसकी वेदना और ग्लानि का पारावार नहीं रहा। उसे यह समझने में कोई कठिनाई नहीं हुई कि अब्दुल्ला मुत्तुकुमरन् की इतनी उपेक्षा क्यों कर रहा है और उसपर घृणा की आग क्यों उगल रहा है?

मुत्तुकुमरन् और गोपाल भी इस बात को खूब ताड़ चुके थे। गोपाल न तो अब्दुल्ला का विरोध-भाजन बनना चाहता था और न मुत्तुकुमरन् का। पर अन्दर-ही अन्दर वह भी मुत्तुकुमरन् पर उमड़-घुमड़ रहा था।

माधवी यद्यपि सबसे हँसती-बोलती थी, लेकिन मन ही मन गोपाल और अब्दुल्ला पर आग-बबूला हो रही थी।

मुत्तुकुमरन् के विचार तो यों दौड़ने लगे थे कि दोस्त की बात मानकर मैंने पहला ग़लत काम यह किया कि इस यात्रा में सम्मिलित होने की सम्मति दे दी। अदरख के व्यापारी का जहाज़ के व्यापार से क्या सरोकार? पर हाँ, सिर्फ़ मित्र की बात मानकर मैं कहाँ आया? माधवी का साथ ही इसके पीछे बलवती रहा है? वस्तुतः मूल कारण की तह में जाने पर माधवी का नया और सच्चा प्रेम ही उभर आता है। नहीं तो इस विलायती यात्रा के लिए मैं राजी ही क्यों होता?

इस सिलसिले में उसका ध्यान एक दूसरी ओर भी गया।

मद्रास में पहले-पहल जब वह अब्दुल्ला से मिला था, तभी अब्दुल्ला और उसके बीच मनोमालिन्य का बीज पड़ गया था। कितने ही कटु प्रसंगों ने खाद बनकर उसके पनपने में हाथ बँटाया। अब तो घृणा और उपेक्षा की हद हो गयी है!

पिनांग की धरती पर आकर मुत्तुकुमरन् ने विचार किया तो मुत्तुकुमरन् को पता चला कि पहले घटी घटनाओं और अब घट रही घटनाओं के बीच सम्बन्ध है।

वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि उसी मूल घृणा से यह घृणा पैदा हुई होगी और उन उपेक्षाओं से इन उपेक्षाओं को उत्तेजना मिली होगी।

दूसरे कलाकारों को बंदरगाह से लाने के लिए जब चलने लगे, तब अब्दुल्ला या गोपाल ने मुत्तुकुमरन् की इस तरह उपेक्षा की कि न तो उसे साथ चलने को बुलाया और न साथ न आने को कहा। पर माधवी को साथ चलने को बार-बार बुला रहे थे।

माधवी को लगा कि अब्दुल्ला और गोपाल दोनों मिलकर मुत्तुकुमरन् की अवज्ञा और उपेक्षा करने की कोशिश कर रहे हैं। वह यह भी जानती थी कि मुत्तुकुमरन् का आत्माभिमान जग जाये और रोष फूट जाये तो ये दोनों उसके सामने टिक नहीं सकेंगे।

लेकिन मुत्तुकुमरन् को, अपने स्वभाव के विरुद्ध, संयम और शांति बरतते देखकर उसे आश्चर्य हुआ। नयी जगह पर, जहाँ बातचीत तक करने के लिए भी कोई नहीं, मुत्तुकुमरन् को अकेले छोड़कर, जहाज़ से आनेवाले कलाकारों को लिवा लाने के लिए वह नहीं जाना चाहती थी। उसने सिर-दर्द का बहाना कर इनकार कर दिया। अब्दुल्ला और गोपाल ने कितना ही कहा। पर उसने सुना नहीं। आख़िर उन दोनों को लाचार होकर माधवी के बिना बंदरगाह जाना पड़ा।

घर में केवल माधवी और मुत्तुकुमरन् रह गये थे। उस एकांत में माधवी की समझ में नहीं आया कि वार्तालाप कैसे शुरू करे, कहाँ से शुरू करे और किन शब्दों से शुरू करे? दोनों के बीच थोड़ी देर मौन छाया रहा।

"मेरे ही कारण आपको ये सारे कष्ट सहने पड़ रहे हैं! मुझे भी नहीं आना चाहिए था और आपको भी लाकर व्यर्थ कष्ट में डालना नहीं चाहिए था!"

मुत्तुकुमरन् ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह किसी गहरे सोच में पड़ा था। उस का हर पल का वह मौन माधवी को संकट में डाल रहा था। आख़िर वह मौन तोड़कर बोला, "कष्ट-वष्ट कुछ नहीं। मुझे कष्ट देनेवाला कोई मनुष्य अभी पैदा नहीं हुआ। लेकिन तुम जैसी एक युवती से प्रेम करके, वह सच्चा प्रेम अखंड होकर, जब विपक्ष से वापस मिलता है, तब मुझे अपने मानाभिमान, रोष-तोष, कोप-ताप —सबको दिल-ही-दिल में रखना पड़ता है। प्रेम की ख़ातिर इतने बड़े-बड़े अधिकारों को त्यागना पड़ेगा—आज ही मैं समझ पा रहा हूँ। यही बात मुझे आश्चर्य में डाल रही है।"

"इस मामले में अब्दुल्ला घोर असभ्य और जंगली निकलेगा—इसका मुझे ख़्याल तक नहीं आया।"

"तुम्हें ख़्याल नहीं आया तो उसके लिए दूसरा कोई क्या करे? असभ्यता ही आज पचहत्तर प्रतिशत लोगों में घर किये हुए है। सभ्यता तो एक ओढ़नी मात्र है। जब चाहे, मनुष्य निकालकर ओढ़ लेता है, बस!"—मुत्तुकुमरन् ने विरक्ति से उत्तर दिया।

जहाज़ पर आनेवालों ने आवास पर पहुँचकर दोपहर तक विश्राम किया। तीसरे पहर को, सब अलग-अलग कारों पर सवार होकर पिनांग नगर का पर्यटन करने चल पड़े। सभी सहस्र बुद्ध का पगोडा, साँपों का मन्दिर, पिनांग के पर्वत-प्रदेश और समुद्र-तट की सैर को गये।

माधवी मन-ही-मन डर रही थी कि पिछली रात और सुबह की अवज्ञा और उपेक्षा का ख़्याल करके, मुत्तुकुमरन् घूमने आने से कहीं इनकार कर दे तो क्या हो? लेकिन वह वैसी कोई ज़िद न पकड़कर शांतचित्त से चलने को तैयार हो गया तो उसे आश्चर्य हुआ।

वे जहाँ-जहाँ गये, कलाकारों को देखने के लिए लोगों की बड़ी भीड़ लग गयी।

ऑटोग्राफ़ और फोटोग्राफ़ के लिए लोग पिल पड़े।

सहस्र बुद्ध का पगोडा पहाड़ पर एक अटारी जैसा खड़ा था। उस पहाड़ के चारों ओर जिधर देखो, बुद्ध मन्दिर थे। सारा मन्दिर-परिसर अगर बत्तियों की सुगंध से महक उठा था। कहीं-कहीं लाठी और मूसल जैसी दानवाकार अगर-बत्तियाँ लगी थीं।

फ़ोटो खिंचवाने और चित्र चाहनेवालों को चित्र बेचने के लिए चीनी विक्रेतागण बड़ी फुर्ती से दौड़-दौड़कर ग्राहक खोज रहे थे।

मदुरै के नये मंडप की दूकानों की भाँति और पलनि के पहाड़ पर चढ़ने की पगडंडी की भाँति, बुद्ध-मन्दिर जानेवाली सीढ़ियों में भी दोनों तरफ़ चीनियों की घनी दूकानें थीं। खिलौनों से लेकर तरह-तरह के उपयोगी और केवल सजावटी सामान उन दूकानों में बिक रहे थे। वे चीनियों की मेहनत और कारीगरी का उत्तम नमूना पेश करते थे।

सहस्र बुद्ध के पगोडे की सीढ़ियाँ चढ़ते हुए एक जगह पर माधवी की साँस चढ़ गयी। उसके पीछे सीढ़ियाँ चढ़ते हुए मुत्तुकुमरन् ने देखा कि वह लड़खड़ा रही है तो उसने लपककर हाथों का सहारा दिया।

"कहीं गिरकर मर ही न जाना! तुम्हारे लिए मैं जो साधना कर रहा हूँ, उसका क्या होगा?" उसने उसकी कमर को ज़ोर से भींचते हुए उसके कानों में कहा तो माधवी पर मधुवर्षा-सी हुई।

"मरूँ? वह भी आपके साथ रहते हुए? ना बाबा, ना!" यह कहते हुए माधवी के मुख पर जो मुस्कान खिली, वह अमरत्व की बेल बो गयी! उस मुस्कान को फिर से देखने का उसका मन लालायित हो उठा। इस एक मुस्कान के लिए, उसे लगा कि अब्दुल्ला की अवज्ञा, गोपाल की उपेक्षा आदि सभी कुछ सहे जा सकते हैं।

सहस्र बुद्ध पगोडे से वे सीधे साँपों के मन्दिर में गए। उस मन्दिर के किवाड़ों पर, झरोखों के सीखचों पर, जहाँ देखो वहाँ हरे-हरे साँप रेंग रहे थे। बरामदे पर रखे गमलों पर, ग्रोटन्स के पौधों पर और छत की बुर्जियों पर भी साँप लटक रहे थे। पहले ही से परिचित व्यक्ति तो निडर होकर आते-जाते रहते थे। पर नवागंतुक तो डर रहे थे। कुछ हिम्मतकर लोग उन साँपों को हाथों में लिये या गले में माला की तरह पहने हुए 'फ़ोटो' के लिए 'पोज़' भी दे रहे थे। ऐसे चित्र उतारने के लिए कुछ चीनी वहाँ पहले से ही मौजूद थे। वे पर्यटकों से कह रहेथे कि आप अपना स्थायी पता और रुपये दे जायें तो फ़ोटो आपको खोजते हुए आपके घर आ जायेंगे।

गोपाल डर के मारे मन्दिर के बाहर ही रह गया। माधवी भी कम डरपोक नहीं थी। पर मुत्तुकुमरन् धैर्य के साथ अंदर चला गया तो वह भी उसका पीछा किये बिना नहीं रह सकी।

"हमारे इर्द-गिर्द मँडराने वालों में कितने ही ऐसे हैं, जो इन विषधर नागों से कम क्रूर नहीं हैं। जब हम उनसे ही नहीं डरते तो इन बेचारे बेज़ुबान प्राणियों से क्यों डरें ?"—मुत्तुकुमरन् ने पूछा।

"किसी आदत की वजह से इस मन्दिर में लगातार साँप आते रहते हैं। यदि लोग उन्हें न सतायें तो वे भी नहीं काटते।" मार्ग-दर्शक के रूप में अब्दुल्ला द्वारा भेजे हुए आदमी ने कहा।

साँपों के मन्दिर से वे पिनांग नगर की वीथियों से चलकर एक बुद्ध मन्दिर में गए। शयनासन में बुद्ध की एक बड़ी प्रतिमा उस मन्दिर में थी। एक पहाड़ी पर चढ़ते हुए उन्होंने रास्ते में एक पुराना हिन्दू मन्दिर भी देखा।

पहाड़ पर एक जगह कारें खड़ी करके मार्ग-दर्शक ने उन्हें डोरियान, रम्बुत्तान, जैसे फल ख़रीदकर चखने को दिए। डोरियान फल की बू से माधवी को उबकायी आयी। मुत्तुकुमरन् ने तो उस फल की फाँक खाकर कहा कि उसका स्वाद मधु-मधुर है। माधवी भी नाक पकड़कर उस फल के पिलपिले गूदे को एक झटके में निगल गयी। डोरियान कटहल की फाँक से भी सफ़ेद और सख़्त था। पर वह बहुत मीठा था। भगवान ने न जाने क्यों, उस मीठे और जायकेदार फल में ऐसी बदबू भर रखी थी !

वे पहाड़ी सड़कों से गुज़रते हुए पिनांग द्वीप की सभी दिशाओं में हो आए। गोपाल यद्यपि उनके साथ गया, फिर भी अपनी हैसियत और बड़ाई की धाक जमाने के लिए उनसे दूर ही रहा। किसी से ज़्यादा मिला-जुला नहीं। सिर्फ़ उसके उपयोग के वास्ते अब्दुल्ला ने एक 'कॅडिलक्' स्पेशल कस्टम की कार का प्रबंध कर रखा था। सभी जगहों में वही कार आगे-आगे गयी और बाक़ी सब कारें पीछे-पीछे।

सत्रह

दूसरे दिन शाम को, उनकी मंडली के प्रथम नाटक का मंचन होना था। इसलिए उस दिन सवेरे वे लोग कहीं बाहर नहीं गए। दोपहर को गोपाल अपने कुछ साथियों के साथ, मंच की व्यवस्था, सीन-सेटिंग के प्रबन्ध आदि का निरीक्षण करने के लिए थियेटर हाल तक हो आया।

उस दिन दोपहर का भोजन अब्दुल्ला के एक मित्र सेन ई नाम के चीनी दोस्त के यहाँ था। किसी-न-किसी बहाने अब्दुल्ला माधवी के इर्द-गिर्द यों मँडराते रहे,

जैसे फूल के इर्द-गिर्द भौंरा। उधर मुत्तुकुमरन् सदैव माधवी के साथ रहकर उनके लिए विघ्न बना फिर रहा था। दिन पर दिन उसके प्रति नफ़रत बढ़ती जा रही थी। मुत्तुकुमरन् कुछ ऐसा प्रतिद्वन्द्वी निकला कि अब्दुल्ला को माधवी के पास फटकने या बोलने-चालने नहीं देता था।

प्रथम दिन का नाटक बड़ा सफल रहा। उस रात को अब्दुल्ला और मुत्तुकुमरन् में आमने-सामने ही फिर झड़प हो गयी। अच्छी रकम वसूल हो जाने और दर्शकों की भरी-पूरी भीड़ हो जाने के कारण गोपाल पर अब्दुल्ला की बड़ी धाक जम गयी कि इन्हीं की बदौलत यह सबकुछ हुआ है।

नाटक पूरा होते-होते रात के ग्यारह बज गए थे। नाटक के अंत में, सबको मंच पर बुलाकर माला पहनाकर अब्दुल्ला ने सम्मान किया। पर जान-बूझकर मुत्तुकुमरन् को छोड़ दिया। यद्यपि मुत्तुकुमरन् को भूलने जैसी कोई बात नहीं थी, फिर भी उन्होंने ऐसा अभिनय किया कि उस समय जैसे उसका स्मरण ही नहीं रहा। गोपाल को इसकी याद थी। पर वह यों चुप रह गया, मानो अब्दुल्ला के कामों में दख़ल देने से डरता हो। पर माधवी के क्षोभ का कोई पारावार नहीं था। उसे लगा कि ये सभी मिलकर कोई साज़िश कर रहे हैं।

नाटक के बाद, पिनांग के एक धनी-मानी व्यक्ति के यहाँ उनके रात के भोजन का प्रबन्ध था। उन्हें ले जाने के लिए मेजबान स्वयं आये थे।

मंच पर हुए उस अनादर से क्षुब्ध माधवी ने अपनी एक सह-अभिनेत्री के द्वारा मुत्तुकुमरन् को 'ग्रीन रूम' आने के लिए कहला भेजा। वह भी केरल की तरफ़ की ही थी।

नीचे, मंच के नीचे खड़े मुत्तुकुमरन् के पास आकर उसने कहा कि माधवी ने बुलाया है। वह अनसुना-सा खड़ा रहा तो वह बोली, "क्या मैं जाऊँ?"

उसने सिर हिलाकर 'हाँ' का इशारा किया तो वह चली गयी। थोड़ी देर की मुहलत देकर वह 'ग्रीन रूम' में गया तो माधवी ने उसके निकट आकर भरे-गले से कहा, "यहाँ का यह अन्याय मैं नहीं सह सकती। हमें दावत में नहीं जाना चाहिए।"

"स्वाभिमान अलग है और ओछापन अलग है। उनकी तरह हमें ओछा व्यवहार नहीं करना चाहिए। माधवी, ऐसी बातों में मैं बड़ा स्वाभिमानी आदमी हूँ। कोई भी सच्चा कलाकार स्वाभिमानी ही होता है। लेकिन वह आत्मसम्मान सार्थक होना चाहिए। न कि घटिया क्रोध। नये देश में, नये शहर में हम आए हैं। हमें ऐसा व्यवहार करना चाहिए कि हमारा बड़प्पन बना रहे और बढ़ता रहे!"

"यह तो ठीक है! पर दूसरे लोग हमारे साथ बड़प्पन का व्यवहार कहाँ करते हैं? ओछों का-सा घटिया व्यवहार नहीं कर रहे?"

"परवाह नहीं! हमें अपने बड़प्पन के व्यवहार से च्युत नहीं होना चाहिए!"

इसके बाद माधवी ने कोई दलील नहीं दी। उस रात के भोज में वे दोनों सम्मिलित हुए।

भोज एकदम पाश्चात्य तरीक़े का था। बड़े-बड़े कॉस्मापालिटन्स को आमंत्रित किया गया था। कुछ मलायी, चीनी, फिरंगी और अमेरिकन अपने-अपने कुटुंब के साथ आए थे।

भोज के उपरांत, एक दूसरे हाल में आए हुए औरत-मर्द हाथ में हाथ लिये 'डान्स' करने लगे। मुत्तुकुमरन् और माधवी एक ओर लगी कुर्सियों पर बैठकर बातें करने लगे। गोपाल भी एक चीनी युवती के साथ नाच रहा था। उस समय अब्दुल्ला ने माधवी के पास आकर अपने साथ 'डान्स' करने के लिए बुलाया।

"एक्स्क्यूज़ मी, सर ! मैं इनके साथ बातें कर रही हूँ।" माधवी ने सादर जवाब दिया। पर अब्दुल्ला ने नहीं छोड़ा। लगा कि उन्होंने अपनी हवस पूरी करने के लिए ही इस भोज का इन्तज़ाम किया है। उसके पास बैठकर बातें करने वाले मुत्तुकुमरन् को नाचीज़ समझकर वे माधवी के सामने दाँत निपोरकर गिड़िड़ाने लगे। मुत्तुकुमरन्, जहाँ तक संभव हुआ, उनके बीच में नाहक पड़ना या जवाब देना नहीं चाहता था। पर बात जब हद से बाहर हो गयी तो वह चुप्पी साधे बैठा नहीं रह सका। अपने उन्माद में एक बार अब्दुल्ला अपने को काबू में नहीं रख सके और जोश में भरकर माधवी का हाथ पकड़कर खींचने लग गये।

"अनिच्छा प्रकट कर रही युवती का हाथ पकड़कर खींचना ही यहाँ की सभ्यता है क्या ?" उसने पहले-पहल अपना मुँह खोला। यह सुनकर अब्दुल्ला तैश में आकर आँखें तरेरते हुए उस पर पिल पड़े—"शट अप। आइ एम नाट टॉकिंग विद् यू।"

माधवी तो अब उनसे और घृणा करने लगी। इसके बाद ही गोपाल उसके पास दौड़ा आया और अब्दुल्ला की वकालत करते हुए बोला, "इतने सारे रुपये खर्च करके इन्होंने हमें बुलाया है। हमारे स्वदेश लौटने तक ये हमारे लिए बहुत कुछ करना चाहते हैं। उनका दिल क्यों तोड़ रही हो ?"

"नहीं, मैं किसी के कहने पर नहीं नाच सकती !"

माधवी के इस इनकार के पीछे गोपाल ने मुत्तुकुमरन् का ही हाथ पाया। उसे लगा कि मुत्तुकुमरन् पास नहीं रहता तो माधवी के मुख से इनकार के इतने कड़े शब्द नहीं निकलते। इसलिए, वह चोट खाए हुए बाघ की तरह दहाड़कर बोला, "इस तरह तुम्हें डरते देखकर लगता है कि तुमने सिल पर पैर रखकर अरुंधती निहारते हुए उस्ताद का हाथ पकड़ा है और शास्त्रोक्त विवाह किया है। ऐसी शादी करनेवालियाँ भी यों पुरुष से डरती नहीं दीखतीं !"

मुत्तुकुमरन् पास ही खड़ा था। वह दोनों की बातें सुन रहा था। पर वह उनकी बातों में नहीं पड़ा। माधवी गोपाल की बात सुनकर आक्रोश से भर गयी और बोली,

"छिः ! आप भी कोई मर्द हैं ? एक औरत के सामने ऐसी बातें करते हुए आपको शरम नहीं आती ?"

माधवी के मुख से ऐसी अप्रत्याशित बात सुनकर गोपाल सकपका गया। आज तक माधवी ने उसके प्रति इतने कड़े और मर्यादा से बाहर के शब्दों का प्रयोग नहीं किया था। यह उसके पिछले दिनों का अनुभव था। पर आज···? जितने भी कड़े शब्दों का इस्तेमाल संभव था, उतना कर दिया गया।

वह माधवी, जो उसके हुक्म सिर-आँखों पर बजा लाती थी, आज रोष-तोष, मान-अभिमान से भरकर नागिन की तरह बिफर उठी थी। इसका क्या कारण है ? जब कारण का मूल समझ में आ गया तो गोपाल का सारा क्रोध मुत्तुकुमरन् पर निकला। उसने पूछा—"क्यों उस्ताद ? यह सब क्या तुम्हारी लगायी है ?"

"इसीलिए तो मैंने कहा था कि मैं तुम लोगों के साथ नहीं आऊँगा !" मुत्तुकुमरन् ने गोपाल की बातों का उत्तर दिया तो माधवी को उसपर गुस्सा चढ़ आया।

"इसका क्या मतलब ? यही न कि आपके साथ आने पर मैं मान-अभिमान और रोब दाब से रहती हूँ और आपके न आने पर आवारा होकर फिरती ?" माधवी आग-बबूला होकर मुत्तुकुमरन् ही पर बरस पड़ी। उन दोनों में मनमुटाव होते देखकर गोपाल वहाँ से खिसक गया। माधवी ने मुत्तुकुमरन् को भी नहीं छोड़ा। कड़े शब्दों में टोका—"जब आप ही बेमुरव्वती की बातें करने लगे तो फिर मेरा आसरा ही कौन ? इससे दूसरे तो फ़ायदा उठाने की ही सोचेंगे।"

"मैंने कौन-सी बेमुरव्वती की बात कर दी कि तुम इस तरह चिल्लाती हो ? वह मुझपर उँगली उठा रहा है कि ये सब तुम्हारे काम हैं, ये सब तुम्हारे काम हैं ! मैंने पूछा कि फिर मुझे क्यों बुला लाये ? इसमें न जाने मेरा दोष क्या है कि तुम नाहक़ मुझपर गुस्सा उतार रही हो !"

"आपकी बातों से मुझे ऐसा लगा कि आप नहीं आते तो मैं अपनी मर्ज़ी से आवारा घूमती-फिरती ! इसीलिए मैंने···"

"वे लोग अभी भी तुम्हारे बारे में वैसा ही समझ रहे हैं।"

"समझें तो समझें ! उसकी मुझे कोई चिंता नहीं। पर आप मुझे तो सही समझे—इतना ही मैं चाहती हूँ। आप भी मुझे ग़लत समझने लगेंगे तो मुझसे बर्दाश्त नहीं होगा !"

"इतने दिनों से बर्दाश्त ही तो करती रही हो ! एकाएक तुम्हारे व्यवहार में परिवर्तन देखकर वह हैरान है !" मुत्तुकुमरन् को अपनी ही यह बात पसंद नहीं आयी तो उसने उससे कुछ भी बोलना बन्द कर सिर झुका लिया।

भोज के बाद, अपने आवास लौटते हुए भी वे आपस में नहीं बोले। गोपाल और अब्दुल्ला—दोनों ने एक-दूसरे की तरफ़ से शायद मुँह ही फेर लिया। इधर

इन दोनों ने भी अपने आपसे मुँह फेर लिया।

उसके बाद, नाटक वाले तीनों दिन ऐसे ही बीते कि गोपाल की माधवी से, माधवी की मुत्तुकुमरन् से व्यवहार में सहजता ही नहीं आयी। छः बजे नाटक-मंडली के साथ, कारों में थियेटर जाते, ग्रीन रूम में जाकर 'मेकअप' करते और मंच पर आकर नाटक खेलते। फिर गुमसुम आवास को लौट आते थे।

गोपाल ने अब्दुल्ला की हविस पूरी करने का एक दूसरा रास्ता निकाल दिया। उसकी मंडली में 'उदयरेखा' नाम की छरहरे बदन की एक सुन्दरी थी। उसे अब्दुल्ला के साथ लगा दिया ताकि वह उसके साथ अकेली कार में जाये और उसके दिल को बहलाने के सामान सँजोये। वह स्त्री-साहस में निपुण थी और अब्दुल्ला को खुश कर टेप रिकार्डर, ट्रांजिस्टर, जापानी नाईलेक्स की साड़ियाँ, नेकलेस, अँगूठी, घड़ी वगैरह कितनी ही चीजें अपने लिए झटक लायी।

पहले दिन के अनुभव के बाद, मुत्तुकुमरन् ने नाटक-थियेटर में जाना ही छोड़ दिया और शाम का वक़्त अपने ही कमरे में गुज़ारना शुरू कर दिया। अकेले में रहते हुए वह कुछेक कविताएँ भी रच सका। ख़ाली समय में वह मळाया से निकलनेवाले दो-तीन तमिळ के दैनिक पत्रों को लेकर बैठ जाता। भाग्य से यहाँ के दैनिक अधिक पृष्ठों वाले होते थे और उसे समय काटने में मदद देते थे। दोपहर के वक़्त मंडली के कुछ कलाकार उससे बातें करने के लिए भी पास आ जाते थे। दूसरे या तीसरे दिन एक उप-अभिनेता मुत्तुकुमरन् से ही यह सवाल कर बैठा, "क्यों साहब, आपने नाटक में आना ही क्यों बंद कर दिया? आपमें और गोपाल साहब में कोई अनबन तो नहीं?"

मुत्तुकुमरन् ने लीप-पोतकर उत्तर दिया, "एक दिन देखना काफ़ी नहीं है क्या? हमारा नाटक हमारी मंडली खेलती है! रोज-रोज देखने की क्या ज़रूरत है?"

"ऐसे कैसे कह सकते हैं, साहब? नाटक सिनेमा की तरह नहीं है। एक बार 'कैमरे' में भरकर चालू कर दें तो फ़िल्म जैसे चलती ही रहेगी। नाटक की बात दूसरी है। वह प्राणदायिनी कला है। बार-बार खेलते हुए भी हर बार निखर उठती है, चमक उठती है! अभिनय, गीत—सब कुछ शान पर चढ़कर आनंद की गंगा बहा देते हैं।"

"बिलकुल ठीक फरमाया तुमने।"

"अब आप ही देखिए! कल आप नहीं आये। परसों आये थे। जिस दिन आपने आकर देखा था, उस दिन माधवीजी का अभिनय बड़ा शानदार और जानदार रहा। कल आप नहीं आये तो थोड़ा 'डल' रहा। उनके अभिनय में वह उत्साह नहीं रहा और वह जान नहीं रही!"

"तुम मेरी बड़ाई करने के ख़्याल से ही ऐसा कह रहे हो। वैसी कोई बात नहीं होगी। माधवी स्वभाव से ही समर्थ कलाकार है। वह जब भी अभिनय करे और

जहाँ भी करे, अपना स्तर बनाये रखेगी !"

"आप चाहे जितना उनका पलड़ा भारी करें, कर लें—लेकिन मैं नहीं मानूँगा। मैं ग़ौर से देखकर बता रहा हूँ। सच पूछिए तो अपने अनुभव से भी बता रहा हूँ। अपने प्रियजनों को दर्शकों की गैलरी में बैठे पाकर अभिनेता ऐसा निहाल हो जाता है, मानो कोई संजीवनी मिल गयी हो। एक बार की बात है, विरुदुनगर में मारियम्मन का मेला था। मैं नाटक खेलने अपनी पहले की मंडली के साथ गया हुआ था। वहीं मेरा जनम हुआ था। मेरी बुआ की बेटी—वही मेरी मंगेतर थी—नाटक देखने आयी थी। सच मानिए, उस दिन मैंने बहुत अच्छा अभिनय किया था।"

"अच्छा ! उससे तुम्हारी मुहब्बत रही होगी ?"

"अब आप आये रास्ते पर ? वही बात माधवी की···"

कहते-कहते वह रुक गया। इसलिए कि मुत्तुकुमरन् की दृष्टि पर उसकी दृष्टि पड़ते ही उसकी सिट्टी-पिट्टी भूल गयी।

उस अभिनेता की बातों की सच्चाई उसे भी मान्य थी। पर माधवी के साथ, अपने प्रेम को वह जग-जाहिर होने नहीं देना चाहता था। उसे भली-भाँति मालूम था कि उसकी अनुपस्थिति में माधवी का अभिनय फीका और बे-जान हो जायेगा। इतना सबकुछ जानते हुए, माधवी का उत्साह बढ़ाने के लिए ही सही, वह पिनांग के नाटकों में सम्मिलित नहीं हुआ।

पिनांग में, अंतिम नाटक के मंचन की समाप्ति के बाद नाटक-मंडली के लोग अकेले या गोष्ठी में खरीदारी के लिए बाज़ार गये। वहाँ सामान सस्ते बिकते थे। 'फ्री पोर्ट' होने से पिनांग के बाज़ारों में तरह-तरह की कलाई घड़ियाँ, टेरिलिन, रेयान, टेरिकाट, सिल्क, रेडियो जैसे बहुत सारे नये-नये सामान पहाड़-से लगे थे। गोपाल ने अब्दुल्ला से पेशगी लेकर अपनी मंडली के हर स्त्री-पुरुष को सौ-सौ मलेशियन रुपये दिये। मुत्तुकुमरन् और माधवी को ढाई सौ के हिसाब से पाँच सौ रुपये एक लिफ़ाफ़े में रखकर माधवी के हाथ में दे दिये। सीधे मुत्तुकुमरन् से मिलने और उसके हाथ रुपये देने को उसे डर लग रहा था। माधवी ने भी हिचकते हुए ही वे रुपये लिये।

"एक बात उनसे भी कह दीजिए। मैं उनकी अनुमति के बिना यह राशि लूँगी तो शायद वे नाराज़ हो जायेंगे !"

माधवी के मुख से इधर हिचकते-हिचकते बात फूटी और उधर गोपाल के मुख से काफी कड़क भरी आवाज़ फटी—"वे···वे कौन होते हैं तुम्हारे ? नाम लेकर मुत्तुकुमरन् क्यों नहीं कहती ?"

माधवी ने इसका कोई जवाब नहीं दिया। गोपाल आग उगलती आँखों से उसे देखकर चला गया। लेकिन उसने सख्ती का चाहे जैसा व्यवहार किया, वह

मुत्तुकुमरन् के पास जाते-जाते नरम हो गया। पिछले तीन दिनों से उन दोनों के बीच जो मौन छाया था, जो वैमनस्य घर किये हुए था, उसे तोड़ने के प्रयत्न में वह फिर बोला, "सभी 'शॉपिंग' को जा रहे हैं। हम पिनांग छोड़कर आज रात को ही रवाना हो रहे हैं। तुम भी जाकर कुछ ख़रीदना चाहो तो खरीद लो। माधवी के हाथ तुम्हारे लिए भी रुपये दे दिये हैं। चाहो तो कार भी ले जाओ। दोनों साथ ही जाकर ख़रीदारी कर आओ। बाद को चलते समय 'टाइम' नहीं रहेगा!"

"....."

"यह क्या? तुम सुनते ही नहीं! क्या तुम्हारे ख़्याल से मैं बेकार ही बके जा रहा हूँ?"

"जो कहना है, सो कह दिया न?"

"मुझे क्या? तुम्हारी ख़ातिर ही कहा!"

"माना तुम यह दिखाना चाहते हो कि मेरा तुम बहुत ख़्याल करते हो?"

"इस तरह ताना न मारो, उस्ताद! मुझसे सहा नहीं जाता!"

"तो क्या करोगे?"

"अच्छा, अब तुमसे आगे बोलना ठीक नहीं लगता है, ग़ुस्सा पीकर बैठे हो।" इतना कहकर गोपाल वहाँ से खिसक गया।

उसके जाने के थोड़ी देर बाद माधवी आयी। उसमें मुत्तुकुमरन् का आमना-सामना करने का साहस नहीं था। इसलिए वह कहीं दूर देखती हुई खड़ी रही। उसके हाथ में गोपाल का दिया हुआ रुपयों वाला लिफ़ाफ़ा था। वह बोली—

"रुपया दिया है···'शॉपिंग' में जाना है तो खर्च के लिए···"

"किसके ख़र्च के लिए?"

"आपके और मेरे···" वह सहमी हुई थी।

"तुमने अपने लिए लिया, यह तो ठीक है। पर मेरे लिए कैसे ले लिया?"

"मैंने नहीं लिया! उन्होंने दिया।"

"दिया है तो रख लो! मुझे कहीं ख़रीदारी-वरीदारी के लिए नहीं जाना।"

"जाना तो मुझे भी नहीं है।"

"छिः-छिः! ऐसा न कहो! जाओ, जो चाहो, खरीद लो! उदयरेखा को देखो, दो दिनों से नाइलान, नाईलैक्स वगैरह पहनकर बनी-ठनी फिर रही है। उससे कम की चीज़ तुम क्यों पहनो? तुम तो 'हीरोइन' ठहरीं!"

"ऐसी बातें आपके मुँह से शोभा देती हैं क्या? मेरे बारे में आपका जी इतना खट्टा हो गया है कि उदयरेखा को और मुझे एक तराजू पर तोल रहे हैं!"

"यहाँ किसी का जी नहीं बिगड़ा। अपना-अपना मन तोलकर देखें तो पता चले।"

"पता क्या चलेगा?"

"दो-तीन दिनों से कैसा सलूक कर रही हो ?"

"···यही सवाल आपसे भी तो दुहराया जा सकता है"—कहती हुई माधवी उसके पास गयी और बड़े धीमे स्वर में गिड़गिड़ाती-सी फुसफुसायी, ताकि सिर्फ़ उसी के कानों में सुनायी दे—"देखिए, आप नाहक़ अपना दिल न दुखाइये। मैं अब कभी भी आपके साथ विश्वासघात नहीं करूँगी ! इस जगह तो मैं अबला हूँ । आप भी साथ न रहें तो मेरा कोई सहारा नहीं !"

"शक्तिहीन की शरण में जाने से क्या फ़ायदा ?"

"यदि आप में शक्ति नहीं तो इस दुनिया में और किसी में नहीं है। व्यर्थ में बार-बार मेरी परीक्षा न लीजिए !"

"तो फिर तीन दिनों से मेरे साथ बोली क्यों नहीं ?"

"आप क्यों नहीं बोले ?"

"मैं स्वभाव से ही क्रोधी प्राणी हूँ और मर्द हूँ !"

"यह जानकर ही मैं ख़ुद आकर आपसे हाथ जोड़ रही हूँ !"

"तुम बड़ी होशियार हो !"

"वह होशियारी भी आपकी बदौलत ही नसीब हुई है !"

मुत्तुकुमरन् के चेहरे से रूखी नाराज़गी की परत उतर गयी और उसकी जगह मुस्कान ने ले ली। उसे पास खींचकर सीने से लगा लिया। माधवी उसके कानों में बोली, "द्वार खुला है।"

"हाँ-हाँ ! जाकर बंद कर आओ। कहीं अब्दुल्ला ने देख लिया तो जलेगा-भुनेगा कि मैं ख़ाक मालदार हूँ। मुझे यह माल नहीं मिला। और जो पैसे-पैसे का मोहताज है, माल उसके पैरों पर लोट रहा है।"

"नहीं, मेरे लिए तो आप ही राजा हैं !"

"बस, कहने भर को ही ऐसा कहती हो। लेकिन जब कथानायिका बनकर मंच पर उतरती हो तो और किसी राजा की रानी बन जाती हो।"

"देखिए, अभी भी आप बाज़ नहीं आये। इसी डर से मैं आपसे बार-बार विनती करती रहती हूँ कि मंच पर मुझे किसी के साथ नाटक खेलते हुए या घनिष्ठता बढ़ाते हुए देखकर मुझपर नाराज़ न हो जाइए। फिर वही पुरानी चक्की आप बार-बार पीस रहे हैं। इससे ज़्यादा मैं क्या कर सकती हूँ ! सच मानिए, मंच पर भी मैं आप ही को कथानायक का पार्ट अदा करते हुए देखना चाहती हूँ। आप कथानायक बनकर मंच पर आ गये तो अच्छे-से-अच्छे कलाकारों का भी कलेजा मुँह को आ जायेगा !"

"बस, बस ! ज़्यादा तलुवे न सहलाओ !"

"अब तलुवे सहलाकर साधने योग्य कोई काम बाक़ी नहीं रह गया !"

"बस, बस ! बको मत ! हमें यहाँ किसी दूकान में जाना नहीं है। सारी

'शॉपिंग' वापसी में हम सिंगापुर में कर लेंगे !"

माधवी ने मुत्तुकुमरन् की यह बात मान ली। उसी समय दोनों ने यह भी प्रतिज्ञा की कि अब्दुल्ला और गोपाल चाहे जितना भी रूखा व्यवहार करें, हमें विचलित नहीं होना चाहिए। लेकिन उसी दिन शाम को ईप्पो चलते हुए तलवार की धार से गुज़रना पड़ा।

नाटक के थोक ठेकेदार अब्दुल्ला ने अपने साथ ईप्पो चलने के लिए गोपाल और माधवी के लिए वायुयान का प्रबंध करके बाक़ी सभी के लिए कारों की व्यवस्था कर दी। इससे मुत्तुकुमरन् को कार में जाने वालों में सम्मिलित होना पड़ा।

चलने के थोड़ी देर पहले ही माधवी को इस बात का पता चला। उसने तुरन्त गोपाल के पास जाकर बड़े धैर्य से कहा, "मैं भी कार ही में आ रही हूँ। आप और अब्दुल्ला 'प्लेन' पर आइये।"

"नहीं ! ईप्पो वाले हमारे स्वागत के लिए 'एयरपोर्ट' आये होंगे।"

"आये हों तो क्या ? आप तो जा रहे हैं न ?"

"जो भी हो, तुम्हें 'प्लेन' में ही चलना चाहिए !"

"मैं कार में ही आऊँगी।"

"यह भी क्या ज़िद है ?"

"हाँ, ज़िद ही सही।"

"उस्ताद को प्लेन का टिकट नहीं दिया गया—इसीलिए यह हंगामा कर रही हो ?"

"आप चाहे तो वैसा ही मानिए। मैं तो उन्हीं के साथ कार में ईप्पो आऊँगी।"

"यह उस्ताद कोई आसमान से अचानक तुम्हारे सामने नहीं टपक पड़ा ! मेरे ही कारण तुम्हारी उससे दोस्ती है !"

"कौन इनकार करता है ? उससे क्या ?"

"बढ़-बढ़कर बातें करती हो ? तुम्हारा मुँह बहुत खुल गया है !"

"....."

"नयी जगह में हमारे हाथ बँधे हैं। मैं कुछ नहीं कर पा रहा। अगर मद्रास होता तो 'गधी कहीं की ! हट जा मेरे सामने से' कहकर गरदनी देकर निकालता और तुम्हारी जगह किसी दूसरी हीरोइन को एक रात में पढ़ा-सुनाकर मंच पर खड़ा कर देता।"

"ऐसा करने की नौबत आये तो वह भी कर लीजिए ! पर हाँ, पहले अपने मुँह की थूक गटक लीजिए।"

यह सुनकर गोपाल हैरान रह गया। इसके पहले माधवी के मुख से ऐसी करारी चोट खाने का मौक़ा ही नहीं आया था। 'मुत्तुकुमरन का सहारा पाकर माधवी लता इतराने लगी है। अब इससे टकराना ठीक नहीं है—सोचकर गोपाल

ने उसका पीछा छोड़ दिया। आखिर अब्दुल्ला, गोपाल और उदयरेखा हवाई जहाज़ से ही गये। माधवी मुत्तुकुमरन् और मंडलीवालों के साथ कार में आयी।

माधवी का दिल दुखाने के विचार से उसके नाम से आरक्षित हवाई जहाज़ के टिकट पर ही उदयरेखा का नाम चढ़वाकर वे उसे हवाई जहाज़ से ले गये। पर माधवी ने इस बात का ख़्याल तक नहीं किया कि वे किसे हवाई जहाज़ पर ले जा रहे हैं।

लेकिन दूसरे दिन सवेरे उदयरेखा ही सबके सामने यह ढिंढोरा पीटे जा रही थी कि अब्दुल्ला के साथ वह पिनांग से हवाई जहाज़ पर आयी थी। वह चाहती थी कि उसकी बढ़ी हुई हैसियत का मंडलीवालों को पता चल जाये। इस स्थिति में, शायद उसकी यह धारणा रही हो कि इससे मंडलीवालों पर उसका रोब-दाब जम जायेगा।

अठारह

ईप्पो में पहले दिन के नाटक की टिकट-बिक्री काफ़ी अच्छी रही। दूसरे दिन भी वसूल में कोई कमी नहीं थी। फिर भी अब्दुल्ला की गोपाल से यह शिकायत थी कि पिनांग का-सा वसूली ईप्पो में नहीं है। नाटक के दूसरे दिन तेज़ बरसात हो जाने से, गोपाल के हिसाब से वसूल में वह तेज़ी नहीं रही।

ईप्पो में रहते हुए दोनों दिन दोपहर के वक्त उन्होंने दर्शनीय स्थलों को देख लिया। नाटक-मंडली का अगला पड़ाव क्वालालम्पुर था। बीच में एक दिन आराम के लिए रह गया था।

अब्दुल्ला, उदयरेखा और गोपाल ने 'कैमरान हाईलैंड्स' नाम के पहाड़ी आरामगाह तक हो आना चाहा। लेकिन उस एक दिन के लिए सारी नाटक-मंडली को वे ले जाने को तैयार नहीं थे।

"तुम चाहो तो आ सकती हो!" गोपाल ने सिर्फ़ माधवी से कहा।

"मैं नहीं आती!" माधवी ने संक्षेप में उत्तर देकर उससे पिंड छुड़ाना चाहा। लेकिन गोपाल ने यों ही नहीं छोड़ा। बोला, "उदयरेखा को भेजने के बाद भी, अब्दुल्ला तुम्हारी ही याद में घुले जा रहे हैं।"

"उसके लिए मैं क्या करूँ? मैंने कह दिया कि मैं 'कैमरान हाईलैंड्स' नहीं आती। उसके बाद भी आप वही बात दुहरा रहे हैं। मेरे पास इसके सिवा दूसरा कोई जवाब नहीं है।"

"बात यह है कि अब्दुल्ला करोड़पति हैं। उनका दिल आ गया तो वह पाँवों पर करोड़ों रुपये लाकर उड़ेल देंगे।"

"जहाँ चाहे, उड़ेलें!"

"तुम बेकार ही बदल रही हो।"

"हाँ, बदल गयी! आप समझ गये हों तो ठीक है।"

"उस्ताद ने तुमपर कौन-सा टोटका कर दिया है कि तुम उसपर इस तरह फिदा हो गयी हो।"

उसके कमरे में आकर गोपाल का लम्बी देर तक बातें करना माधवी को नहीं भाया। उसके मुँह से बू आ रही थी कि वह पीकर आया है। इधर वह उसे विदा करने की कोशिश में थी और उधर वह हिलने का नाम नहीं लेता था। बातें करते-करते गोपाल में अचानक एक हैवानी जोश पैदा हुआ और उसने झपटकर माधवी को अपनी बाँहों में कसने का प्रयत्न किया। माधवी को इस बात की आशा नहीं थी। अपने हाथों से पूरी तरह उसे झटकते हुए उसने उसे धक्का दिया और किवाड़ खोलकर कमरे से बाहर भागी और सीधे मुत्तुकुमरन् के कमरे में जाकर किवाड़ खटखटाया। मुत्तुकुमरन् ने किवाड़ खोला तो उसने माधवी को बड़ी परेशानी की हालत में देखा। उसने हैरानी से पूछा, "बात क्या है? इस तरह क्यों काँप रही हो?"

"अन्दर आकर बताती हूँ।" कहकर वह उसके साथ अन्दर आ गयी।

किवाड़ पर चिटकनी लगाकर मुत्तुकुमरन् अन्दर आया और उससे बैठने को कहा। माधवी ने पीने को पानी माँगा। वह उठकर सुराही से पानी ले आया। माधवी ने पानी पीकर तनिक आश्वस्त होने के बाद, सारी बातें सुनायीं।

सब कुछ सुनने के बाद मुत्तुकुमरन् ने ठंडी आहें भरीं। थोड़ी देर तक उसकी समझ में नहीं आया कि उसकी बातों का क्या जवाब दे? वह एकाएक फूट-फूटकर रोने लगी। यह देखकर उसका कलेजा मुँह को आ गया। उसके पास जाकर, उसके रेशम जैसे काले बाल सहलाते हुए उसने उसे अपने बाहु-पाश में भर लिया। उसमें माधवी ने सुरक्षा का अनुभव किया। लम्बे मौन के बाद वह उससे बोला :

"समाज का हर क्षेत्र आज एक लम्बी गली में बदल गया है। उनमें से कुछेक गलियों पर चलनेवालों के लिए रोशनी ज़्यादा और सुरक्षा कम हो गयी है। समाज की अँधेरी गलियों के मुक़ाबले रोशन गलियों में अधिक चोरी-डाके पड़ते हैं। सच-मुच, प्रकाश तले ही अँधेरे का वास है। कला-जगत् नाम की गली जो रात-दिन रोशनी से जगमगाती है, कीर्ति की रोशनी, सुविधाओं की रोशनी आदि वहाँ कई रोशनियाँ हैं। पर वहाँ भी सच्चे हृदयों और ऊँचे विचारों का तनिक भी प्रकाश नहीं। उस गली की अंधी रोशनी में, न जाने कितनों के शारीरिक और मानसिक सौंदर्य को चुपचाप और गुमराह कर बलि के लिए बाध्य किया जा रहा है।"

"कहते हैं कि मद्रास जाने पर मुझ जैसी गधी को गरदनी देकर बाहर निकाल

देंगे।"

"कौन ? गोपाल ?"

"हाँ ! मैंने प्लेन में ईप्पो आने से इनकार कर दिया था न। उसके लिए ही चीख़ रहे थे।"

"कला एक लड़की के पेट और मुख-सुभीते का जितना ख़्याल करती है, उतना उसके तन-मन की पवित्रता का ख़्याल नहीं करती। यह कैसी विडंबना है।"

"....."

वह इसका कोई उत्तर नहीं दे सकी। उसे देखने की भी हिम्मत उसमें नहीं रही। मुँह नीचा कर ज़मीन देखने लगी।

उदयरेखा के साथ अब्दुल्ला और गोपाल कैमरान हाईलैंड्स चले गये। यह तय हुआ था कि उनके वहाँ से लौटने के बाद सब ईप्पो से क्वालालम्पुर चलेंगे।

उस दिन माधवी और मुत्तुकुमरन् एक-दूसरे सह-अभिनेता को साथ लेकर, एक टैक्सी करके ईप्पो और ईप्पो के आस-पास के चुंगै, चुंगै-चिप्पुट, कंबार आदि दर्शनीय स्थलों का परिदर्शन कर आये। चुंगै चिप्पुट में सहकारिता की महिमा पर आधारित रबर का बगीचा और महात्मा गाँधी के नाम पर संचालित गाँधी पाठ-शाला—दोनों ही उन दर्शनीय स्थलों में अविस्मरणीय थे। सड़क के दोनों ओर पर्वतीय स्थल ऐसा अनुपम दृश्य उपस्थित करते थे, मानो मोम की बत्तियाँ पिघल कर सुन्दर बेलबूटों का चित्रण करती हों। सभी स्थानों से घूम-घामकर वे साढ़े सात बजे के क़रीब लौट गये। लेकिन कैमरान हाईलैंड्स जानेवालों को लौटने में रात के दो बजे से भी अधिक बीत गये।

दूसरे दिन बड़े सवेरे गोपाल, अब्दुल्ला और उदयरेखा—तीनों हवाई जहाज़ से और बाक़ी सारे सदस्य कार से क्वालालम्पुर को चल पड़े। सीन-सेटिंग आदि को एक जगह से दूसरी जगह ले जाने के लिए अब्दुल्ला ने लॉरी की व्यवस्था करवा दी थी। अतः वे नियमित रूप से ठीक समय पर उन जगहों पर पहुँच जाया करती थी।

माधवी के विचार से अब्दुल्ला उदयरेखा को इसीलिए हवाई जहाज़ पर ले जा रहा था ताकि उसके बहकावे में आकर माधवी भी उसके रास्ते आ जायेगी। उसे बेचारे अब्दुल्ला पर तरस आ रहा था। उसने मुत्तुकुमरन् से कहा, "किसी कोने में अबतक पड़ी उदयरेखा के भाग्य में मलेशिया आने पर कैसा भोग लिखा है, देखिये !"

"क्यों, उसके भाग्य पर तुम्हें ईर्ष्या हो रही है क्या ?"

"छिः ! कैसी बातें करते हैं आप ? मैंने इस संयोग की बात कही तो इसका यह मतलब नहीं कि मुझे उस पर ईर्ष्या हो रही है। उसी के आने से तो मैं बच पायी। इसका मुझे उसका आभार मानना चाहिए।"

"नहीं तो !"

"....."

माधवी ने कोई उत्तर नहीं दिया।

मुत्तुकुमरन् ने भी महसूस किया कि उसके प्रति ऐसी कड़ी बातें मुँह में नहीं लाना चाहिए। जब कभी वह उसके साथ इस तरह पेश आता तो वह चुप्पी साध लेती थी। उसे उसपर बड़ा तरस हो आया। निहत्थे और निर्बल विपक्षी पर हथियार चलाकर अपना शौर्य दिखाने-जैसा लगा।

क्वालालम्पुर में उसे और माधवी को अप्रत्याशित रूप से एक सुयोग हाथ लगा। अब्दुल्ला, उदयरेखा और गोपाल के लिए 'मेरीलिन होटल' नाम के शानदार होटल में ठहरने की व्यवस्था की गयी। बाक़ी लोगों के लिए एक दूसरी जगह पर 'स्ट्रेयिट्स होटल' नाम का साधारण-सा होटल चुना गया। व्यवस्था करने के पहले गोपाल ने माधवी से कहा, "तुम्हें कोई आपत्ति न हो तो हमारे साथ 'मेरीलिन होटल' में ठहर सकती हो। लेकिन उस्ताद के लिए वहाँ कोई बंदोबस्त नहीं हो सकता।"

"कोई ज़रूरत नहीं। मैं यहाँ नहीं ठहरूँगी। वहीं ठहरूँगी, जहाँ वे ठहरे हैं।" माधवी ने दो-टूक जवाब दे दिया।

ऊँचे-ऊँचे मकान, और स्थान-स्थान पर लगे चीनी, मलेशियन और अंग्रेज़ी अक्षरों में चमाचम चमकते नियान साइन और उनकी रोशनी से जगमगाते बोर्ड पग-पग पर यह बता रहे थे कि वे बिलकुल एक नये देश में आये हैं। सड़कें साफ़-सुथरी और रौनक भरी थीं। वहाँ क़िस्म-क़िस्म की छोटी-बड़ी नयी-नयी कारों की भरमार-सी थी। मद्रास में उनका नमूना भी शायद ही देखने को मिले। चीनी कौन हैं और कौन मलायी—शुरू-शुरू में उनका फ़र्क़ करना भी बड़ा मुश्किल लगा।

जिस दिन वे वहाँ पहुँचे थे, उसके दूसरे दिन वहाँ के एक तमिळ दैनिक में गोपाल से एक साक्षात्कार छपा था। उसमें एक प्रश्न यह पूछा गया था, "आप यहाँ जो नाटक खेलनेवाले हैं—'प्रेम एक नर्तकी का', उसके बारे में अपने मलायावासी तमिळ भाइयों को बतायेंगे कि उसका बीजांकुर कैसे पड़ा?"

"मलायावासी तमिळ भाइयों को ध्यान में रखकर ही इस नाटक की पूरी योजना मैंने स्वयं बनायी है। इसकी सफलता को मैं अपनी सफलता मानूँगा।" उस सवाल का गोपाल ने यों जवाब दिया था।

उसे पढ़कर माधवी और मुत्तुकुमरन् को बड़ा ग़ुस्सा आया। माधवी ने अपने मन की यों रखी, "औपचारिकता-निर्वाह के लिए ही सही, नाटककार के रूप में उसने आपका नाम तक नहीं लिया। ऐसा उत्तर देते हुए वह कितना मदान्ध है?"

"तुम्हारा कहना ग़लत है, माधवी! उसमें मद-वद कुछ नहीं। वह स्वभाव से ही बड़ा कायर है। बस, ऊपरी तौर पर बड़ा धीर-वीर होने का नाटक करता है। मेरे

ख़्याल से यह भेंट दूसरे ढंग से हुई होगी। पत्रकारों को अब्दुल्ला ने ही मेरीलिन बुलाया होगा। भेंट में वे भी साथ रहे हैं। इसका सबूत चाहिये तो यह चित्र देखो! एक ओर गोपाल, बीच में उदयरेखा और दूसरी ओर अब्दुल्ला खड़े हैं। अब्दुल्ला के डर से उसने मेरा या तुम्हारा नाम नहीं लिया होगा। अगर लिया भी होगा तो अब्दुल्ला ने मना कर दिया होगा।"

"हो सकता है कि आपका कथन ठीक हो। पर यह सरासर अन्याय है। नाटक लिखने और इसे निर्देशित करने का पूरा भार तो केवल आपका रहा है। आपको भूलना बड़ा पाप है। वह उन्हें यों ही नहीं छोड़ेगा।"

"दुनिया में पाप-पुण्य देखनेवाले आज कौन हैं?" विरक्त स्वर में मुत्तुकुमरन् ने कहा।

वे जिस स्ट्रेयिट्स होटल में ठहरे थे, वहाँ चीनी और कांटिनेंटल भोजन की ही व्यवस्था थी। इसलिए सुबह के जलपान और दोपहर के भोजन के लिए अंबांग स्ट्रीट के एक हिन्दुस्तानी होटलवाले के यहाँ प्रबन्ध किया गया था। कॉफ़ी, कोल्ड ड्रिंक्स और आइस-क्रीम आदि का इंतज़ाम उन्होंने अपने ही होटल में करवा लिया था।

जिस दिन वे यहाँ ठहरने आये थे, उस दिन रात को वे कहीं बाहर नहीं गये। दूसरे दिन सवेरे वे महामारियम्पन के मंदिर और दसगिरि हो आये। दसगिरि में, संयोग से रुद्रपति रेड्डियार नाम के एक व्यापारी मिले, जो कई साल पहले मदुरै में डबल रोटी का व्यापार करते थे। दोनों ने एक-दूसरे को देखते ही पहचान लिया। उन्होंने कहा कि यहाँ पेट्टालिंग जया में मैंने एक डबल रोटी की दूकान खोल रखी है और हर दूसरे वर्ष छः महीनों के लिए स्वदेश हो आता हूँ।

नये देश में अप्रत्याशित रूप से एक परिचित व्यक्ति से मिलकर मुत्तुकुमरन् बहुत खुश हुआ। उसने माधवी का उनसे परिचय कराया और मद्रास में आकर गोपाल की नाटक-मंडली में सम्मिलित होने की बात भी बतायी।

"सिनेमा के लिए भी कुछ लिखना शुरू कर दो! फ़िल्मों से ही मुट्ठी गरम होती है।" सब की तरह रेड्डियार के मुँह से भी वही बात सुनकर मुत्तुकुमरन् को हँसी आयी। उसने कहा, "सिनेमा भी दूर कहाँ है? उसे भी मुट्ठी में करके छोड़ेंगे।"

"अच्छा! कल दोपहर को तुम दोनों हमारे घर में भोजन करने आ जाओ। पेट्टालिंग जया—यह पता याद रखो। हाँ, तुमने यह नहीं बताया कि तुम दोनों कहाँ ठहरे हुए हो?"

"स्ट्रेयिट्स होटल में। नाश्ता और भोजन अंबांग स्ट्रीट से आ जाते हैं।"

"हमारे ही घर में आकर ठहर जाओ न!" उहोंने आग्रह किया।

"यह संभव नहीं होगा। क्योंकि हम नाटक-मंडली के दूसरे लोगों के साथ

ठहरे हुए हैं। उन्हें छोड़कर आना ठीक नहीं। वे भी हमें नहीं छोड़ेंगे।"

"अच्छा ! स्ट्रेयिट्स होटल को मैं कल दोपहर को गाड़ी भेज दूँगा।" कहकर रुद्रप्प रेड्डियार विदा हुए।

उनके जाने के बाद उनके बारे में मुत्तुकुमरन् ने माधवी को बताया कि उससे उनका परिचय कब हुआ और कैसे हुआ तथा उनमें क्या-क्या खूबियाँ हैं।

दसगिरि से जब वे होटल को लौट आये, तब गोपाल भी अप्रत्याशित रूप से वहाँ आया था।

"कहो, उस्ताद ! इस होटल की सुख-सुविधाएँ कैसी हैं ? किसी चीज़ की ज़रूरत हो तो बताओ ! मैं तो किसी दूसरी जगह ठहर गया हूँ, इसलिए अपनी तकलीफ़ों को छिपाये न रखो।" गोपाल यों बोल रहा था, मानो किसी ट्रेड यूनियन के लीडर से कारख़ाने का कोई मालिक शिकायतें पूछता हो।

सच्चे प्रेम से कोसों दूर और औपचारिक ढंग से पूछी जानेवाली इन बातों को मुत्तुकुमरन् ने ज़रा भी महत्त्व नहीं दिया और चुप्पी साधे रहा।

उसके जाने के बाद, माधवी ने मुत्तुकुमरन् से कहा, "देख लिया न, पूछ-ताछ करने का तौर-तरीक़ा ! बातें दिल से नहीं, होंठों से फूट रही थीं।"

"छोड़ो, उसकी बातों को ! उसे शायद यह डर लग गया होगा कि हम उसके बारे में कैसी बातें कर रहे हैं। उसी डर से वह एक बार हमें देख जाने के लिए आया होगा।"

"उदयरेखा तो इस तरफ़ एकदम आयी ही नहीं। अब्दुल्ला के साथ ही चिपककर रह गयी।"

"कैसे आती ? अब्दुल्ला छोड़े, तब न ?"

सुनकर माधवी हँस पड़ी। मुत्तुकुमरन् ने अपनी बात जारी रखी—"अब्दुल्ला उसे छोड़ेगा नहीं। और वह भी कौन-सा मुँह लेकर हमें देखने आयेगी ? शरम नहीं लगती होगी उसे ?"

"इसमें शरम की क्या बात है ? गोपाल के पास आने से पहले, वह हैदराबाद में जैसी थी, वैसी ही अब भी है।"

"नाहक़ दूसरों को दोष न दो। बेचारी पर दोष मढ़ना ठीक नहीं। मेरे ख़्याल से पहले-पहल कोई लफंगा-लुच्चा ही उसे इस लाइन में खींचकर लाया होगा। पेट की भूख भला-बुरा नहीं पहचानती। सच पूछो माधवी तो मुझे ऐसे लोगों से हम-दर्दी ही होती है।"

उसने उदयरेखा के बारे में बोलना वहीं से बन्द कर दिया। और थोड़ी देर तक उसकी बातें करती रहती तो उसे डर था कि अंततः वह बात उसी पर केन्द्रित हो जाएगी।

मुत्तुकुमरन् ने अपनी बातों के दौरान इस बात पर ज़ोर दिया था कि मेरे ख़्याल से पहले-पहल कोई लफंगा-लुच्चा ही उसे इस लाइन में खींच लाया होगा ! माधवी ने कभी मुत्तुकुमरन् से बातें करते हुए कहा था कि मुझे इस लाइन में लानेवाले गोपाल ही हैं। इस पर तुरन्त मुत्तुकुमरन् ने उसपर जहर उगलते हुए कुरेदा था कि लाइन माने क्या होता है ?—इस बात के साथ ही, उसे पिछली बात की याद हो आयी। ठीक उसी तरह आज मुत्तुकुमरन् ने 'लाइन' शब्द का इस्तेमाल किया था। उसने यों ही उस शब्द का इस्तेमाल किया था या किसी गूढ़ार्थ से उसका इस्तेमाल किया था—यह समझ न पाने से वह दिल ही दिल में कुढ़ गयी। इस हालत में जब उदयरेखा के चरित्र को लेकर बात बढ़ी तो उसे डर लगने लगा था कि सौमनस्य और शांति से युक्त वातावरण में कहीं खलल न पड़े।

क्वालालम्पुर में नाटक के प्रथम प्रदर्शन में अच्छी-खासी वसूली हुई। अब्दुल्ला बता रहे थे कि हर दिन के नाटक के लिए 'हैवी बुकिंग' है। दूसरे दिन दोपहर को रुद्रपति रेड्डियार की कार स्ट्रेथिट्स होटल में आयी और मुत्तुकुमरन् और माधवी को दावत के लिए ले गयी।

रुद्रपति रेड्डियार जिस पेट्टालिंग जया इलाके में रहते थे, वहाँ एक नयी कॉलोनी बसी हुई थी, जिसमें एक से बढ़कर एक नये मकान बने हुए थे। रुद्रपति रेड्डियार के ड्राइवर ने कहा कि क्वालालम्पुर भर में यह बिल्कुल नया बेजोड़ 'एक्सटेन्शन' है। मलाया आकर रुद्रपति रेड्डियार बड़े धनी-मानी व्यक्ति हो गए थे। उनके यहाँ उच्च-स्तरीय पांडिय-शैली का शाकाहारी स्वादिष्ट भोजन पाकर वे बहुत प्रसन्न हुए।

भोजन के बाद रेड्डियार की तरफ़ से भेंट के तौर पर माधवी को सोने की एक 'चेन' और मुत्तुकुमरन् को एक बढ़िया 'सीको' की घड़ी उपहार में मिली। पान-सुपारी की तश्तरी में रखकर सोने की वह 'चेन' रेड्डियार ने माधवी के सामने बढ़ायी तो वह सोच में पड़ गयी कि उसे ले या न ले ? मुत्तुकुमरन् क्या समझेगा ?

मुत्तुकुमरन् के मन की जानने के लिए, उसने आँखों से जिज्ञासा व्यक्त की। मुत्तुकुमरन् ने उसके मन के भय पढ़कर हँसते हुए कहा—"ले लो ! रेड्डियारजी तो हमारे भैया हैं। इनमें और हममें फ़र्क़ नहीं मानना चाहिए !"

माधवी ने चेन रख लिया। रेड्डियार ने अपने हाथों से मुत्तुकुमरन् के हाथ में घड़ी बाँधी।

"भगवान की कृपा से समुद्र पार इस देश में आकर हम काफ़ी खुशहाल हैं। खुशहाली में हमें अपनों को नहीं भूलना चाहिए !"—रेड्डियार ने कहा।

"माधवी ! यह न समझना कि रेड्डियार अभी ऐसे हैं। मदुरै में रहते हुए भी

हम दोनों बड़े दोस्त थे। कविराज के कुटुंब में पैदा होने से मेरे प्रति इनका अपार प्रेम है। उन दिनों ये हमारी नाटक मंडली के नायुडु के दाहिने हाथ रहे थे।

"तो ये गोपाल जी को भी अच्छी तरह जानते होंगे!"

"हाँ, जानता हूँ। लेकिन वे अब आसमान पर चढ़े हुए हैं। इस देश के बहुत बड़े जौहरी अब्दुल्ला के 'गेस्ट' बने हुए हैं। पता नहीं, हम जैसों को वे कितना मानेंगे और सराहेंगे। फिर वे मेरीलिन होटल में ठहरे हुए हैं। मुझे मेरीलिन होटल जाते हुए ही डर लगता है। वहाँ 'दरबान से लेकर वेटर तक' अंग्रेज़ी में बातें करते हैं। अंग्रेज़ी से मेरा छत्तीस का वास्ता है। न तो बोलना आता है और न समझना!"

"यानी कि आप मेरे जैसे हैं!" मुत्तुकुमरन् ने कहा।

"यह कोई बड़ी बात नहीं; आदत पड़ने पर आप ही आप यह समझ आ जाती है।"

"बात वह नहीं। एक दफ़े की बात है। मुझे अपने व्यापार के सिलसिले में हांगकांग जाना था। प्लेन का टिकट ख़रीदने के लिए मैं मेरीलिन गया था। बी० ए० ओ० सी० कंपनी का दफ़्तर मेरीलिन के 'ग्राउंड फ़्लोर' पर है। वहाँ रिसेप्शन में एक चीनी युवती थी। वह अंग्रेज़ी चुहियाने लगी तो मेरी समझ में कुछ नहीं आया। मैं थोड़ी बहुत मलय और चीनी भाषा जानता हूँ। धैर्य से चीनी में बोला तो वह लड़की भी हँसती हुए चीनी में बोली। मैं टिकट लेकर आ गया। मैं मानता हूँ कि अंग्रेज़ी जानना ज़रूरी है। पर न जाननेवालों से जब कोई ज़बरदस्ती उस ज़ुबान में बोलकर संकट में डालता है तो बड़ा दुख होता है!"

"माधवी को वह संकट नहीं है, रेड्डियार जी! उसे अंग्रेज़ी, मलयाळम, तमिल आदि अच्छी तरह से बोलना भी आता है और लिखना भी आता है।"

"हाँ, केरल में तो सभी अंग्रेजी पढ़े-लिखे होंगे!"

रेड्डियार से विदा लेते हुए दोपहर के साढ़े तीन बज गए। शाम के नाश्ता-कॉफ़ी के बाद ही वे पेट्टालिंग जया से रवाना हुए। चलते समय रेड्डियार ने बड़ी आत्मीयता से कहा था "देखो, मुत्तुकुमरन्! जबतक यहाँ रहते हो, मुझसे जो भी मदद चाहो निस्संकोच ले सकते हो। बाहर आने-जाने के लिए कार की ज़रूरत पड़े तो फ़ोन करना!"

उनके इस प्रेम-भाव से मुत्तुकुमरन् विस्मय और आनन्द से विभोर हो गया। जब वे स्ट्रायिट्स होटल में वापस पहुँचे तो दिल को हिला देनेवाली एक ख़बर मिली।

उस दिन दोपहर के वक़्त भी गोपाल ने बेहद पी रखी थी। वह बाथ रूम जाते हुए फिसल पड़ा था। घुटने में हल्का-सा फ्रेक्चर हो गया था। इसलिए उसे अस्पताल में भरती किया गया था। मंडली के दूसरे सभी कलाकार उसे देखने के ख़्याल गए हुए थे।

सारा समाचार स्ट्रेयिट्स होटल के स्वागत कक्ष में ही मिल गया था। रिसेप्शनिस्ट से सारी बातों का पता लगाकर, गोपाल किस प्राइवेट नर्सिंग होम में में भरती है, वहाँ का पता-ठिकाना लेकर दोनों रेड्डियार की ही कार में उस अस्पताल को चल पड़े।

नर्सिंग होम माऊंटबेटन रोड पर था। जब वे वहाँ पहुँचे, तब मंडली के अन्य कलाकार और कर्मचारी झुंड के झुंड लौट रहे थे। उस दिन शाम को नाटक हो कि न हो वे सब इसी अधेड़बुन में पड़े थे। वे आपस में यही कहते हुए सुनायी दे रहे थे कि गोपाल के पैर में 'फ्रेक्चर' हो जाने से उस दिन का ही नहीं, दूसरे दिनों के नाटक भी रद्द कर दिये जायेंगे। साथ ही टिकट खिड़की पर ख़ासी वसूली होने और बाद के टिकटों की बिक्री तथा थियेटर के किराये पर लेने से अब अब्दुल्ला फ़िक्र में पड़े थे कि नाटकों का मंचन रद्द किये जाने पर उसे बहुत घाटा उठाना पड़ेगा!

गोपाल के पैर पर मरहम और पट्टी लगाकर उसे बिस्तर पर लिटा दिया गया था। नींद की गोली देने से वह गहरी नींद में था।

"छोटा-सा फ्रेक्चर है! एक हफ़्ते में ठीक हो जायेगा। फ़िक्र की कोई बात नहीं है!" डॉक्टर अब्दुल्ला को बता रहे थे। अब्दुल्ला और उदयरेखा चिंतित खड़े थे।

"इसने सारा गुड़-गोबर कर दिया! ईप्पो में ही मुझे भारी घाटा उठाना पड़ा है। मैंने सोचा कि क्वालालम्पुर में उसे 'मेक अप' कर लेंगे। सातों दिन की हैवी बुकिंग है यहाँ!" अब्दुल्ला ने रुआँसा होकर माधवी से कहा।

चोट खाए हुए पर बिना किसी हमदर्दी के, उसका इस तरह बकना माधवी और मुत्तुकुमरन् को अच्छा ही नहीं लगा। मुत्तुकुमरन् को तो ग़ुस्सा ही आ गया।

"अपने पैसों का रोना क्यों रोते हो? नाटक मुख्य है। उसकी फ़िक्र तुम न करो। ठीक समय पर मंचन शुरू होगा। छः बजे थियेटर में आ जाना। अब जाओ!" मुत्तुकुमरन् ने धीर-गंभीर शब्दों में कहा।

"वह कैसे होगा भला?" अब्दुल्ला ने शंका प्रकट की।

"अपना रोना-धोना बन्द करो। नाटक होगा, ज़रूर होगा। तुम सीधे थियेटर आ जाना! पर इस बात का ख़्याल रखना कि आज शाम के किसी भी अख़बार में यह छपने न पावे कि गोपाल का पैर ज़ख्मी हो गया है!" मुत्तुकुमरन् ने ऊँचे स्वर में कहा तो अब्दुल्ला की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गयी।

माधवी समझ गयी कि मुत्तुकुमरन् की क्या योजना है? उसे इस बात की खुशी हो रही थी कि अब मुत्तुकुमरन् कथानायक की भूमिका करने वाला है। मुत्तुकुमरन् इस बात से खुश हो रहा था कि माधवी के साथ भूमिका करने का उसे सुयोग मिल रहा है।

माधवी उसकी समयोचित बुद्धि और धैर्य से स्थिति पर नियंत्रण की सामर्थ्य

की क़ायल हो गयी। ऐसी ही धीरता की वजह से वह उसके प्रति आकर्षित हुई थी और धीरे-धीरे अपना हृदय हार बैठी थी।

उन्नीस

उस दिन नाटक के पहले मुत्तुकुमरन् ने जल्दी-जल्दी संवाद और दृश्यों के क्रम को उलट-पलटकर देखा। संवाद उसके थे; निर्देशन उसका था। दर्शकों की गैलरी में बैठकर उसने कुछेक वार सबकुछ देखा भी था। अतः सारे दृश्य उसे याद थे। इसके अलावा स्वयं कवि भी था। परिस्थितियों के अनुसार, नये संवाद गढ़कर वह मंच पर बोल भी सकता था। एक ओर उसे अपने ऊपर विश्वास था और दूसरी ओर माधवी पर! अच्छी अभिनेत्री होने से उसे विश्वास था कि वह अपनी ओर से कोई कोर-क़सर उठा नहीं रखेगी।

अब्दुल्ला को सबसे बड़ा डर था कि कहीं दर्शकों को इस बात का पता न लग जाए कि गोपाल भूमिका नहीं कर रहा है, तो क्या हो? वे सिर्फ़ गुल-गपाड़ा ही नहीं मचायेंगे; कुर्सी उठाकर मारेंगे! यह डर एक ओर तो दूसरी ओर यह विश्वास भी था कि मुत्तुकुमरन् गोपाल से भी कहीं अधिक ख़ूबसूरत है और दर्शकों को बाँधे रखने की क्षमता उसके गंभीर व्यक्तित्व में है।

मुत्तुकुमरन् के आत्म-विश्वास ने अविश्वास को स्थान ही नहीं दिया। वह निश्चित होकर नायक की भूमिका करने को तैयार हो गया। दर्शकों को इस बात का भान तक नहीं हुआ था कि गोपाल पीकर बाथरूम में गिर पड़ा है और उसके पैर की हड्डी खिसक गयी है। अतः वे बड़ी शांति से परदा उठने की राह देख रहे थे। अब्दुल्ला इस बात को लेकर बहुत चिंतित थे कि मुत्तुकुमरन् की गोपाल जैसी 'स्टार वैल्यू' नहीं है। गोपाल ने क्वालालम्पुर में पहले दिन के नाटक में भाग लेकर अपनी और अपनी भूमिका की धाक जमा रखी थी। इसलिए हो सकता है कि दर्शक गोपाल और मुत्तुकुमरन् के बीच फ़र्क़ ढूँढ़ निकालें। अब्दुल्ला का यह शक़ नाटक प्रारंभ होने ही तक था!

नाटक शुरू होने के बाद दर्शकों का ध्यान इस बात की ओर बँटा ही नहीं। परदा उठते ही मुत्तुकुमरन् मंच पर इस तरह अवतीर्ण हुआ मानो कामदेव ही राजा का वेश धारणकर सभा में विराज रहे हों। पिछले दिन इस दृश्य में गोपाल के प्रवेश पर जैसी तालियाँ बजीं, उससे कई गुना ज़्यादा मुत्तुकुमरन् के प्रवेश पर गड़गड़ाती रहीं। माधवी का सौंदर्य पिछली शाम के मुक़ाबले और भी निखर उठा

था। चमकदार जिल्द वाली अरबी घोड़ी जैसी स्फूर्ति के साथ वह मंच पर उतरी।

"मेरे हृदय मंच पर कंत नाचते तुम।
तुम्हारे संकेतों पर प्रिय, नाचती मैं।"

इस गीत पर उसने अप्रतिम नृत्य उपस्थित कर खूब वाह-वाही लूटी। मुत्तुकुमरन् मेरे साथ भूमिका में है। इस विचार से माधवी और माधवी मेरे साथ भूमिका कर रही है—इस विचार से मुत्तुकुमरन्—दोनों स्वस्थ प्रतियोगिता से अपनी भूमिका निभाने लगे तो हर दृश्य में ऐसी करतल ध्वनि हुई कि पूरी दर्शक दीर्घा ही थरथरा उठी। उस दिन का नाटक अत्यन्त सफल रहा। सहयोगी कलाकारों और स्वयं अब्दुल्ला ने बात-बात पर मुत्तुकुमरन् की तारीफ़ की।

"इसमें तारीफ़ करने की क्या बात है? मैंने अपना कर्तव्य निबाहा, बस! ढेर-सारा पैसा ख़र्च करके आपने हमें बुलाया और डर रहे थे कि कहीं घाटा उठाना न पड़ जाये। आपका भय दूर करने और अपने मित्र का मान रखने के लिए मुझे जो कुछ करना चाहिए था, मैंने किया!" मुत्तुकुमरन् बड़ी ही सहजता से उसे उत्तर दिया।

दूसरे दिन सवेरे वहाँ के दैनिक समाचार-पत्रों में पैर फिसलने से गोपाल के गिर जाने और हड्डी टूट जाने की ख़बर और पिछली शाम के नाटक में गोपाल की जगह नाटककार मुत्तुकुमरन् की सफल भूमिका की खबरें साथ-साथ छपी थीं।

सवेरे-सवेरे मुत्तुकुमरन् और माधवी गोपाल को देखने अस्पताल गए।

"ठीक समय पर हाथ बँटाकर तुमने मेरी मान-रक्षा की है। इसके लिए मैं तुम्हारा बहुत आभार मानता हूँ!" कहकर गोपाल ने हाथ जोड़े।

"फिर तो यह भी कहो कि तुम मेरे ही भरोसे बोतल पर बोतल चढ़ाकर नशे में डूबे रहे कि समय पर तुम्हारी जाती हुई इज्ज़त को मैं किसी तरह बचा दूंगा। वाह रे वाह! भाग्य से अखबारवालों ने तुम्हारी धज्जियाँ नहीं उड़ायीं! इतना ही लिखा कि तुम स्नानागर में फिसल कर गिर गये। बात की तह में जाकर 'क्यों गिरे, कैसे गिरे' का विवरण भी दिया होता तो जग-हँसाई ही होती!" मुत्तुकुमरन् ने गोपाल को आड़े हाथों लिया।

"उस्ताद! मानता हूँ कि मैंने बड़ी ग़लती की! मेरी अक़्ल मारी गयी थी। अब सोचने से क्या फ़ायदा? पीने के पहले ही सोचना चाहिए था! मेरी अक़्ल तब ठिकाने नहीं थी।"

"तुम्हारी अक़्ल कब ठिकाने रही है? बोलो! खैर, छोड़ो उन बातों को! अब तबीयत कैसी है? कल रात को अच्छी नींद आयी या नहीं?"

"खूब अच्छी तरह सोया था। सवेरे उठने पर नाटक की याद आयी। फिर सोच लिया कि 'कैन्सल' हुआ होगा। अच्छा हुआ कि तुमने बचा दिया। अख़बार पढ़ने पर सबकुछ मालूम हुआ। अब्दुल्ला ने भी आकर बताया कि तुम्हारा अभिनय

मुझसे भी कहीं अधिक अच्छा रहा।"

"छि: ! छि: ! वैसा कुछ नहीं। बग़ैर ग़लती के किसी तरह निभा दिया, बस !"

"यह तुम्हारी उदारता है। तुम बात छिपाते हो। अब्दुल्ला कह रहे थे कि तालियाँ ऐसी बजती रहीं कि रुकने का नाम नहीं लेती थीं। अख़बारवालों ने भी तुम्हारी बड़ी तारीफ़ की है।"

"कोई हज़ार कहे गोपाल ! तुम तो अभिनय के लिए ही पैदा हुए हो ! तुम जैसा कोई काम करे तो कैसे करे ?"

"अब ज़्यादा न बोलिए। मरीज़ को आराम करना चाहिए !" नर्स ने आकर टोका तो वे उससे विदा लेकर चल पड़े।

मुत्तुकुमरन् और माधवी के 'स्ट्रेथिट्स होटल' में आने के तुरंत बाद रेड्डियार के पास से फ़ोन आया—

"कल मैं भी नाटक देखने आया था। तुम्हें नायक के वेश में देखकर मुझे शक़ हुआ। जल्दी विश्वास नहीं आया। पर आज अख़बार देखने पर मेरा सन्देह दूर हो गया। तुम्हारा अभिनय बहुत बढ़िया था। यों ही नहीं कहता। तुमने सचमुच कमाल कर दिया ! हाँ, अब गोपाल की तबीयत कैसी है ? क्या मैं आकर देख सकता हूँ ?"

"आज नहीं। कह रहे हैं कि काफ़ी 'रेस्ट' चाहिए। कल मिल आइयेगा। माउंट बेटन रोड के एक नर्सिंग हॉल में हैं।" मुत्तुकुमरन् ने रेड्डियार को उत्तर दिया।

उसके बाद क्वालालंपुर में गोपाल की नाटक-मंडली सात दिन ठहरी रही। सातों दिन गोपाल की जगह मुत्तुकुमरन् ने ही भूमिका निभायी। अच्छा-ख़ासा नाम भी कमाया। तारीफ़ के पुल बँधे और पुरस्कारों के अंबार लगे। पत्र-पत्रिकाओं में मुत्तुकुमरन् की बड़ी चर्चा रही। मुत्तुकुमरन्-माधवी की बेजोड़-जोड़ी कहकर सभी अनुशंसा और संस्तुति करते रहे।

"संवाद भूल जाने पर आप ऐसे संवाद बोलते हैं, जो लिखे हुए संवादों से भी बढ़िया बन जाते हैं !" माधवी ने कहा।

"इसमें आश्चर्य की क्या बात है, माधवी ? सबकी तरह तुम्हारा भी आश्चर्य प्रकट करना अच्छा नहीं लगता। यह तो बेमतलब की प्रशंसा है। मैं जन्म से इसी में लगा हूँ। बायस्कोप कंपनी के ज़माने से आज तक। मैं यह काम नहीं कर पाता— तब तुम्हारा आश्चर्य करना उपयुक्त होता।"

"आपके लिए यह साधारण-सी बात हो सकती है। लेकिन मेरे लिए तो आपकी हर साधना बड़ी लगती है और मुझे बड़े आश्चर्य में डाल देती है। मैं अपनी यह आदत अब बदल नहीं सकती !" माधवी ने उत्तर दिया।

"चुप भी करो। तुम बड़ी पगली हो !"

"पगली ही सही। पर यक़ीन मानिए, सारा-का-सारा पागलपन आप पर निछावर है। आप जब सिंगापुर के 'एयर पोर्ट' पर उतरे, तब अकेले और अलग-

थलग पड़े रहे। किसी की आँखों में नहीं पड़े। यह देखकर मेरा दिल कुढ़ता रहा था। उसका फल अभी मिला है। अब्दुल्ला और गोपाल ने पिनांग में आपके दिल को कैसी-कैसी चोटें पहुँचायी थीं! आज आप ही को उनका मान रखना पड़ रहा है, इज़्ज़त बचानी पड़ रही है।"

"बस, बस! बंद करो! तुम्हारी ये बातें मुझे मिथ्याभिमान से भर देंगी।"

"अच्छा! कल अब्दुल्ला आपसे अकेले में मिलना चाहते थे, सो किसलिए?"

"'समय पर आपने हमारी नाक रख ली। पुरानी बातें मन में न रखिए।' कहकर उन्होंने हीरे की एक अंगूठी भी बढ़ायी। मैंने उत्तर दिया, 'साहब! आपके लिए मैंने कुछ नहीं किया। मैंने अपने दोस्त की इज़्ज़त रखने को अपना कर्तव्य समझा। आप जो कुछ देना चाहते हैं, गोपाल को दीजिए! मेरा आपसे कोई वास्ता नहीं!' इतना कहकर मैंने अंगूठी लेने से इनकार कर दिया।"

"बहुत अच्छा किया! सबने आपका दिल कितना दुखाया? अंग्रेज़ी नहीं जानने पर आपकी खिल्ली भी उड़ायी!"

"कोई कुछ जाने या न जाने, मनुष्य की श्रेष्ठ भाषा तभी बोली जाती है, जब दूसरों के साथ उदारता का व्यवहार किया जाता है। अगर वह भाषा मालूम हो तो काफ़ी है। उस भाषा से अपरिचित रहनेवाला चाहे जितनी ही भाषाएँ क्यों न जाने, कोई फ़ायदा नहीं है। दुःख के समय जहाँ आँसू की दो बूँदें टपकती हैं और सुख के समय जहाँ एक मुस्कान खिल उठती है, वही समस्त भाषाएँ जाननेवाला हृदय है। उससे बढ़कर श्रेष्ठ भाषा कोई नहीं!"

डॉक्टर का आदेश था कि गोपाल को एक हफ़्ता और आराम चाहिए। इससे मलाका में होनेवाले नाटकों की भूमिका भी मुत्तुकुमरन् के ज़िम्मे आयी। मुत्तुकुमरन् और नाटक-मंडली वाले कार ही में मलाका के लिए रवाना हुए। गोपाल की देख-रेख का भार रुद्रपति रेड्डियार के सुपुर्द किया गया।

मलाका में रुकते हुए एक दिन दोपहर को वे पोर्ट डिक्सन समद्र तट की सैर को भी निकल गये। मलाका में भी नाटकों के प्रदर्शन के लिए अच्छी-खासी वसूली हुई।

मुत्तुकुमरन् का अभिनय दिन-प्रतिदिन निखरता गया। मंडली के नामार्जन का वह एकमात्र कारण था। मलाका में नाटक पूरे होने पर, लौटते हुए रास्ते में चिरंपान में एक मित्र के यहाँ उन्हें भोज के लिए आमंत्रित किया गया। भोजन के उपरांत मेजबान के हाथों अब्दुल्ला ने मुत्तुकुमरन् को वही अंगूठी दिलाने की कोशिश भी की। मुत्तुकुमरन् ने इसका उद्देश्य भाँप लिया। अब्दुल्ला ने देखा कि मुत्तुकुमरन् उसके हाथों यह उपहार इनकार कर रहा है तो घुमा-फिराकर चिरंपान के दोस्त के हाथों, उसके हाथ किसी तरह पहुँचा देने का उपक्रम किया। इस रहस्य को जानते हुए भी मुत्तुकुमरन् ने चार जनों के सामने उनका अपमान नहीं करना

चाहा और चुपचाप अंगूठी ले ली । पर चिरंपान से क्वालालम्पुर लौटते ही उसने पहला काम यह किया कि उनकी अंगूठी उन्हीं को लौटा दी ।

"यह लीजिए, अब्दुल्ला साहब ! आप कुछ देकर मेरा प्रेम या मेरा स्नेह खरीद नहीं सकते । मैंने आपसे किसी चीज़ की आशा कर नाटक में अभिनय नहीं किया । मुझे इस बात की भी फ़िक्र नहीं कि नाटक के इस ठेके से आपको मुनाफ़ा होता है या घाटा उठाना पड़ रहा है ! मैं अपने मित्र के साथ मलाया आया । उसे तकलीफ़ में पड़ा देखकर, उसकी मदद करना मेरा कर्तव्य था । और किसी गरज से मैंने यह काम नहीं किया । यदि मेरे कर्तव्य के बदले आप कोई उपकार करना चाहते हैं तो मेरा नहीं, गोपाल का कीजिए । चिरंपान में चार लोगों के सामने मैंने आपका अपमान करना उचित नहीं समझा । इसीलिए इसे लेने का नाटक रचा । मुझे अंग्रेज़ी नहीं आती; पर उदारता आती है । मैं बड़ा स्वाभिमानी हूँ । लेकिन उसके लिए दूसरों का रत्ती भर भी अपमान नहीं करूँगा । मुझे माफ़ कीजिए । किसी भी स्थिति में मुझे इसे वापस करना ही पड़ेगा ।"

"मुझे बड़े संकट में डाल रहे हैं, मुत्तुकुमरन् जी आप !"

"नहीं-नहीं, यह बात नहीं !"

अब्दुल्ला ने सिर झुकाये अंगूठी वापस ली और चले गये । औरत हो या मर्द, ऐसे लोगों से वास्ता पड़ने पर, जिन्हें वे किसी भी मूल्य पर ख़रीद नहीं पाते, उनका सिर ऐसा ही झुक जाया करता था ।

उस दिन शाम को गोपाल ने मुत्तुकुमरन को बुला भेजा । मुत्तुकुमरन माउंट बेटन रोड जाकर उससे मिला ।

"बैठो", अपने बिस्तर के पास की कुर्सी दिखाकर गोपाल ने कहा ।

मुत्तुकुमरन् बैठा ।

"तुमने अब्दुल्ला की दी हुई अंगूठी वापस कर दी क्या ?"

"हाँ ! उन्होंने एक बार नहीं, दो-दो बार इसे देना चाहा था ! मैंने दोनों ही बार लौटा दी ।"

"ऐसा क्यों किया ?"

"इसलिए कि उनका और मेरा कोई संबंध नहीं है । मैं तुम्हारे साथ यहाँ आया हूँ । तुमसे नहीं हो पा रहा तो मैं तुम्हारे बदले भूमिका कर रहा हूँ । वे कौन होते हैं मेरी तारीफ़ करनेवाले या मुझे पुरस्कार देने वाले ?"

"ऐसा तुम्हें नहीं कहना चाहिए ! उस दिन अण्णामलै मन्ड्रम में जब नाटक का प्रथम मंचन हुआ था, उन्होंने तुम्हें माला पहनायी । उस दिन तुमने यह कहकर उनका जी दुखाया कि किसी के हाथों माला ग्रहण करते हुए सिर झुकाना पड़ता है । इसलिए मैं इन मालाओं से नफ़रत करता हूँ । आज हीरे की अंगूठी लौटाकर उनका दिल दुखा रहे हो । इस तरह के व्यवहार से तुम्हारी कौन-सी बड़ाई हो जाती

है ? नाहक़ एक बड़े आदमी का दिल दुखाने से तुम्हारे विचार से तुम्हारा कौन-सा फ़ायदा होनेवाला है ?"

"ओ हो ! यह बात है ! कोई बड़ा मनुष्य हमारा अपमान करे तो चुप रहना चाहिए ! किसी बड़े आदमी का विरोध मोल नहीं लेना चाहिए ! तुम यही कहना चाहते हो न ?"

"मान लो कि अब्दुल्ला ने तुम्हारा अपमान किया तो भी···"

"छि: ! छि: ! दुबारा ऐसी बात मुँह में न लाओ। मेरा अपमान वह क्या, उसके दादे-परदादे भी नहीं कर सकते। ऐसा समझकर, मानो मेरा बड़ा अपमान कर रहे हैं, कुछ दिलासा दे दिया, बस !"

"जो भी हो, इतना रोष तुम्हें नहीं सोहता उस्ताद !"

"वही एक चीज़ है, जो कलाकार के पास बची-खुची रहती है। उसे भी छोड़ दूँ तो फिर कैसे···?"

"अब्दुल्ला ने मेरे पास आकर कहा कि मैं किसी तरह तुम्हें उनकी वह अंगूठी लेने को बाध्य करूँ।"

"वह तो मैंने उन्हीं से कह दिया कि आप जो भी देना चाहें, गोपाल को दे दीजिए। आपका और मेरा कोई सीधा संबंध नहीं। उन्होंने तुमसे नहीं कहा क्या ?"

"कहा था। कहकर वह अंगूठी मेरे हाथ दे गये हैं।"

"अच्छा !"

"तुम्हारे विचार से अब्दुल्ला की अंगूठी लेना ठीक नहीं। पर रुद्रपति रेड्डियार की घड़ी लेना ठीक है। है न सही बात ?"

"रुद्रप्प रेड्डियार और अब्दुल्ला कभी एक से न हो पायेंगे। रेड्डियार आज करोड़पति हो गये हैं। पर मेरे साथ बिना किसी भेद-भाव के सलूक करते हैं। पैसे का गर्व उन्हें छू तक नहीं गया है।"

गोपाल इसका कोई जवाब नहीं दे सका। बोला, "तुमसे बात करने से कोई फ़ायदा नहीं, ठीक है···"

मुत्तुकुमरन् ने क्वालालंपुर में और दो नाटक खेले। इतने में गोपाल उठकर चलने-फिरने लगा था। दूसरे दिन का नाटक गोपाल ने भी पहली क़तार में बैठकर देखा। उसके आश्चर्य की कोई सीमा नहीं रही। मुत्तुकुमरन् का अभिनय देखकर उसने दाँतों तले उँगली दबा ली।

नाटक खत्म होने पर गोपाल ने मुत्तुकुमरन् के गले लगकर उसकी बड़ी तारीफ़ की। दूसरे दिन उन्होंने रेडियो और दूरदर्शन पर एक भेंट-वार्ता भी दी। उस भेंट-वार्ता में भाग लेने के लिए मुत्तुकुमरन्, गोपाल और माधवी—तीनों साथ गये थे। तीसरा दिन नगर-भ्रमण और दोस्तों से विदा लेने में बीता। जिस दिन वे लोग वहाँ से रवाना हुए, उस दिन मेरीलिन होटल में गोपाल की नाटक-मंडली को

एक विदाई-दावत दी गयी। उसमें बोलनेवाले सभी ने मुत्तुकुमरन् की बड़ी तारीफ़ की। गोपाल ने कृतज्ञता-ज्ञापन में मुत्तुकुमरन् की भरपूर प्रशंसा की। इस कार्य में वह अघाया नहीं। माधवी ने अपनी मंडली की तरफ़ से एक गीत गाया—'आओ, आओ ! मेरे नूरे चश्म !' प्रथम चरण गाते हुए माधवी की आँखों ने प्रथम पंक्ति में बैठे मुत्तुकुमरन को ही अपनी दृष्टि का बिन्दु बनाया।

हमेशा की तरह यह समस्या उठ खड़ी हुई कि कौन-कौन हवाई जहाज़ पर सिंगापुर जायेंगे ? मुत्तुकुमरन् और माधवी ने पहले की तरह ही इनकार कर दिया।

"तो मैं भी प्लेन पर नहीं जाता। तुम लोगों के साथ कार ही में जाऊँगा !" कहकर गोपाल ने हठ ठाना।

पैर ठीक होने पर भी वह कुछ कमज़ोर-सा बना रहा। उसके लिए दो सौ मील से अधिक की कार-यात्रा कष्टदायक हो सकती थी। अतः मुत्तुकुमरन् ने उस पर ज़ोर देते हुए कहा—

"इस देश और इस देश की प्राकृतिक सुषमा को देखने के विचार से हम दोनों कार में आने की बात सोच रहे हैं। इसे तुम्हें अन्यथा नहीं लेना चाहिए। तुम्हारी हालत अब भी कार-यात्रा के लायक नहीं है। इसलिए मेरी बात मानो !" मुत्तुकुमरन् के आग्रह करने पर गोपाल मान गया।

उदयरेखा के प्रति अब्दुल्ला का मोह अभी उतरा नहीं था और उतरने का नाम भी नहीं लेता था। अतः वे तीनों 'मलेशियन एयरवेज़' के हवाई जहाज़ पर सिंगापुर को रवाना हुए। मुत्तुकुमरन् सहित बाक़ी सब लोग कार द्वारा जोगूर के रास्ते सिंगापुर के लिए रवाना हुए। रुद्रपति रेड्डियार ने उनके लिए दोपहर का भोजन टिफ़िनदानों में भिजवा दिया था। रास्ते में एक जंगली नाले के किनारे कारें खड़ी कर सबने दोपहर का भोजन किया। सफ़र बड़े मज़े का रहा। जोगूर का पुल पार करते हुए शाम के साढ़े छः बज गये। शाम के झुटपुटे में सिंगापुर नगर बड़ा रमणीक लग रहा था। सर्द मौसम और अँधेरे के डर से कोई अनिन्द्य सुन्दरी लुक-छिपकर चहलक़दमी करे तो कैसा रहे ? सिंगापुर नगर उस समय ऐसी ही स्थिति उत्पन्न कर रहा था। उनकी कारों के, पुक्किट डिमा रोड पार कर, पेनकुलिन सड़क पर स्थित एक होटल में पहुँचते-पहुँचते गाढ़ा अँधेरा हो चला था। जहाँ देखो, आसमान से बातें करनेवाली बहुमंज़िली इमारतें क़तारों में खड़ी थी, जो गत्ते के बने हुए मॉडलों से लगीं। सिंगापुर क्वालालम्पुर से भी ज़्यादा चुस्त और गतिशील लगा। कारें सड़कों पर चींटी की तरह रेंग रही थीं। पीले रंग से पुती छतवाली टैक्सियाँ बड़ी तेज़ गति से बढ़ रही थीं। रात के भोजन के लिए सभी चिरंगून रोड स्थित 'कोमल विलास' नामक शाकाहारी भोजनालय को गये।

इस बार गोपाल भी उनके साथ ठहर गया। उदयरेखा और अब्दुल्ला कांटिनेंटल होटल में ठहरे। सिंगापुर के नाटकों में गोपाल ने ही भूमिका की। सिंगापुर के

नाटकों में भी काफ़ी अच्छी वसूली रही। एकाएक बारिश हो जाने से अंतिम दो दिन वसूली कुछ कम रही। अब्दुल्ला के ही शब्दों में वैसे कोई नुक़सान नहीं उठाना पड़ा।

सिंगापुर में भी वे लोग कुछ जगहों में घूम आये। जैसे जुरोंग औद्योगिक बस्ती, टाइगर बाम गार्डन्स, क्वीन्स टाउन की ऊँची इमारतें वगैरह। 'टाइगर बाम' बगीचे में, चीनी पुराणों के आधार पर पत्थर-चूने से बनी आकृतियों में बहुत भयंकर दृश्य चित्रित किये गये थे। उनमें यह दर्शाया गया था कि संसार में पाप करनेवाले कैसे-कैसे दंड भोगते हैं? किसी पापी को नरक में आरे से चीरा जा रहा था। किसी के सिर में लोहे की कीलें ठोंकी जा रही थीं। किसी को आग की लपटों में नंगे शरीर झोंका जा रहा था। देखनेवालों में दहशत-सी फैल जाती। मुत्तुकुमरन् ने हँसते हुए कहा, "मद्रास में रहनेवाले सभी सिने-कलाकारों को बुला लाकर इन दृश्यों को बार-बार दिखाना चाहिए माधवी!"

"कोई ज़रूरत नहीं।"

"क्यों? ऐसा क्यों कहती हो?"

"इसलिए कि ऐसी करतूतें वहाँ प्रतिदिन होती ही रहती हैं।"

यह सुनकर मुत्तुकुमरन् ठहाका मारकर हँसा। माधवी भी उसकी हँसी में शामिल हुई। मद्रास रवाना होने के दिन सवेरे ही वे 'शॉपिंग' को चले। कपड़े की दूकान में जाने पर मुत्तुकुमरन् ने कहा, "मुझे भी एक साड़ी खरीदनी है! तुम्हारी मुँह-दिखाई के अवसर पर देने के लिए।"

माधवी का चेहरा लज्जा से लाल हो गया।

शाम को सिंगापुर में भी एक विदाई-पार्टी का आयोजन किया गया था। उससे निपटकर, अपनी नाटक-मंडली के जहाज़ द्वारा लौटने की व्यवस्था का भार अब्दुल्ला को सौंपकर गोपाल, मुत्तुकुमरन् और माधवी हवाई जहाज़ पर सवार होने के लिए हवाई अड्डे को रवाना हुए। मद्रास जानेवाला एयर इंडिया का हवाई जहाज़ आस्ट्रेलिया होता हुआ सिंगापुर आता था और सिंगापुर से मद्रास को रवाना होता था। उस रात को आस्ट्रेलिया से ही वह देर से रवाना हुआ। अब्दुल्ला, नाटक-मंडली के सदस्य और सिंगापुर के कला-रसिक देर-अबेर का ख़्याल किये बिना विदा करने के लिए हवाई अड्डे पर आये हुए थे।

हवाई जहाज़ के सिंगापुर से रवाना होते समय ही बड़ी देर हो गयी थी। अतः मद्रास पहुँचते-पहुँचते रात के साढ़े बारह बज गये थे। कस्टम्स फार्मेलिटी से निवृत्त होकर बाहर आने तक एक बज गया था। उस वक़्त भी गोपाल और माधवी का स्वागत करने के लिए बहुत-से लोग फूल-मालाओं के साथ आये थे। उसमें लगभग आधा घंटा लग गया।

गोपाल के बँगले से कारें आयी हुई थीं। एक कार में तो सिर्फ़ सामान-ही-सामान भर गया। दूसरी कार में वे तीनों वहाँ से चले। घर आते-आते दो बज गये थे।

"इतनी रात गये अभी घर कैसे जाओगी भला ! रात को यहीं सोकर सवेरे चली जाना !" गोपाल माधवी से बोला। लेकिन वह हिचकिचायी।

"तुम बहुत बदल गयी हो। पहले जैसी नहीं रही।" माधवी को हिचकते देखकर गोपाल ने हँसते हुए फिर कहा।

माधवी ने कोई जवाब नहीं दिया। गोपाल हँसता हुआ अन्दर चला गया।

"वह क्यों हँस रहा है ?" मुत्तुकुमरन् ने माधवी से पूछा।

"उनकी निगाह में मैं बदल गयी न ? इसलिए !"

"तुम घर जाओगी या यहीं ठहरोगी ? देर तो बहुत हो गयी !"

"मैं ठहर सकती हूँ। अगर आप अपने 'आउट हाउस' में किसी कोने में मुझे ठहरने की थोड़ी-सी जगह दें तो ! इस बंगले में और किसी दूसरी जगह मैं नहीं ठहर सकती। यह एक भूत-बंगला है। कल सिंगापुर में आपने नरक की यातनाएँ दिखायी थीं न ! उन्हें फिर याद कीजिये तो बात समझ में आये।"

"आउट हाउस में तो एक ही खाट है ! फ़र्श तो बडी ठंडी होगी।"

"परवाह नहीं ! आप अपने चरण में शरण देकर नीचे—निरी फ़र्श पर भी जगह दें तो वही बहुत है !"

वह हामी भरकर बढ़ा तो वह उसके पीछे-पीछे चलती आयी।

उनके सिंगापुर से लौटने की बात का पहले ही पता हो जाने से नायर छोकरे ने 'आउट हाउस' को झाड़-पोंछकर साफ़ कर दिया था। मटके में ताज़ा पानी भरकर रखा था। गद्दे-तकिये के गिलाफ़ बदलकर बिछौने ठीक-ठाक सहेज रखा था।

उनके साथ आये हुए माधवी और मुत्तुकुमरन् के अलग-अलग सूट-केसों को ड्राइवर पहले ही 'आउट हाउस' के द्वार पर छोड़ गया था। दोनों ने उन्हें उठाकर अंदर रखा।

चाहे गोपाल कुछ भी सोच ले, माधवी ने निश्चय कर लिया था कि वह आज मुत्तुकुमरन के साथ 'आउट हाउस' में रहेगी।

मुत्तुकुमरन् ने बिछावन और तकिया निकालकर माधवी को दिया और स्वयं खाट के निरे गद्दे पर लेट गया।

माधवी वह बिछावन नीचे बिछाकर लेट गयी।

"देखिये, यहाँ तो एक ही तकिया है। मुझे तकिये की जरूरत नहीं। आप लीजिए"—माधवी थोड़ी देर बाद यह कहते हुए उठी और तकिया मुत्तुकुमरन् को देने आगे बढ़ी। मुत्तुकुमरन् को तबतक हल्की-सी नींद आ लगी थी। उसी समय टेलीफ़ोन की घंटी भी बज उठी। माधवी सोचने लगी कि वह चोंगा उठाये कि नहीं ! मुत्तुकुमरन् बिस्तर पर उठ बैठा। उसने चोंगा उठाया तो दूसरे सिरे से गोपाल कुछ कह रहा था।

बीस

आवाज़ से लगा कि गोपाल ने खब पी हुई है।

"माधवी वहाँ है या घर चली गयी ?"—लड़खड़ाते स्वर में गोपाल ने पूछा। उसके सवाल का, बिना जवाब दिये, मुत्तुकुमरन् ने चोंगा माधवी के कानो में लगाया। वही प्रश्न वैसे ही स्वर में दुबारा उसके कानो में भी पड़ा। मुत्तुकुमरन् ने उसके चेहरे पर उग आए भावों को पढ़ने का प्रयत्न किया कि उसके मन में वह पुराना भय अब भी घर किये हुए है या नहीं ? उसने आँखें गड़ाकर देखते हुए पूछा, "क्या जवाब दूँ ? पहले भी जब हम दोनों समुद्र तट पर घूमने गये थे, तब तुमने कहा था कि इन बातों का उन्हें पता न होने पाए ! उस समय तुम्हें गोपाल का डर था। क्या अब भी वह डर तुममें है या···"

"बात-बात पर पुराने ज़ख़्मों को कुरेदना छोड़िये। आज मैं किसी से किसी भी बात के लिए नहीं डरती। आप इन्हें जो भी जवाब देना चाहें, दीजिये ! मुझसे न पूछिये।"

उसकी आवाज में जो निश्चय-भरा धैर्य था, वह इसे पहचान गया।

फ़ोन पर लगातार गोपाल उसी एक सवाल को रटे जा रहा था, मानो कोई मंत्र-जाप कर रहा हो। मुत्तुकुमरन् ने साफ़ और गंभीर स्वर में कहा, "हाँ ! यहीं है !"

दूसरे छोर से झट से चोंगा नीचे पटकने की ध्वनि आयी।

"इसीलिए मैंने यह कहा था कि आप जगह दें, तभी मैं यहाँ ठहर सकती हूँ।"

"जब दिल में ही जगह दे दी, तो यहाँ देने में क्या हर्ज है ? और वह भी तुमने पा ही लिया।"

सिंगापुर में शॉपिंग करते हुए माधवी ने कुछ इत्र खरीदा था। साज-सिंगार कर वह जब हवाई अड्डे के लिए चली थी, वही इत्र लगाकर चली थी। अँधेरे में किसी एक वनदेवी की भाँति सुरभि बिखेरती वह उसके सामने खड़ी हुई। मुत्तुकुमरन् ने टकटकी लगाकर उसे यों देखा, मानो अभी-अभी पहली बार देख रहा हो।

"लीजिए, तकिया !"

"नहीं ! मुझे बहुत मुलायम तकिया चाहिए !" मुत्तुकुमरन् ने उसका सुनहरा कंधा छूते हुए ढीठ हँसी हँसा।

"हे भगवान् ! मैं यह समझ रही थी कि इस घर में, कम-से-कम इस कमरे में मुझे सुरक्षा मिलेगी ! पर यहाँ की हालत तो और भी बुरी है !" उसने झूठा ग़ुस्सा

उतार फेंका तो उसके होंठ मुस्करा उठे ! चेहरे का वह निखार देखकर मुत्तुकुमरन् निहाल हो गया ।

"ज़मीन बड़ी ठंडी है । हठ पकड़ोगी तो कल नाहक़ को बुखार चढ़ आयेगा !"

"तो अब मैं क्या करूँ ?"

"बहुत दिनों से अभिनय करते-करते तुम भी ऊब गयी हो और मैं भी ! अब हमें नया जीवन जीना है ।"

मुत्तुकुमरन् ने उठकर उसके हाथ पकड़े । वह उसके हाथ की वीणा बनकर उसपर झुक पड़ी । उसकी लंबी-चौड़ी छाती और उभरे हुए कंधे, फूल जैसे माधवी के कर-कमलों के घेरे में नहीं आये । मुत्तुकुमरन् उसके कानों में बुदबुदाया, "क्यों, कुछ बोलती क्यों नहीं ?"

दुनिया की पहली औरत की भाँति उसके आगे उसकी आँखें लज्जा से अवनत हो गयीं ।

"बोलती क्यों नहीं ?"

माधवी ने लंबी साँस खींची । उसकी साँस-साँस प्रेम-लहरी बनकर उसके कानों में गूँज उठी ।

"संसारिक्कुम् पाडिल्ला ?" उसने अपनी मलयालम भाषा का ज्ञान प्रदर्शित किया तो वह अपनी हँसी नहीं रोक सकी । फूल जैसे उसके हाथ, उसके कंधे सहला रहे थे । दोनों के बीच फैला मौन मानो संतोष की सीमा छू रहा हो ।

उन कंधों पर सर रखकर माधवी उस रात सुख और सुरक्षा की नींद सो पायी ।

बड़े तड़के उठकर उसने वहीं स्नान किया । नयी साड़ी पहनकर वह मुत्तुकुमरन् के सामने आयी तो मुत्तुकुमरन् को लगा कि ऊषा-सुन्दरी हँसती हुई उसके सामने प्रकट हो रही हो ।

उसी समय गोपाल 'नाइट गाउन' में वहाँ पर आया । माधवी पर उसकी दृष्टि गयी तो उसकी आँखों में घृणा का भाव तिर गया । उससे वह बोल नहीं पाया । उसे भी यह समझते देर नहीं लगी कि वह उसपर बहुत नाराज़ है । सहसा गोपाल मुत्तुकुमरन् से व्यापारिक ढंग की बातें करने लगा—

"तुमने मेरे बदले क्वालालम्पुर में आठ नाटक और मलाका में तीन नाटक—कुल मिलाकर ग्यारह नाटक खेले हैं ।"

"हाँ, खेले हैं । तो क्या···?"

"बात यह है कि···पैसे को लेकर भाई-भाई में भी झगड़ा हो जाता है !"

"हो सकता है कि हो ! पर गोपाल, आज तुम्हें अचानक हो क्या गया ?"

"ग्यारह बार नाटक खेलने के लिए पंद्रह हज़ार रुपये और नाटक लिखने के लिए पाँच हज़ार रुपये—कुल मिलाकर बीस हज़ार रुपयों का एक चेक कल ही रात

साइन कर रखा है। यह लो।"

मुत्तुकुमरन् पहले ज़रा झिझका। फिर मन-ही-मन कुछ सोचकर, बिना कुछ आपत्ति उठाये, गोपाल के हाथ से अचानक वह चेक ले लिया। दूसरे क्षण मुत्तुकुमरन् के मुँह से जो सवाल निकला, गोपाल ने उसकी आशा ही नहीं की थी।

"माधवी का क्या हिसाब है? उसे भी अभी देखकर साफ़ कर दोगे?"

"उसका हिसाब पूछनेवाले तुम कौन होते हो?" गोपाल के मुँह से ऐसे प्रश्न की आशा मुत्तुकुमरन् ने की ही कहाँ थी?

"मैं कौन होता हूँ? मैं ही आज से उसका सब कुछ हूँ। अगले शुक्रवार को गुरुवायूर में मेरा और उसका विवाह है। अब वह तुम्हारे साथ अभिनय भी नहीं करेगी।"

"यह बात तो उसी को मुझसे कहना चाहिए, तुमको नहीं।"

"वह तुम्हारे साथ बात तक नहीं करना चाहती। इसीलिए मैं कह रहा हूँ।"

"मैंने तुम्हें अपना गहरा दोस्त समझकर इस घर में घुसने दिया।"

"मैंने इस दोस्ती के साथ कोई विश्वासघात नहीं किया।"

"अच्छा, तो फिर ऐसी बातें क्यों? एक म्यान में दो तलवारें नहीं समा सकतीं। पाँच मिनट ठहरो! माधवी का भी हिसाब साफ़ किये देता हूँ।" कहकर गोपाल ने वहीं से पर्सनल सेक्रेटरी को फ़ोन किया। दस मिनट में वह एक 'चेक लीफ़' के साथ आया। गोपाल ने माधवी के नाम बीस हज़ार रुपये का एक चेक लिखकर दिया।

"पैसे तो तुमने दे दिये गोपाल! पैसे ज़रूर दे दिये। लेकिन एक बात याद रखना कि कभी-कभी मनुष्य की मदद रुपयों से आँकी नहीं जा सकती। इन पैसों को तुम्हारे मुँह पर दे मारने के बदले, इन्हें लेने का एक कारण भी है। आज इस दुनिया में रुपयों-पैसों से बढ़कर जो मान-मर्यादा है, उनकी रक्षा के लिए भी पाप में पगे इन रुपयों की बड़ी ज़रूरत पड़ती है। इसी वजह से इन रुपयों का हिसाब करके इन पर अपना हक़ जताकर ले रहा हूँ।"

गोपाल उसकी बातों पर कान न देकर वहाँ से चल दिया। मुत्तुकुमरन् ने अपना बोरिया-बिस्तर बाँधकर रख लिया। माधवी ने भी उसके काम में उसका हाथ बँटाया। दस-पन्द्रह मिनट में 'आउट हाउस' ख़ाली करके उन्होंने सभी सामान बरामदे पर लाकर रख दिये।

माधवी बोली, "झगड़ा तो मेरे कारण हुआ। मुझे रात को ही घर चला जाना चाहिए था।"

"फिर तुम्हारी बातों में भय सिर उठाता-सा मालूम होता है, माधवी! ऐसा, एक झगड़ा होने के कारण ही तो मैं खुश हो रहा हूँ। लेकिन तुम, ठीक इसके उल्टे नाहक़ चिन्ता करने लग गयी हो। तुम समझती हो कि आगे भी हम इसके साथ

रह सकते हैं ? यों अभिनय करते रहें तो अक़्ल निश्चय ही मारी जायेगी । हमें जीना भी है । बिना जीवन जिये, कोई हमेशा अभिनय करता रहे तो कला कला नहीं रहेगी और उससे अच्छी कला नहीं पनपेगी । गोपाल को अपना जीवन सुधारना है और उसे नियम से जीना है तो उसे विवाह करके नियमबद्ध जीवन जीने का अभ्यास करना चाहिए । नहीं तो वह सिर्फ़ बुरा ही नहीं, बरबाद भी हो जायेगा । इसी बँगले को ही लो, यह भूत-बँगला बना हुआ है । द्वार पर चौक पूरने के लिए इस घर में कोई सुमंगला स्त्री नहीं । नौकर-चाकर, बाग़-बगीचे, गाड़ी-वाड़ी, रुपये-पैसे सब कुछ हैं भी तो उनका क्या फ़ायदा ? एक बच्चे की तोतली बोली भी अब तक इस बँगले में सुनायी नहीं पड़ी । लक्ष्मी भला ऐसी जगह में निवास करेगी ?"

माधवी यों मौन रही, मानो उसकी सारी बातों में हामी भर रही हो । 'आउट हाउस' के द्वार पर खड़े होकर दोनों बातें कर रहे थे कि छोकरा नायर वहाँ पर आया । माधवी ने उसे एक टैक्सी लाने के लिए भेजा । टैक्सी आयी । लड़का माधवी से अकेले में कुछ बोल रहा था । उसकी आँखें छलक रही थीं ।

"आपके पास पाँच रुपये हैं तो दीजिये !" कहकर माधवी ने मुत्तुकुमरन् से पाँच रुपये लिये और उस लड़के के हाथ में रख दिया । लड़के ने हाथ जोड़े । उसकी आँखें फिर भर आयी थीं ।

"अगले हफ्ते पिनांग से जहाज़ के आ जाने पर उदयरेखा इसी आउट हाउस में आकर ठहरनेवाली है । गोपाल के मुख से लड़के ने यह बात सुनी है ।"—माधवी ने बताया ।

"सो तो ठीक है । अब्दुल्ला उसे पिनांग से आने दे तब न ?"

सुनकर माधवी को हँसी आयी ।

"छोड़ो ये भद्दी बातें । अच्छी बातें करो ।" मुत्तुकुमरन् ने कहा ।

दोनों टैक्सी पर बैठे । लड़का मुत्तुकुमरन् और माधवी के सामान टैक्सी पर रखकर एक ओर खड़ा हुआ । मुत्तुकुमरन् ने माधवी से पूछा, "कहाँ चलें ? तुम्हें अपने घर में छोड़कर मैं एग्मोर लाज चला जाऊँ ?"

"हैं, बड़े बनते हैं । लॉज जाते लाज नहीं आती ? मैं तो मान भी लूँ, लेकिन आपकी सास नहीं मानेगी । बिना ज़िद पकड़े सीधे हमारे घर आइये ।"

माधवी की ये बातें उसे बहुत पसन्द आयीं ।

टैक्सी बढ़ी । टैक्सीवाले को लाइडस रोड जाने को कहकर माधवी मुत्तुकुमरन् की ओर मुड़ी । मुत्तुकुमरन् ने उससे पूछा, "और एक बात तुमसे पूछूँ ?"

"पूछिये ।"

"घर में कितनी चारपाइयाँ हैं ?"

"क्यों, दो हैं ।"

"नहीं होनी चाहिए ।"

"यह भी कैसी गुस्ताख़ी है !" होंठों पर उँगलियाँ रखकर उसने उसे डाँटने का अभिनय किया तो मुत्तुकुमरन् उसपर ऐसा रीझ गया कि उसकी हर बात में, हर हाव-भाव में अनेकों गूढ़ार्थ टपकते-से मालूम हुए। अभिधा, लक्षणा, व्यंजना, रस, छंद एवं अलंकारों से गुम्फित कविता-सी माधवी उसकी कल्पना की आँखों में उभर आयी। उसने दोनों होंठों पर उँगलियाँ रखकर डाँटने का जो अभिनय किया था; उससे उसके सत्य, शिव, सुन्दर स्वरूप को कविता में चित्र-रूप देने की इच्छा मुत्तुकुमरन् के मन में उमग रही थी। पर तब तक टैक्सी माधवी के घर के द्वार पर जा खड़ी हुई थी। माधवी की माँ ने उनका सहर्ष स्वागत किया।

टैक्सी का भाड़ा चुकाते हुए मुत्तुकुमरन् से टैक्सीवाले ने पूछा, "इन्होंने फ़िल्मों में काम किया है न ?"

"हाँ, किया है। पर आगे नहीं करेंगी।" मुत्तुकुमरन् ने निर्मम उत्तर दिया।

माधवी पहले ही उतरकर घर के अंदर चली गयी थी। अंदर जाते ही मुत्तुकुमरन् ने पहला काम यह किया कि माधवी से टैक्सीवाले के प्रश्न और अपने उत्तर को ज्यों-का-त्यों दुहराया।

सुनकर माधवी हँसी और बोली, "वह टैक्सी ड्राइवर आप पर ज़हर उगलते हुए कह गया होगा कि आपकी वजह से सिने-दुनिया को बड़ा नुकसान पहुँच गया !"

"ऐसा कभी नहीं होगा। नुकसान भरने के लिए न जाने कितनी उदयरेखायें आ धमकेंगी !"

माधवी एक बार फिर हँस पड़ी।

अगले शुक्रवार को गुरुवायूर के श्रीकृष्ण के मन्दिर में मुत्तुकुमरन् और माधवी का शुभ-विवाह सम्पन्न हुआ। न किसी रसिक के पास से बधाई का पत्र आया और न कोई प्रसिद्ध फ़िल्म-निर्माता उस विवाह को सुशोभित करने को पधारा। विवाह के उपरांत उनसे प्रणाम लेने के लिए सिर्फ़ माधवी की माँ उपस्थित थी।

उस दिन रात को वे एक टैक्सी करके मावेली करै पहुँचे। मावेली करै माधवी की जन्म-स्थली थी। फिर भी वहाँ उसके लिए कोई घर-द्वार नहीं था। वे किसी रिश्तेदार के यहाँ उस रात को ठहरे। रात के भोजन के बाद माधवी और मुत्तुकुमरन् के एकांत के लिए एक कमरा मिला तो माधवी बोली, "देखा, सभी ने मिलकर साज़िश करके इस कमरे में एक ही खाट छोड़ी है।"

वह हँसा। माधवी उसके निकट गयी। उसके केश-भार में बेले के फूल गमा-गम महक रहे थे। मुत्तुकुमरन् ने उसे पास खींचकर बिठाया और उसका सिर ऐसा चूमा कि बेले की महक से उसकी नासिका भर गयी।

"माधवी ! न जाने कितनी सदियाँ पहले इस बात का निर्णय हो चुका है कि

किसी औरत को समाज की लम्बी सड़कों पर निडर और निस्संकोच होकर चलना है तो ऐसी एक सुरक्षित खाट से उतरकर ही वह चल सकती है। समाज की सड़कों में आज भी कई रावण निरन्तर विचरण कर रहे हैं।"

"आप अब्दुल्ला की बात कर रहे हैं ?"

"अब्दुल्ला, गोपाल—सभी की। एक से दूसरा, दूसरे से तीसरा होड़ लगाकर अभिनय कर रहा है।"

वह बिना कोई उत्तर दिये, उसके हृदय से लिपट गयी। उसी हृदय ने उसे ऐसा सुख दिया कि आज वह अपनी निजी खाट पर सुख की नींद ले रही हो।

मर्दों के समाज में, जब पहले रावण का जन्म हुआ, तभी इस बात का पक्का निश्चय हो गया था कि औरतों को सोने के लिए एक ऐसी ही खाट और एक ऐसे ही साथी की ज़रूरत है।

जब तक रावणों का गुट समाज में विद्यमान है, तब तक नारी समाज धूल-धूसरित गंदी गलियों में, बिना साथी के, अकेले जा कैसे सकता है ? कौन जाने, समाज की वह गंदी गली कब साफ़-सुथरी होगी ?

'यह गली बिकाऊ नहीं' मद्रास के व्यावसायिक रंग जगत् और फिल्मोद्योग में कला के नाम पर की जाने वाली झूठी साधना और ऐसे तथाकथित कलाकारों के खोखले मूल्यों का पर्दाफ़ाश करती है।

इस अभियान में पारम्परिक रंग कला का समर्पित और स्वाभिमानी युवा कलाकार मुत्तुकुमरन् सबसे आगे है और वह ऐसे सारे प्रलोभनों को ठुकराकर, कला की तमाम शर्तों को सामाजिकता, मानवता और नैतिकता की कसौटी पर कसकर ही नया समाज गढ़ना चाहता है। समाज के वर्तमान घिनौने स्वरूप के लिए ज़िम्मेदार लोगों से उसकी लड़ाई शुरू होती है। सिने जगत् के एक सुप्रसिद्ध 'स्टार' गोपाल के मुक़ाबिले कला-सृजन और रंग प्रस्तुति के हर क्षेत्र में, प्रतिकूल परिस्थितियों के बावजूद वह अडिग खड़ा रहता है। मुत्तुकुमरन् समाज सेवा और कला-साधना के नाम पर कला को गन्दी गलियों में बेचने वालों से जमकर लोहा लेता है। अनन्य समर्पण और सर्जक की निष्ठा के अतिरिक्त उसके पास कुछ भी नहीं। यही शक्ति उसे समाज और कला के व्यापक और वृहत्तर संदर्भों तथा मूल्यों से जोड़ती है।

चरम उद्योग के रूप में स्थापित फ़िल्म जगत् के फ़िल्मकारों की जगमगाती दुनिया और चमचमाती राहों और कारों की गड्डमड्ड में सच्चे कलाकार भी भटक गए हैं। ऊंचे विचारवान और प्रौढ़ कला साधकों की अनुपस्थिति में सारे रंग जगत् में ऐसी सौदेबाज़ी और मक्कारी भरी लूट चल रही है कि जी घुटता है। यहाँ सब कुछ सिक्कों से खरीदा जा रहा है। कला के आधारभूत मूल्यों की चर्चा करते हुए यह आशंका व्यर्थ नहीं है कि समाज में सच्चे कला साधकों के हितों की रक्षा नहीं हो पा रही है।

मूलतः तमिल में लिखित इस उपन्यास की वृहत पृष्ठभूमि में मद्रास महानगर ही नहीं, सुदूर दक्षिण पूर्वी प्रायद्वीप के देशों—सिंगापुर, मलेशिया एवं अन्यान्य द्वीप-पुंज का सौंदर्य भी बड़ी प्रामाणिकता से चित्रित है।

साहित्य अकादेमी द्वारा पुरस्कृत एवं चर्चित कथा-कृति 'समुदाय वीथि' का श्री रा. वीलिनाथन द्वारा सर्वथा प्रामाणिक और रोचक अनुवाद।

बीस रुपये

आवरण : रणजीत साहा